सत्य

अथ
कमालबोध प्रारम्भः ।

भारतपथिक कबीरपंथी-
स्वामी श्रीयुगलानन्दद्वारा संग्रहीत-
उसको

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदासने
अपने "**लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर**" छापेखानेमें
छापकर प्रसिद्ध किया ।

संवत् १९८३, शके १८४८.

कल्याण-मुंबई.

सत्यसुकृत, आदिअदली, अजर, अचिन्त, पुरुष, मुनीन्द्र, करुणामय, कबीर, सुरति, योग, संतायन, धनीधर्मदास, चुरामणिनाम, सुदर्शन, नाम, कुलपति नाम, प्रमोध गुरुबालापीर, केवल नाम, अमोल नाम, सुरतिसनेही नाम, हक्क नाम, पाकनाम, प्रगटे नाम, धीरज नाम, उग्र, नाम, कदयानकी, दया वंश-ब्यालीसकी दया ।

अथ श्रीबोधसागरे

एकत्रिंशतिस्तरंगः ।

अथ कमालबोध प्रारम्भः ।

चौपाई ।

शाह सिकन्दर दिल्ली सुलताना । बैठे तख्त करे रजधाना ॥
बहुतेक दिवस आनन्दमें गयऊ । एते कायाको बेदन भयऊ ॥
देह अग्नि उठी अधिकाई । रैन दिवस शाहा सुधिनाहीं ॥
बहुतेक इलम कियो सुलताना । फेर औलिया सिद्ध मुलाना ॥
कोई विधिजलन दूर नहिं जाई । दिनादिन उठी चले अधिकाई ॥

शाहसिकन्दर प्रतिज्ञा ।

दोहा-दीन दुनीका मैं धनी, मेरा जाय प्रान ।
मेरा बेदन जो हरै, मनबांछित पावेदान ॥

ऐसा कोइ औलिया नाहीं । मेरे तनकी तपन बुझाहीं ॥

वजीर वचन ।

कहे वजीर सुनो सुलताना । काशीमें एक फकीर सयाना ॥
वहां एक हिंदू फकीर रहाई । चौदहसौ बरस जिन उमरधराई॥
सब हिन्दू कदमों पै जाहीं । सब हिन्दूके पीर कहाहीं ॥
उनको चर्णारविंद धरो तुम जाई। दर्शन करतजलन मिट जायी ॥
रामानन्द कहैं सुनी बडाई । शाह सवारी काशी आई ॥

दोहा-आय दुनीके बादशाह, सब संगहि दललाय ।
जलन मिटनके कारने, कदमों पहुँचे जाय ॥

चौपाई ।

भयो प्रभात जलन अधिकाया । जब रामानंद कहै दर्शन धाया ॥
शाह सिकन्दर दर्शन आये । सबही अमीर सङ्ग चलि धाये ॥
आये मण्डप आप सुलताना । रामानंददिल रहै खिसियाना ॥
शाहको अग्नि उठी अधिकाई । भये विकल सही न जाई ॥
त्राहि त्राहि तब कीन पुकारा । रामानन्द तब मुख फेरि सिधारा॥
देखि दशा भयी अति क्रोधा । कहै वजीर सुनो सब योधा ॥
देखो इस काफिरकी गुमराही । चढत क्रोध मोंहिरह्यो न जाही ॥
दीन दुनीके शाह सुलताना । जिनको नमै सकल जहाना ॥
सो काफिरके कदमो आवे । देखत तेहि काफिर मुँह फिरावे ॥
ऐसो काल चढ्यो बलवंडा । नफरके घटमें भयो परचन्डा ॥
ऐसो तेग चलायो जायी । काट्यो शिरधड दूर गिरायी ॥
तेहिं अवसर अचरज असभयऊ । देखत दुनी अचम्भो ठयऊ ॥

कटे अङ्गसों धार बहायी। आधा रक्त अरु दूध चलायी ॥
शाह सिकंदर अन्देशा माने। भेद न जाने मनमांहि तवाने ॥
स्वामी कतन चलत दुइ धारी। हाहाकरे तब दुनिया सारी ॥

दोहा—गुरुरामानन्दहिं मारिया, काशी नगर मँझार ॥
शाहक बेदनबहु बढ्यो, त्रास भयी संसार ॥

यकतो वेदनको दुख भारी। दुसरे अचरज परी अगारी ॥
कहैं सिकन्दर मन अकुलायी। ऐसा कोई औलिया नाहीं ॥
हमरे तनको तपन बुझावे। बहुरी अचरजको भेद बतावे ॥
सबही कहैं सुनो सुलताना। इनका शिष्य यक अहै सयाना ॥
मरल गौ कई बार जियाया। बहुतक अचरज तिनदिखलाया ॥
रामानन्दहुते अधिक बडाई। सत्यकबीर कहैं सब ताई ॥
तिनको दरशन करिये शाहा। सो पुनिकहिहै अचरजकोराहा ॥
सुनत बचन सिकंदर भाई। कीन दर्शन कबीर पहँ जाई ॥
शाह सिकंदर दर्शन आये। मिटिगयी तपनसबदुःखमिटाये ॥
जबहीं शाह कियो दीदारा। मिटिगयी तपन अग्निकी झारा ॥
कहै शाह तुम सच्चे साईं। तुमरे दरश तपन बुझाई ॥

दोहा—जबही तपन बुझायउ, सतगुरु दीनदयाल।
भइ प्रतीत तब शाहको, भयो शिष्य तेहि बाल ॥

चौपाई।

भय मुरीद जुलहाके आयी। तबहा-जुलकरन-नाम धराई ॥
ज्ञान ध्यान चरचा बहु कीन्हा। शाहसिकंदरशरण जब लीन्हा ॥

---

१ इस शब्दके ऊपर बहुत विचार किया, किन्तु शुद्ध शब्दका पता नहीं लगा। 'जुलकरन' नतो फारसी या अरबी शब्द है न संस्कृत या हिन्दी। कमालबोधकी एकही प्रति मेरे पास है जो सम्वत् १९११ का लिखा हुआ है। विशेषता यह है कि, यह पुस्तक खास पं० श्री पाक नाम साहबके समयमें उन्हीके हजूरमें रहनेवाले एक संतकी लिखी हुई है तथापि इसमें इतनी अशुद्धियां हैं कि एक २ चौपाईको पढनेमें दो दो मिनट लग जाता है तथापि हजारों सन्देह सहित कापी लिखी जाती है।

सतहत्तरलाख सो बीरा लीन्हा । सबहीं जीव अमर करि दीन्हा ॥
सतहत्तरलाखजिवलोकसिधाने । अपने औगुन सब गये हिराने ॥
तब सिकंदर यक विनती लावा । मिहर गुरु करि ताहि लखावा ॥
अहो साहिब मोहिं ग्रन्थलखाई । बाचे ग्रन्थ दिल समझाई ॥
तब सद्गुरु हुकुम अस कीना । जसमांग्यो शाह तसतेहि दीना ॥
नवी सिन्दको लेहु बुलायी । कागजकलमसबसाथलिवायी ॥
शाह सिकंदर तुरत बुलाये । सवालाख सो तेही बेर आये ॥
सवालाख देह बीर तब कीना । सोउ सिकन्दर सब सुधिलीना ॥
तनमनधन जब अर्पण कीना । शिरके साट साहब चीन्हा ॥
फिरे शाह जब दिल्ली आये । काजीमुल्ला सब सुनि पाये ॥
शेष तकी रहे उनकर पीरा । सब मिलि गये उनके तीरा ॥
सब मिल कहैं सुनो मम पीरा । शाहसिकन्दर कस भये अधीरा ॥
काशी माहिं गये जब शाहा । कबीरहिं कीन गुरू नरनाहा ॥
सुनत तकी बहुते रिसियाना । कातुम कहौ अस बातबिराना ॥
ऐसा कैसा ख्याल खिलायो । कैसे मोरा मुरीद फिरायो ॥
चलो जाइये शाह दरबारा । सब मिलि पूछैं ज्ञान बिचारा ॥
जुलहा मुरीद कस सो भयऊ । सो सब पूछैं तिसका भेऊ ॥
केहि कारण मुरीद सो हूआ । काजीमुल्ला सब कहैं मूआ ॥
सब मिलि आये भरे दरबारा । बैठे तख्तशाह सरदारा ॥
तिन कहँ आदर शाह भलदीन्हा । तिनपुनि प्रश्न पूछि सोलीन्हा ॥
कहो शाह तुम कहा मत पाये । कैसे अपना ईस्म फिराये ॥
काफिर कहै मुरीद कस तुमहूए । काजीमुल्ला सब कहैं मूए ॥
दीनके घर कहँ टोटा भाई । दीनका कर आदिसो आई ॥
सो तुम कैसे दियो मिटायी । चार बिहिस्त अल्लाहफरमाई ॥

इनकूँ तजि आगे कहँ जाओ । चार मुकाम लाहूत सोभाओ ॥
दीनइस्लाम असल दरसायो । सोतुमछोडिकहँ भटका खायो ॥
दीन दुनीके तुम सरदारा । कैसे मेट्यो दीन तुम्हारा ॥
खुदाके अहदी काजी कहावैं । दीन इसलामको राह बतावैं ॥
दीन इसलाम असल है भाई । और सबे जग कुफर चलाई ॥

सिकन्दर वचन ।

सुनत सिकन्दर उत्तर दीन्हा । सबको मन अचरजअसभीना ॥
भूले काजी भूले मुलाना । तिनहू भूले लाय फरमाना ॥
दीनका घर दूर है भाई । बिनजाने तुम असल ठहराई ॥
किसने बिहिस्त बैकुण्ठबनाया । दीनकाअसल किसनेफरमाया ॥

दोहा–काजी मुल्ला भूलिया, भरमें सकलजहान ।
मुहम्मद भूले संदेशसे, सोई लाये फरमान ॥

चौपाई ।

एते सतगुरु दिल्ली आये । शाहसिकन्दर बहुत सुखपाये ॥
जमना बिचहै महल मुबारक । बैठे पीर जहँ होइके फारक ॥
काजी मुल्लाको लिये बुलाये । शेखतकी तुरत चलि आये ॥

शेखतकी वचन ।

कहे तकी जुल्म तुम कीना । मुरीद हमार फिरायके लीन्हा ॥
काह कियो सुनो मति धीरा । जुलम किया तुम दास कबीरा ॥
कौन इलम शाहको दिखलायी । कौन सुधि तुम नाम सुनायी ॥

कबीर वचन ।

मियाँ हम इलम फकीरी बोलें । समरथनाम लिये जग डोलें ॥
हम दुर्वेश हैं दर्प दिवाना । सतकी चाल चलें जग जाना ॥

काजीमुल्ला वचन ।

निराकार जिन कुरान बखाना । नूर जोउतरयो सब जगजाना ॥

यही खुदाकी और निनारा। इसका हमको कहो विचारा ॥

कबीर वचन।

निराकार है खुदाका कीया। इनको तीन लोकसों दीया ॥
इनहीं रचे जो वेद कुराना। विहिस्तवैकुण्ठइनही जो ठाना ॥

दोहा–निराकार निर्गुन कहँ, रांचि रहे संसार।
वेद कुरान इन्हीं किये, साहिबनूर निनार ॥

काजीमुल्ला वचन।

ज्ञान कियेसे बनि नहिं आयी। अपनी अजमत देहु दिखायी ॥
अजमतसे हम सच करिमाने। नहिं तो करहू झूठ अभिमाने॥
दीनका घर सब झूठ परायी। तो पुनि इलमतुम्हार चलायी ॥
जो कबु इलम हमार चलायी। तो हम तुमको लेब मिलायी ॥

दोहा–हमारे दिल ऐसी लगी, फिराय सिकन्दर साय।
सखूम आदिका मेटिया, सबदिन दिये उठाय ॥
हमारे दिल ऐसी लगी, तुमकच्चा प्यालापिलाय।
कहे शेखतकी कबीरसे, फिराय सिकंदर साय ॥

कबीर वचन।

मियांजी आवे तो खावे सही, हम कोहिबसैं तन माहिं।
तुम खाये सकल जहानको, तौभी छक्के नाहिं ॥

एक मुर्दा यमुनामें आया। सो जुलकरनके नजर पराया ॥
देखहु यारो उसकी जिन्दगानी। कहा देखा इन जगमें आनी ॥
ओछी उमर यह कह पायी। सुरतशुभान कछु कहानजाई ॥
इसका जीवगया किहि ठायी। काजीमुल्ला कहो समझाई ॥
शेषतकीको आगम नाहीं। हमारे पुत्र कमानेको जाहीं ॥
दुर भोमको दीन प्याना। उलटा नाव यमुना बहराना ॥
डूबे जीव जो एक हजारा। मुरदा बहे जायँ असरारा ॥

देखो पीर किताब कुराना । हम करे तुमको सन्माना ॥
यहि मुर्दाको लेहु हँकराई । हम तब रहें तुव शरनाई ॥
जो यह मुर्दा आवे नाहीं । तब तुम कर सब झूठ बडाई ॥
सखुन तीन काजी हँकारा । मुरदा बहाजाय मझधारा ॥
दिखाओ कबीर इलम फकीरी । यहि मुरदाको लेहु हँकारी ॥

काजीमुल्ला वचन ।

हम सब धरे तुम्हारे पाईं । जो यह मुरदा लेहु बुलाई ॥
जो यह मुर्दा आवे नाहीं । तो तुम झूठे शाह भरमाई ॥
कुदरतकमालकाहि कबीरबुलावा । मुरदांदोरी समरथचरनसमावा ॥
काजीमुल्ला देखें ठाढे । मुर्दासे जिन्दा करि डारे ॥
सतगुरु अंक मिलाप जब कीना । इलम फकीरी उसको दीना ॥

दोहा—मुरदासों जिन्दा किया, दिलसों दीन मलाल ।
शाह परतीत दिखाइया, उत्पन दास कमाल ॥

चौपाई ।

शेख तकी हरषे मन माईं । लाय कमाली भेट चढाई ॥
दोऊ सुत अहै तुम्हारी शरना । तुमसे मिटे जरा औ मरना ॥
शेख तकी तब शीस नवावा । बेहद साहब सच हम पावा ॥

कबीर वचन ।

जाहु कमाल कोई मुल्क चेताओ । चौरासीस जीव मुक्ताओ ॥
चले कमाल तब शीस नवाई । अहमदाबाद तब पहुँचे आई ॥
दरियाखान पठानहिं नामा । तहाँ जाय पुनि कीन्ह मुकामा ॥
साठ मुरीद किये तेहि ठाईं । अधिक प्रीति पठान जनाई ॥
तन मनसे बहु सेवा कीना । इलम फकीरी उसको दीना ॥

कमाल वचन ।

सुनो दरियाखान सखुन हमारा । इलमफकीरी सदा बडभारा ॥

जो तुम चाल चलौ भरपूरी । तब तुम पहुँचो पुरुष हुजुरी ॥
कबहूँ तुम जो चूको चेला । शिकस्त करे तब तुमको काला ॥
जो तुम चेला चूक करो जाई । तब तुम परिहो चौरासीमाई ॥
इतनी सिखावन उसको दीया । दिन सोलह उसके घर रहिया ॥

दोहा—इल्म फकीरी अलमस्ता दिवाना, कीना एक उपाय ॥
एक पांव बांधै वेदको, दूजे किताब बँधाय ॥

चौपाई ।

वेद किताब जो बडयारा । चले जातहैं नगर मँझारा ॥
मध्य चौकमें खडे भय जाई । प्रानी बहुत तमाशे आई ॥
बायां पाँव हिन्दू दिखलावे । बाँचे वेद वैकुण्ठ सो पावे ॥
दहिना पाँव दीन दिखलावे । पढे कुरान बिहिश्त को जावे ॥
वेद किताब दोऊ बड भारी । त्राहि २ भयी दुनियाँ सारी ॥
दोनों दीन पावँ तले दीना । ऐसा है कोई अलमस्तनबीना ॥
चले सकल पुनि दिया पुकारी । जाय खडे भय शाह दरबारी ॥

दोहा—तुमहो अहमद शाहडा, अचरज देखो आय ॥
वेद किताब पावों तले, दोऊ दीन मिटाय ॥

चौपाई ।

कोपे अहमद आप सुलताना । जडो जँजीर फकीर दिवाना ॥
जडोजँजीर मुहकमकर ऐसी । ऊपर रहो मुवाकिल दशबीसी ॥
रहे न सयानी भये बियाना । बाहर चौकमें खडा दिवाना ॥
सोई जोडा फिर दिखलावे । दोनों दीनको फिर समुझावे ॥
फिरि जाय सब कीन पुकारा । है जिन्दा खडा चौक निधारा ॥
कहे शाह मुवकिलसे तबही । कैसे गया जिन्दा पुनि जबही ॥

मुवकिल वचन ।

कहे मुवकिल सुनु सुलताना । ऐसी अजमत हम नहिं जाना ॥

सात बेर जो जडे जँजीरा। बाहर चौकमें खडा फकीरा ॥

अहमदशाह वचन।

अबकी लाय जमींमें गाढो। पांच २ ईंटा सब मिलि मारो ॥
जो कोई दया करे उसपर जाई। उसके घरको देहु जलाई ॥

दोहा-लहे लागि कमालको, ऊपर ईंटा अपार।
तन मनकी कछु सुधि नहीं, इल्म फकीरी सार ॥

चौपाई।

दरियाखान कचहरी जावे। आगू पडी भीड दिखलावे ॥
कहे मुवकिल सुनो दरियाई। कमालके ऊपर है कठिनाई ॥
इल्म फकीरी सैल तुम पाई। मारो ईंटा फकीरके ताई ॥
जो तुम इनपर ईंटा न डारो। तब तुम सारी खिदमत हारो ॥
मारो ईंटा होयकर राजी। नाहिंतो तुमपर होय शाहनराजी ॥

दरियाखान वचन।

कौन उपाय करों मैं सांई। कैसे मुरशिदपर ईंट चलाई ॥
मेरी इल्म फकीरी जाई। जो मैं इनपर गद कर जाई ॥
तब हजरत उसपर बहुत रिसांई। तबही फूल एक लीन उठाई ॥
दरियाखान विवेक निधाना। भेद फूल मन करे तिवाना ॥
जो फूलै हम मारिहौं जाई। मेरो जनम भ्रष्ट होय जाई ॥
देखि गुनावन शाह रिसाना। कठिन बोध प्रकट दिखलाना ॥
देखि क्रोध दरिया जब लीना। पखुरी एक फूल सो छीना ॥
सोई पखुरी गुरुपै चलिया। लागत पखुरीअचेत ह्वै परिया ॥
दरियाखान दौरि ढिग गयऊ। पहर एक तक विन्ती लयऊ ॥
पहर एकमहँ चेत तब आवा। दरियाखानतब अरजसुनावा ॥
सुनहू सत गुरु विनती मोरी। इतनी ईंटा परी तुम धोरी ॥
इतनी ईंटा परी तुम संगा। तब तुम काहे न मोर्‍यो अंगा ॥

हमतो फूलन पखुरी डारा । ताते तुम होय पडे बेकरारा ॥
दोहा—याका मरम पाया नहीं, सतगुरु कहो समुझाय ।
एतिक ईंटा मारसे, तुम कहँ ना विकलाय ॥
एकै पखुरी फूलसे, लागी इतनी चोट ।
होय विकल धरनी गिरे, हो गये लोटम पोट ॥

कमाल वचन ।

बिना भेद उन ईंटा डारा । तुमतो हमको चीन्हके मारा ॥
मोंसे इलम फकीरी पाई । ताते तुम मोकूं मारा भाई ॥
यह दुनिया है कालका चारा । इसपर चले न अमल हमारा ॥
ताते देह छांडि हम भये नियारे । डारे कोटिक ईंट अपारे ॥
देखत तुमको देह समोये । शिष्यको दर्शन देह महँ होये ॥
भली कीन तुम मोको मारा । अपनी इलम फकीरी हारा ॥
बहुतेक ज्ञानहम तोहि सुझावा । तौंहू तुम मम मरम न पावा ॥
दोहरा—इलम फकीरी चूकी तेरी, सुनहू खान पठान ।
दोजख जाहू मौजमें, यह सतगुरुका फरमान ॥

दरियाखान वचन ।

सब दुनिया खोजत कहँ जायी । मुझको कौने दोजख फरमाई ॥

कमाल वचन ।

भूत खानिमें रहो समाई । सब जग जाने तेरे ताई ॥
जानि बूझि तुम मोको मारा । सब भूतनका बनो सरदारा ॥
सब भूतनमें करो बादशाही । सबमे तेरी चले दुहाइ ॥
एती खबर शाह सुन पावा । जिन्दा कहँ शिर काटनफरमावा ॥
कहे दरियाखान सुनो सुलताना । जिन्दा नहीं कोई औलियाजाना ॥
यह सुनि शाह बहुत रिसाया । तुरतहि पोस्त काढि मँगाया ॥

१ कमाल साहब उस समय जिन्दा वेषमें थे । जिन्दा वेशका हाल देखो ग्रन्थ जिन्दाबोध आगम ज्ञानमें । २ चमडा ।

जबहीं छाती चीरन लागे। शाही महलमें आग तब जागे ॥
पडे अहमद जो बहुत ठहेली। शाहकी देह अग्नि तब भेली ॥
शाह कहे चलु जिन्दा पासा। जिन्दा चले तब काशी वासा ॥
जिन्दा गया काशी अस्थाना। सुनी शाह मनही पछताना ॥
दरियाखान कहँ संग लिवायी। चला शाह काशी कहँ जाई ॥
हस्ती घोडा लिये मँगायी। जर जौहर बहु माल भराई ॥
खेचर ऊंट हाथी बहु लीना। गिनत बरे नहिं आवे गीना ॥
चले अहमद आप सुलताना। दुनिया संग उठि चलीनिदाना ॥
एक मास दिन सत्ताइस जाई। अहमद पहुँचे काशी माई ॥
कमाल पहल गुरु पहँ आये। सतगुरु सन्मुख माथ नवाये ॥
आये अहमद सतगुरु पासा। बारम्बार खैंचे ऊँच उसासा ॥
जर जवाहिर माल उतारा। ले सतगुरूके चरणों धारा ॥
बहुत कहूँ कछु बरनि न जाई। हमही पूठ नहिं दीन गुसांई ॥
साहब कमाल गुसाकरि आये। हमरे तनकूँ अगिन लगाये ॥
यह सुनि सतगुरु बहुत रिसाये। तब कमालको बचन सुनाये ॥
हमको मिले सो जीव उबारें। तुम तो लाये द्रव्य भंडारें ॥

दोहा—नाम रतन धन बेचिके, लाया माल हमाल।
बूडा वंश कबीरका, उपजा पूत कमाल ॥
कौडीसे हीरा भया, हीरेसे भया लाल।
आधे साहिब कबीर हैं, पूरा भक्त कमाल ॥

चौपाई।

इतना कही दया प्रभु कीना। शाहको दुख छुडाये लीना ॥
साहब नजर करी भर पूरी। शाहकी जलन भई तब दूरी ॥

दरियाखान वचन।

दरियाखान कहे कर जोरी। सुनु समरथ विन्ती मोरी ॥

हम तो फूलक पखुरी डारा । कौन चूक है गुरू हमारा ॥
पहिले इलम फकीरी दीना । फिरके जनम भूतको कीना ॥
कौन चूक अपराध गुसाँई । सो समरथ मोहि देहु बताई ॥
थोडा चूक बहुत दुख दीना । हो समरथ मैं होऊं अधीना ॥
भूत जनम बड होय मलीना । महा दुख तुम सदा जो दीना ॥
ऐसी चूक है कहा हमारी । भूत खानिका दुख बड भारी ॥

सतगुरु वचन ।

सुनो दरिया यक बात हमारी । पहली बोधहिमें भयी खुवारी ॥
बिना कसनी इलमतोहिदीन्हा । बिनाकसनीतुमगुरुनहिंचीन्हा ॥
निरखि परखिकेजिन सिर दीन्हा । सो कबहूँ ना होय मलीना ॥
पहले जगमें जीव चितायी । समझि सीख पुनि दीजे ताहीं ॥
इल्म दिया जब रहा न कोई । पीर मुरीदके वेष होय जाई ॥
कलियुग जीव कालके सारा । सीखे चतुराई करै अपारा ॥
इलम लेनकुँ झगरा ठाने । कसनी सुनी क्रोध मन आने ॥

कसनी परीक्षा ।

पहले कसनी कसहिं अपारा । तन मन धन यह तीन बिचारा ॥
यह तीनूं हैं त्रैगुण सारी । यह तीनों मिलि भक्ति उजारी ॥
यहि तीनों मिलि गुरुकेबस होई । करहु मुरीद इलम देहु सोई ॥

दोहरा–यह तीनो अरपे नहीं, कोटिक कहे बनाय ।
कहै कबीर सत मानहू, तेहि जिव गोता खाय ॥

चौपाई ।

यह तीनों तुम दीना नाहीं । इलम फकीरी सहज तुम पाई ॥
तुमको कसनी नहीं लगारा । तुम दोजखकानर गुरुको मारा ॥
अपना कौल तुम गये हिरायी । ताते जनम भूतको पायी ॥

तुम तो औगुन बहुते कीना। दोऊ नजर तुम गुरु नहिं चीन्हा॥
अब तो हम सो कछू न होई। गुरुका शब्द हुआ होय सोई॥
इसमें दोष गुरुका नाई। तुम्हरि दुर्मति भूत गति पाई॥

दोहरा—तुम जानो हम भूलिया, दिलमें रहो हुलास।
कलयुग जीव बहु भूलसी, सो रहे तुमरे पास॥

चौपाई।

बहुतक शिष्य होयँगे भाई। सो सतगुरुसो कौल बँधाई॥
तन मन धन चरणों धरिहैं। ऐसी लबारी मुख सो करिहैं॥
ऐसे कहि वह शब्द सो लइ हैं। शब्द लेइ पुनि एक न दइ हैं॥
साचा कौल हजूरी कीना। कौल चूक सो तुमको दीना॥
ऐसा कलिका कठिन तमाशा। बहुत रहेंगे तुमरे पासा॥
जो कोइ होइ हैं कौल मलीना। ताको जनम भूतको दीना॥

दोहा—सब दोजख फिरि आइहैं, तब तुम करो सम्हार।
इल्म फकीरी साधिके, उतरो भवजल पार॥

चौपाई।

अहमद शाह चले शिरनायी। धन सतगुरु मैं तुव बल जाई॥
हमरे तनकी तपन बुझायी। दरियाखां चले पछतायी॥
सत्य भूपकी राह चलायी। जैसा किया तैसा फल पायी॥
शिष्य होयके दुर्मति करहीं। सो तो जनम भूतको धरहीं॥

कमल वचन।

तबही कमाल कहे शिर नायी। हे समरथ करु कौन उपायी॥
कैसे चलिहहिं पंथ हमारा। कैसे होइहहिं जीव उबारा॥
कैसे आवा गमन मिटाऊ। सो साहब मुहिं भाषि सुनाऊ॥
कैसे उतरूँ भवजल पारा। सतगुरु मेरा करहु उबारा॥

सतगुरु वचन ।

सुनहु कमाल कहूँ चित लाई । तुमरे पंथमें मुक्ती नाई ॥
प्रथम शिष्य दरियाको कीना । ताको जन्म भूतको दीना ॥
पहले इल्म फकीरी दीना । फिरके जन्म भूतको कीना ॥
उनही जन्म भूतको पायी । शब्द पाय पुनि गये गवाँयी ॥
पंथ न चले ऐसे सुनि लेहू । प्रथम बोध बिचली पुनि गेहू ॥

दोहा-पंथन चले कमालजी, कोटिक करो उपाय ।
धोखे जीव बिगोय हो, धर्मराय धरिखाय ।

कमाल वचन ।

हाथ जोरिके शीश नवायी । समरथ मोहि कहो समझायी ॥
पंथ न चलै कौन विधि करिये । कहो तो अलोपपाँवहमधरिये ॥
मैं हूँ जेठा शिष्य गुसाँई । पंथ ना चलइ भौजल भाई ॥
बिना पंथ मोहि कौन पिछाने । कमाल कबीर सबै जग जाने ॥

सतगुरु वचन ।

सतगुरु कहै कमाल सुने बानी । पंथ चलनकी सुधि पहिचानी ॥
कमाल नामले पंथ चलाऊ । कही ज्ञान गर घर समझाऊ ॥
इल्म फकीरी राखो हमपासा । और साखी पद करो परकाशा॥
यही शब्द करो गुरु आई । बिन्द साधना रहे सब ताई ॥
रहनि गहनि तुम देहु बुझाई । सो जिव धर्म सुन्नमों जाई ॥
चारों युगमों अटल ममदासा । तुम साखी पद करो परकाशा॥
यह राह मेटि भाषो अधिकारा । निश्चय परि हो नर्क मंझारा ॥

साखी-परमारथतुम साजहू, करहू शब्द विचार ।
भौसागरमें भय नहीं, सोऽहं नाम अधार ॥

कमाल-वचन चौपाई ।

समरथ गुरु ऐसी सुनि लेहू । इलम फकीरी किसकूँ देहू ॥

कौन ठौर घर रहे निदाना । सो समरथ मोहि कहो परमाना॥
सो मै कहूँ शिष्यनके आगे । सुरत शब्द चरन चित्त लागे ॥
एती आगम कहो सुधारो । चरण टेकिप्रभुकरों निहारो ॥

सतगुरु वचन ।

सुनो कमाल निजकहों विचारा । जबसतगुरु मुखते शब्द उचारा॥
कलियुग आया कहूँ प्रमाना । बांधो गढमें होय अस्थाना ॥
सुकृत अंश प्रकटे संसारा । अंश लोकते आये हमारा ॥
सो धर्मदास घर लेई औतारा । उसका पंथ चले संसारा ॥
वंश ब्यालिस अविचल राजा । सोइ जीवनका करिहै काजा ॥
उनका वीरा शब्द जो पावै । सोई हंसा लोक सिधावै ॥
और जीव बांचे नहिं कोई । कोटिक ज्ञान करे पुनि जोई ॥
आगम तुमको कहुँ समझाई । कुदरतकमाल सुनो चितलाई ॥
जोई इलम पुरुषके पासा । सोई वंशमें होय प्रकाशा ॥
विना फकीरी इलम नहिं जाने । युक्ति बिना योगी बउराने ॥
युक्ति सारकोइ हँसा पावे । लोकहिं जाय बहुरि नहिं आवे॥
आवत जात मिलि रहे समाई । विना फकीरी इलम कहँ पाई ॥
सतगुरु बिना युक्ति नहिं आवे । बिना युक्ति फकीरी पछतावे ॥
पांच तीनको करहि निरासा । सोई फकीरी इलम जिन पासा ॥
लगन तत्त्वकी युक्ती जाने । सोई योगी है युक्ति पराने ॥
नहिं तो कथनी कथहिं अपारा । बिनु परिचय बूडे संसारा ॥

दोहरा–कथनी करनी चतुराई, कीना पांचों पार ।
वंश छाप गुरु युकती पावे, इलम फकीरी सार ॥

कमाल वचन ।

चरन टेकि हम करें निहोरा । हमरे जिवगुरु होय निवेरा ॥
भौसागरमें बड दुख होई । महा त्रास दुख व्यापै सोई ॥

कठिन त्रास है भवजल धारा । जाते सतगुरु करहु उबारा ॥

सतगुरु वचन ।

कुदरत कमालसुतअंश हमारा । तुमरे जिवका करों उबारा ॥
इल्म फकीरी तुमको दीना । जीव उबार अपना करलीना ॥
सोई इल्म मम राखू पासा । साखी पद तुम करहू प्रकाशा ॥
जो यह इल्म बाहर जायी । तो हम तुम बिछुरेंगे भाई ॥
यही इल्म धर्म दासको दीना । जाते हंस अमर करि लीना ॥

दोहरा—बन्धे कौल कमालके, सतगुरु कहे पुकार ।
धरमदासके वंश विना, कौन उतारे पार ॥

आगे बानी भाषूँ भाई । दास कमाल सुनो चितलाई ॥
कलियुग भेद करूँ प्रकाशा । हँस पहुँचाऊँ लोक निवासा ॥
बिहंगम माति हंस जब होई । सत्य कही सत्यलोक समोई ॥
आगम भेद कही समुझाई । भौजल बूडत तुरत बचायी ॥
बंश व्यालिस सौंपी गुरुबाही । जो बूझे तोहि देउँ बताही ॥
सोई इल्म सौंपा उनपासा । सब जीवनकी पूरें आसा ॥
वंश दया जाहि पर होई । होय पुनि हंसा अम्मर सोई ॥
कहैं कबीर हम सतही भाखा । सुनो कमाल गोय नाहिं राखा ॥

दोहरा—कलमाते कल उपज्यो, सब कल कलमा माहिं ।
सो कलमा दिया कमालको, सब कल कलमाहि समाहिं ॥
जीवत मृतक होय रहे, जाग्रत माहिं समाय ।
इल्म फकीरी अलम सही, आवे जाये बलाय ॥
समरथ सतगुरु भेटिया, भये मद मस्तु निहाल ।
प्रेम प्याला सही किया, मुक्ता खेले कमाल ॥

इति कमाल बोध ।

विवेचन ।

कमाल बोधकी केवल एकही प्रति सम्वत् १९११ की लिखी हुई मेरे पास है । जिस परसे यह पुस्तक छापी गयी है । पाठक! एकबार आप अनुरागसागर आदि ग्रन्थोंमें लिखे बारह पंथका हाल स्मरण कीजिये फिर इस ग्रन्थोंके आशयसे मिलाइये । अब आप स्वयम् विचार कीजिये आप किस ग्रन्थको सत्य और किसको असत्य मानते हैं । और ग्रन्थोंमें कमाल साहबको साक्षात् काल दूत लिखा है । इस ग्रन्थमें कबीर साहिब खास वही भेद जो गुरु-धर्मदास साहबको बतलाया है वही मुक्ति भेद कमालको बतलानेकी बात कहते हैं । भला बतलाइये तो वह सत्य कि यह, इसी प्रकार कबीरपंथके सब ग्रन्थोंमें गडबड और पूर्वापर तथा विषयान्तरका भेद है इन्हीं ग्रन्थोंको कबीरपंथी गुरु और महंत लोग अपना मार्ग दर्शक मानते और घमण्ड करते हैं । यही कारण है कि आज कोई भी कबीरपंथी महंत साधू और सेवक किसी विचार पर स्थिर न होकर मारे मारे और भटकते फिरते हैं । और विषय बासनामें लुप्त हो संसारकी मर्यादा और सत्यगुरुकी आज्ञाका उल्लंघन कर करने योग्य कर्मोंको करके कबीरपंथकी निन्दा करा रहे हैं । यही गडबड देखकर अच्छे २ विचारपन सत्यगुरुके उपदेशको समझने और जानने वाले लोग कबीर पंथी कहलानेसे ही लज्जित होकर इस पंथको छोडते जाते हैं जिसका पूर्ण वृत्तान्त कबीर धर्मसारमें लिखा जायगा ।

इति ।

सत्य
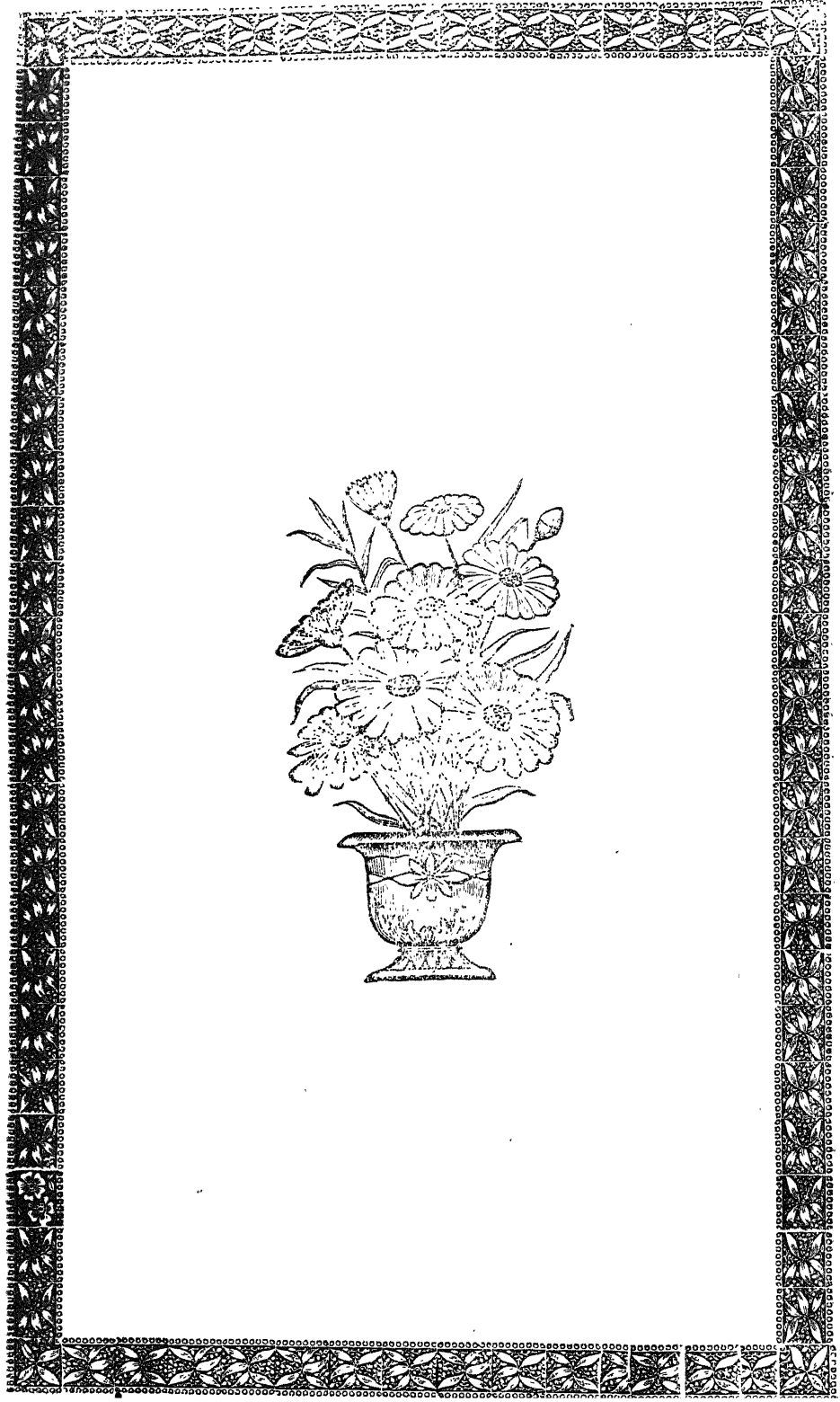
अथ

श्वासगुंजार प्रारम्भः ।

भारतपथिक कबीरपंथी-
स्वामी श्रीयुगलानन्दद्वारा संग्रहीत ।

उसीको
गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदासने
अपने " लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर " छापेखानेमें
छापकर प्रसिद्ध किया ।

संवत् १९८३, शके १८४८.

कल्याण-मुंबई.
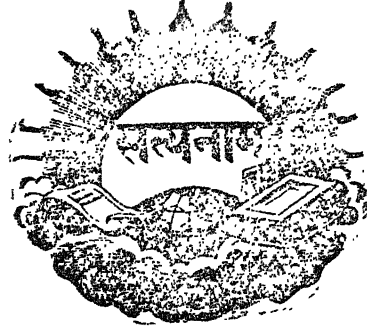
सत्यसुकृत, आदिअदली, अजर, अचिन्त, पुरुष, मुनीन्द्र, करुणामय, कबीर, सुरति, योग, संतान, धनी धर्मदास, चुरामणिनाम, सुदर्शन, नाम, कुलपति नाम, प्रमोध गुरुवालापीर, केवल नाम, अमोल नाम, सुरतिसनेही नाम, हक्क नाम, पाकनाम, प्रगट नाम, धीरज नाम, उग्र, नाम, दया नाम, की दया वंश-व्यालीसकी दया ।

अथ श्रीबोधसागरे

द्वात्रिंशतिस्तरंगः ।

श्वासगुञ्जार प्रारभः ।

चौपाई ।

कहै कबीर सत्य प्रकाशा । श्रोता सुरति धनी धर्मदासा ॥
सत्य सार सुकृत गुण गायो । अविचल बाह अछै पद पायो ॥
संशय रहित सदा सो गाऊं । शीलरूप सब हिमकर नाऊं ॥
करै कुलाहल हंस उजागर । मोह-रहित सब सुखके सागर ॥

तेहि पुर जरा मरण भ्रम नाहीं । मन विकार इंद्री नहिं ताहीं ॥
सत्यलोक हंसन सुख होई । सो सुख इहां न जाने कोई ॥
जाने सो जो उहां रहाई । ईहां आय कहे समुझाई ॥
आवत जात बार नहिं लावे । उहांकी चाल सोई यहां लावे ॥
जो समझे सोइ उतरे पारा । बिन समझे सब यमके चारा ॥

समय–अमरलोककी महिमा, सत्य शब्द उपदेश ।
हंस हेतु सो बरनो, छूटे यमकर देश ॥

चौपाई ।

अमरलोककी अविगति बानी । धरमदास मैं कहूँ बखानी ॥
जो समझे सो उतरे पारा । बिन समझे सब यमके चारा ॥
प्रथम शरण सतगुरु गुण गाऊं । अक्षरभेद सकल सुधि पाऊं ॥
सत्यलोक कर भाव अपारा । सो भवसागर करै पसारा ॥
भाषों अग्र अग्रकी बानी । भाषों द्वीप जहांलगि खानी ॥
भाषों पुरुष पुरुषकी काया । भाषों अमी अमान अमाया ॥
भाषों पुरुष लोककी बानी । भाषों सबै सहज सहिदानी ॥
जो काया प्रभु आप सँवारा । सो समुझाइ कहौं व्यवहारा ॥
अमर तार अखंडित बानी । श्वासा पार सार सहिदानी ॥
जबही कयाप्रभु आप सुधारा । कहौं विचारि तासु व्यवहारा ॥
जेतिक श्वासा पुरुषकी देहा । तार तार कर कहों सनेहा ॥
जेतिक बचन पुरुष उच्चारा । तेइ तेइ बचन नाम अधिकारा ॥
श्वासा पारस आदि निरबाना । सोरह सुतकी नाल बखाना ॥

समय–पाँच अमीकी देह धरि, प्रकटी ज्योति अपार ।
सुरति संग निहतत्त्व पुर, पुरुष होत श्वास गुञ्जार ॥

धर्मदास वचन–चौपाई ।

हाथ जोरिके टेकेउ पाऊ । साहब कहो तहँवाके भाऊ ॥

कहो लोक कर प्रगट बिचारा । जहाँलौं दीपहिं कर विस्तारा ॥
बरनौं द्वीप गुप्त अनुसारा । बरनौं जहाँलगि सकल पसारा ॥
बरनौं सोरह सुतकर भाऊ । तीनशक्ति कैसे निरमाऊ ॥
पुरुष श्वाँस जेता अनुसारा । ताकर कहों सकल विस्तारा ॥
केहि विधि सोरह सुत प्रकाशा । केहि केहि कहां रही बासा ॥
कहां विस्तारिसकल अस्थाना । सत्यलोक और यमके थाना ॥
कैसे आदि अन्त प्रभु कीन्हा । कैसे रचा देहकर चीन्हा ॥
कैसे भये निरंजन राया । कैसे तीन लोक निरमाया ॥
कैसे उपजन विनशन कीन्हा । काह जानि बाजी यम दीन्हा ॥
कैसे इन्द्री देह बनाई । कैसे जीव परा बसि आई ॥
कैसे जीव अपनपौ दरसे । कैसे जीव पुरुष पग परसे ॥

समय–काया मध्ये श्वास है, श्वासा मध्ये सार ।
सार शब्द बिचारिके, साहब कहो सुधार ॥

सतगुरु वचन–चौपाई ।

धर्मदास जो पूछेहु आई । आदि अंतसब कहौं बुझाई[1] ॥
कहों लोक लोककी बानी । कहों पुरुष सुतकी उतपानी ॥
कहों संदेश दया करि तोही । मुक्ति जानि जो पूछेहु मोही ॥
सुनहुँ संदेश आदि निरबाना । जाके सुनत काल छै माना ॥
सुमिरहु आदिपुरुष दरबारा । सुमिरत आप हंस होय पारा ॥

समय–तीनलोकके भीतरे, रोकि रह्यो यमद्वार ।
वेद शास्त्र अगुवा कियो, मोह्यो सकल संसार ॥

चौपाई ।

धर्मदास चित चेतहु जानी । कहों बुझाय अगरकी बानी ॥
पुरुष अजावन रहा जो देहा । तत्त्व बिहीन सुरति सनेहा ॥

---

१ कहौं बुझाइ भेद समझाई ।

चारि करी सिंहासन जोरी । पांचयें अचिंत आप अंजोरी ॥
चारि करी चारिउ परवाना । शक्ती भीतर वह अकुलाना ॥
समय–करि करि महा परिमल, वाससुबासकी खानि ।
तेज करी जो प्रगट भई, तामहँ आइ समानि ॥

चौपाई ।

पुरुष अचिंत चिंता जब कीन्हाँ । उपज्यो सुरति शब्दको चीन्हाँ ॥
रहे गुपत प्रकट भई काया । श्वासा सारशब्द निरमाया ॥
शब्दहिते है पुरुष अस्थूला । शब्दहिमय है सबको मूला ॥
शब्दहिते बहु शब्द उचारा । शब्दै शब्द भया उजियारा ॥
शब्दहिते भौ सकल पसारा । सोइ शब्द जिवके रखवारा ॥
प्रथमशब्द भया अनुसारा । नीहतत्त्व एक कमल सुधारा ॥
नीहतत्त्वपर आसन कीन्हाँ । रचना रची सकल तब लीन्हाँ ॥
रच्यौ दुहुप द्वीप मनिभारी । सहस अठासी द्वीप सुधारी ॥
अक्षै वृक्ष एक राशि बनाई । अग्रबास तहाँ रही समाई ॥
समय–पेड पात निज फूल महँ, प्रगटी बास अनूप ।
पारस निहतत्त्वहि पुरुष, सुरति हंसको रूप ॥

चौपाई ।

जब पारस सुरति भये स्थाना । अगर प्रताप निमिष उरआना ॥
पुरुष प्रसन्न नाम उच्चारा । श्वासापर सब रचनि सुधारा ॥
श्वासा सार शब्द गुँजारा । पांच अमीको भयो विस्तारा ॥
पांच अमीको जो विस्तारा । ताहि अमी सब लोक सुधारा ॥
श्वासा दुहुप अगरकी खानी । सोरह सूतु भये उतपानी ॥
पांच अमी साहबके अंगा । पांच तत्त्व समरत्थ प्रसंगा ॥
श्वासा स्नेह सबै उपजाया । बानी बानी बरन बनाया ॥
सत्यलोक सबहीको मूला । भयऊ सत्य सो सब अस्थूला ॥

श्वासासार सत्य कर भाऊँ। अमी आदि उपजी तेहि नाऊँ ॥
(सत्यसार श्वासा संभारी। अमी आदि पारस तहँ धारी ॥)
श्वासा आदि सुरङ्ग बखाना। रंग अमीकर भा बंधाना ॥
श्वासा अजर नाम अनुमाना। प्रकटी अमी अजर सुजाना ॥
अदल नाम श्वासा परकाशा। उपजी अमी अमान सुवासा ॥
स्वासा निरनै भ्या अनुसारा। अधर अमीका भा विस्तारा ॥
श्वासा पांच प्रकटि विस्तारा। पांच अमीकर भया पसारा ॥
पांच अमी पाचों अधिकारा। पांचतत्त्व तेहि संग सुधारा ॥
पांच अमी सब लोक सुधारा। पांचतत्त्व धै गुप्तनुसारा ॥

समय-पांच अमीते पांच भए, पांच नाम अधिकार।
सैन स्नेह उत्पन भई, अमी तत्त्व विस्तार ॥

चौपाई।

सोरह श्वासा सार सहाया। सोरह सुतकी प्रकटी काया ॥
सोरह सुतकी सोरह नाला। एकते एक अमान रिसाला ॥
पुहुप नाम श्वासा अनुसारी। उपजे सुरति हंस पति भारी ॥
सुरति समानी प्रभुकी देहा। बाहर भीतर एक सनेहा ॥
पांच अमीकी प्रकटी देहा। सुरति कीन्ह तेहिमांहि सनेहा ॥
जेतिक पुरुष खान निरमाया। पांच अमीते सबकी काया ॥
पांचों अमी साहबके अंगा। नाल सात उपजी तेहि सङ्गा ॥
सात नालकर एके भाऊ। सातों रहै पुरुषके ठाऊँ ॥
पुरुष सुरति कहँअगुवा कीन्हा। सातों नाल सौंपत तेहि दीना ॥
सातों नाल सुरति जब पाई। ताहि नेहमों रहे समाई ॥
क्षण बाहर क्षण भीतर आवै। देह विदेह दोऊ दरसावै ॥
अमरतार निःअक्षर कियेऊ। सोऊ पुरुष सुरति कह देऊ ॥

समय-अमर निरक्षर सङ्ग लिय, अर्ध ध्वजा फहराय ॥
पलटि-समानि सुरति पुरुष, देहमें अछय छिपाय।

चौपाई।

(सोलह सुतकी उत्पत्ति प्रकार)

सुरति नेह प्रभु इच्छाकीन्हाँ। सोरह सुत उपजावे लीन्हाँ ॥
सत्यनाम श्वासा अनुमाना। सुकृत अंश भये अगुआना ॥
दूजी श्वासा बाहेर आई। उपजे सहज शून्य तिन्ह पाई ॥
तिसरी श्वासा पुहुप सनेही। तेहिते भई हमारी देही ॥
चौथी श्वासा तेज सनेहा। तेहिते भई धर्मकी देहा ॥
पाँचई श्वासा नाम खुमारी। उपजी कन्याँ आदि कुमारी ॥
शील नाम स्वासा निरमयऊ। छठयें अंश सुजन जन भयऊ ॥
सतयें स्वासा नाम अनंगा। उपजे अंश भृंगमुनि संगा ॥
अठयें स्वासा नाम सुहेली। उपजे कूर्म शीस उर मेली ॥
नवमें स्वासा नाम सोहंगी। नाम ते उपजे सुत सरवंगी ॥
दसयें स्वासा नाम रसीला। जाते उपजी सरवंन लीला ॥
ग्यारहें स्वासा नाम सुरंगा। सुत स्वभाँव उपजे तेहि संगा ॥
बारहें स्वासा नाम सुमाहा। भाँव नाम सुत उपजे ताहां ॥
तेरहें स्वासा अछय सुभाऊ। उपजे सुत विवेक तेहि नाऊ ॥
चौदह स्वासा अमर बखाना। उपजे सुत संतोष सुजाना ॥
पंद्रहे स्वासा प्रेम सनेहा। उपजी कदल ब्रह्मकी देहा ॥
*षोडशे स्वासा नाम जलरङ्गी। उपजी दयाँ पालना सङ्गी ॥
षोडश स्वासा षोडश बानी। उपजे भोग संताय न ज्ञानी ॥
सोलह स्वासा नाम बखाना। उपजे सोलह सुत निरवाना ॥
सोरह सुत कर एकै मूला। भिन्न भिन्न प्रगटी अस्थूला ॥
एके पिता एक व्यवहारा। सब जो रहहैं पुरुष दरबारा ॥

* कई एक प्रतियोंमें इस चौपाईको ऐसा लिखाहै कि, "सतरहें श्वासा अदृत सुबानी" परन्तु षोडश सुतकी उत्पत्ति वर्णन करते हुये सतरहवेंकी उत्पत्ति वर्णन असङ्गत जानकर यही शुद्ध जान पडा।

एक पाँवते सेवा करहीं । पुरुष बचन शीशपर धरहीं ॥
सेवा करति रही लौलीना । पुरुषलोकते होहि ना मीना ॥

समय–सोरह सुतकी एक मूला, एकते एक अधीन ।
कर जोरे सेवा करैं, प्रेमभक्त लौलीन ॥

चौपाइ।

सेवा करत बहुत दिन गयऊ । पुरुष अवाज अधरधुनिभयऊ ॥
अर्ध अवाज भई जब बानी । निकसी अगर बासकी खानी ॥
सबतर लोक द्वीप रहि छाई । बिमलबास भरपूरि रहाई ॥
अगर बास सब हंसन पाई । निर्मलबास सदा सुखदाई ॥
पीअत अमृत सबै अघाने । आपु आपु पुर सबैं सिधाने ॥
धर्मराय सेवा अधिकाने । सो सब तोहि कहौं सहिदाने ॥
छलके बचन पुरुष सो लीन्हाँ । पाछे दूँद लोक महँ कीन्हाँ ॥

समय–और सबै सुत बैठे, अपने अपने स्थान ।
धरमरोष सबते कियो, ठाँम ठाँम बिगरान ॥

धर्मदास बचन--चौपाई।

धर्मदास बिनवैं कर जोरी । साहब मेटहु संशय मोरी ॥
और सब सुत अछप छिपाने । धर्मराय कैसे बिगराने ॥
कैसे और सब सुत सब भारी । धर्मराय कैसे भये बिकारी ॥

सतगुरु बचन।

धर्मदास सुनहू चितलाई । कहौं सँदेश आदि समझाई ॥
जब प्रकटे प्रभु अमर तारा । निकसी अधर निरक्षर धारा ॥
भई अवाज अधरते बानी । निकसी अगर बासकी खानी ॥
पारस परिमल महक बसाई । सोई परिमल सुरति दुराई ॥

अगर छिपाय आप महराखा । सुरति स्नेह मुख प्रकटी भाखा ॥
प्रथम पुरुष मुख भाषा आई । भाषा अग्र पारस निरमाई ॥
भाषा बचन भया अधिकारा । भाषहिते भा सकल विस्तारा॥
भाषा बचन पुरुष उच्चारा । सो सब सत्यलोक व्यवहारा ॥
भाषा बोल पुरुष उच्चारा । सेवहु सत्यलोकके द्वारा ॥
श्वासा सार तार जोरि आना । अधर अमान ध्वजा फहराना ॥
भाषा स्वर बानी अनुमाना । श्वास सार तार जुरि आना ॥
निमिष माहिं अनेक संचारा । बचन समान श्वास गुंजारा ॥
नाव स्नेह शब्द मँझारा । (बचन समान श्वास गुञ्जारा॥)
इवासा नेह देह भई जबहीं । भाषा सहज बचन भा तबहीं ॥

आगेकी उत्पत्ति प्रकार ।

प्रथम इवासकी निकसी खानी । उपजे सुत सुकृत सम आनी ॥
निमिषनेह प्रसन्न सुधारे । नाममूल टकसार उचारे ॥
भो बिस्तार निमष एक गयऊ । " " "
मूलगुत मस्तक नहिं देखा । आदि नाम अमर घर लेखा ॥
पेडक गहे मूल धनु गाजा । सोई मूल फूल फल लागा ॥
पेडहि गहे मूल औ शाखा । मूल मिले तबहि राचेशाखा ॥
गुप्त मूलते प्रकटी शाखा । पल्लव मूल पडै गहि राखा ॥
पेड देखि पल्लव फैलावै । पल्लव फैले अन्त नहिं पावै ॥
पल्लव चढे पेड चित राखा । मिले मूल तब फल रस चाखा ॥
आद अन्त दुइ पेड़ समाना । आपहि राखा आप पहिचाना ॥
जागि सुरति पुनि पेड निहारा । फलरस चाखी बीजगहि डारा ॥
बीजाते सोई फल होई । फल रस लेइ मूल तजि छोई ॥
जागि सुरति सपन मिटगयेऊ । दुई चितमेटि एकचित भयेऊ ॥

दूजी श्वासा प्रभुकी देहा । उपजे सहज सुख नेहा ॥
तिसरी श्वासा फूल सनेही । जाते भई हमारी देही ॥
देह माँहि ह्वै रहे विदेही । देह मन भये ज्ञानरस देही ॥
कायामें काया रहि बासा । सब चौथी श्वासा परकाशा ॥
काया अविहर अविहर वासा । " ' "
चौथी श्वासा निकरे चाहा । तब चिंता उपजी मनमाहा ॥
चिंता प्रकट भई दिल जबहीं । आपते आप भुलाने तबहीं ॥
आपु शरीर आपु तब झाका । बिमलप्रकाश उदित तनताका ॥
कायारूप भई उजियारी । निर्मलदेह बिमल तन भारी ॥
बिमल प्रकाश कीर्ती जब देखा । बर्णत बनै न ताकर लेखा ॥
बिमलप्रकाश किरणजब देखा । " " "
कला अनंत अंत नहिं पावै । बरणत जिह्वा लक्षण आवै ॥
देखत रूप लीला अधिकारा । आप आपनपौ कीन्ह बिचारा ॥
कमलकरी महँ भा उजियारा । देखा आदि अंत विस्तारा ॥
आपु बरन सब देखा जबहीं । दुबिधा रूप झांई भइ तबहीं ॥
कमल झांकी प्रभु देखा जबहीं। हमरे रूपको दो सर अबहीं ॥
इतना कहत बार नहिं लाये । निकसि कमलते बाहर आये ॥
छाँडी कमल प्रभु भये निनारा । तबहीं कमल भया अंधियारा ॥
कमल झाँकि देख्यो सबन्यारा । भये तिमिर तनतेज अपारा ॥
अंधकार प्रभु देखा जबहीं । कायाज्योति मलिन भइ तबहीं ॥
निमिषि एकमें संशय आवै । निमिषि एक आनंद जनावै ॥
विस्मय हर्ष दोऊ एक ठाऊँ । एक पुरुषकर दोउ सुभाऊँ ॥
आपुते आप भया अतिचारा । तेहि अवसर प्रभुबचनउचारा ॥
उठि अवजो शब्द सतभाऊ । कमलमध्य कस शून्य रहाऊ ॥
घटही वचन पुरुष संधाना । तब चौथी श्वासा बंधाना ॥

तेज पूँज मे गर्भ शरीरा । फूंकी नाल देखा बल वीरा ।
कमलनाल धरि फूंका जबही । चौथी श्वासा निकसी तबही ।
फूंका कमल तेजके नेहा । चला प्रसेव पुरुषकी देहा ।
फूँकत कमल बार नहिं लागा । भया उजियार तिमिरसबभागा ।
कारण काल पट यहँ धोखा । दुई चित मूल तेजमह रोखा ॥
चौथी श्वासा विषे सनेही । मोह विकार धर्मकी देही ॥
मोह विकार तिमर अधिकारा । ता सँग भयउ धर्म औतारा ॥
तिसरी श्वासा गुप्तहि राखा । तासो जोर निरञ्जन भाखा ॥
फूँकत कमल तेज गारि गयऊ । तेहितेकाल ज्योति धरिभयऊ ॥
महा बाळि देह धरिके बैठा । जानो धर्ममहीं हौं जेठा ॥
तेज लगन श्वासा अनुसारा । ताते धर्मराय बरियारा ॥
तेजतिमिर संग शून्य निवासा । सबतर भयो काल परकाशा ॥

समय—आसा धरे बहुत दिन बीते, प्रेम भक्ति लौलीन ।
आश धरे बहुतयुग गये, भक्तिभाव आधीन ॥

(ज्योति तहाँ लगिज्वालतेभाखा । तेहि ते नाम निरञ्जन राखा ॥)
निराकार आकार धरासे । ज्योति काल बहुनाम कहाये ॥
चौदह द्वार काल जो भाखै । सुनि सों सबै नाम मन राखै ॥
सांक्रित अण्ड भयो प्रचंडा । फूटत अण्ड भयो बहु खंडा ॥
चौदह बुन्द अमि ढरि गयऊ । चौदह अंशताहिते भयऊ ॥
चौदह पौरिया द्वार बैठारा । इन चौदह बहु ज्ञानपसारा ॥
आप समान सबै रचि राखे । चौदह कोटि ज्ञान तिन भाखे ॥
चौदह अंस धरम तहँ पाये । ते चौदह विद्या तहँ पाये ॥
वही चौदह अगम अपारा । तापर काल धरम बटपारा ॥
धरम-समाधि वितही यमधारा । चौदह मोह को तनवारा ॥

ताकी कला कहै को पारा । जेहिके सुतकोटिन उजियारा ॥
कोटिन कला करै बहु भारी । आपहि पुरुष आपही नारी ॥
आपहि वेद आपही वानी । आपहि कोटिन ज्ञानबखानि ॥
आप अजर आवै गाह कहावै । मूल नाम गहि धोख लगावै ॥
नाना ज्ञान कथे बहु बानी । प्रकट्यो आदि आपगुण जानी ॥
कहाँ लगि कहो ज्ञानके भाऊ । बहुत काल बहु नाम धराऊ ॥
सुरति सरोतर जागे नाहीं । मनमथ पवन चंचला ताहीं ॥

एकपाव सन्मुख खडे, कर जोरे लौलीन ।
एक पांव सनमुख खडे, कर जोरे आधीन ॥

धर्मदास वचन—चौपाई ।

धर्मदास विनवै चितलाई । समरथ मोहि कहो समुझाई ॥
(धरमदास विनवहि कर जोरी । दया करो प्रभु बन्दी छोरी ॥)
धर्मराइ उत्पति जस पाई । " " "
ऊपजै तस भए कसाई । उपज्यो चित चंचल दुखदाई ॥
पुरुष तेज सम शून्य सँचारा । तासंग भया धर्म औतारा ॥
शील बिकार सहित तन पाई । प्रथमें भक्ति दूजे अन्याई ॥
भक्ति कियासि जब रहा अकेला । अघके संग भया अपेला ॥
सो अघ उन कैसे पाई । केहिविधिपुरुष ताहि निरमाई ॥
साहब कहौ भेद समुझाई । कैसे कन्या पुरुष बनाई ॥
कैसे धर्मराय तिहि पाई । तौन भेद तुम कहो गुसांई ॥
कहो बिचारि दोऊ कर भाऊ । दुइ कर जोरिके बन्दो पाऊ ॥

सतगुरु वचन ।

धर्मदास मैं तुम्हें लखावो । आदि अन्त सब भेद बतावो ॥
चौथी स्वासा संग अधिकारी । शून्यते जग भए उजियारी ॥
पुरुष कमलपर बैठे आई । गई गर्म उपजी शीतलाई ॥

पुरुष कमलपर बैठे जबही । परिमल उदित भयातनतबही ॥
शीतल पवन सोहावन खानी । मूल कमलपर आसन ठानी ॥
सिंहासनपर सत्य विराजे । पार सनेह देह मह गाजे ॥
पारस तेज भया तन माही । पँचई श्वासा उपजी ताही ॥
उपजन स्वासा देह निहारा । तन पसेव भइ मैल निनारा ॥
काया मैल पुरुष जब जाना । मीजी मैल अवला बलठाना ॥
गएउ तेज भा अबल शरीरा । पाछै भई स्वास गंभीरा ॥
तेहि स्वासा सँग पारस भारी । कायाते मथि मैल निकारी ॥
तनते मैल काढि प्रभु लीन्हा । सोई मैल रचि पुत्री कीन्हा ॥
करी पुत्री कर ऊपर लीन्हा । उपज्यो प्रेम सहजको चीन्हा ॥
भई पुत्री प्रभु देखा जबहीं । सुरति कीन्ह पारसके तबहीं ॥
निर्मल पारस स्वासा पाँचा । रहा सँभारा मैलकी बाँचा ॥
आप मैलते श्वासा कीन्हाँ । ता ऊपर बहुरंग जो दीन्हाँ ॥
देके रंग बरन सब फेरा । भीतर मैल मोह मद घेरा ॥
ऊपर शोभा रंग बनावा । भीतर लाल रंग तेहि छावा ॥
पांच अमीकर पांच सुभाऊ । पाँचतत्व तेहि संग बनाऊ ॥
पांच अमीते पुरुष शरीरा । ताते पांच तत्त्व भए धीरा ॥
पांच अमी ते तत्त्व बनावा । पांच अमी तेहि सँग निरमावा ॥
पांच तत्त्व पांचो व्यवहारा । तेहिते भयउ सकल विस्तारा ॥
पुरुष मेलते पुत्री कीन्हां । पांच तत्व तेहि भीतर दीन्हां ॥
आप सुरति ते पुत्री कीन्हां । " " "
भीतर बाहर तत्त्व पसारा । पांचों तत्व रंग अधिकारा ॥
पांच रंग तत्त्व की धारा । चौथ तत्त्व रंग बहु धारा ॥
पांच तत्व पांचों रंग भारी । पांचों रंगते कला पसारी ॥
तत्त्व रंगते लीला धारी । पांच तत्त्व पांचों रंग धारी ॥

तत्त्व रंग बहु लीला धारी। पुत्री बहुत बिचित्र सँवारी ॥
तासु कला अनंत पसारी। ताते बहुत भई विस्तारी ॥
बरणि न जाय रूप उजियारी। सुन धर्मनि मैं कहौं विचारी ॥
कलाअनंत प्रभु पुत्री कीन्हां। पारस सार ताहिमैं दीन्हां ॥
उत्पति पारस पुत्री पावा। प्रकटी कला अनंत सुभावा ॥
नखशिख देहसुधा प्रभु कीन्हां। पँचई श्वासा भीतर दीन्हां ॥
जब श्वासा काया महँ आई। प्रकटी ज्योति जगामग झाई ॥
अजब अङ्ग बना बहु रंगा। पारस सार ताहि के संगा ॥
निर्मल उदित ताहि सो दंता। चमकै बिजुली कला अनंता ॥
तत्व रंगकी उठै तरंगा। शोभा विशद मनोहर संगा ॥
पँचई श्वास जब बाहर कीन्हां। उत्पन पारस तासंग दीन्हां ॥
श्वासा परस मिलि भए एका। शोभा बरन रूप रस ठेका ॥
उपजी कन्या कला अपारा। रूप अनूप भया उजियारा ॥
जब कन्याप्रभु उत्पन कीन्हां। पांचों श्वासा तासङ्ग दीन्हां ॥
ता स्वासामह पारस भारी। पांचतत्व सङ्ग देह सँवारी ॥
उपजीं कन्या अगम स्वभावा। अष्टांगी कहि पुरुष बुलावा ॥
आठो अङ्ग बना निरवाना। शोभा सुरति रूप सुख साना ॥
जब कन्या प्रभु देखा हेरी। कला अनंत रूपकी ढेरी ॥
देखि रूप चितहर्षित कीन्हा। उत्पति पारस तासंग दीन्हा ॥
जानै शब्द मूल रहि वासा। सुरति निरति कीन्हा तहां पासा ॥
पुरुष रचा जब आपु शरीरा। उपजी सुरति निरति गंभीरा ॥
कायाके दलके व्यवहारा। जो चाही सो सबही सुधारा ॥
दहिने अंग तेज कर दाऊ। बायें शीतल सबै सुधाऊ ॥
मध्यम पुरुष सुरति अंकूरा। ताहि सुरति संग पारस पूरा ॥
ताही दिन तीनों गुण ठयऊ। इंगला पिंगला सुखमन कियऊ ॥

तीनों घर कर तीन सुभाऊ । शीतल तेज सत्यकर भाऊ ॥
अमी अग्रभा तेज शरीरा । उपजे चन्द्र सूर दोऊ वीरा ॥
अग्रतेज औ सत्य सुरंगा । तीन शक्ति उपजी तेहि सङ्गा ॥
कला अनंत शक्तिके पासा । लीला बहुत बिचित्र प्रकाशा ॥
तिनहु संग अहै द्वौ वीरा । इक शीतल इक तेज शरीरा ॥
तीनों शक्ति अंग दोउ वीरा । काया मथिकाथि कहै कबीरा ॥
अभयहि शक्तिहै चन्द्र सनेहा । इँगला नारी सङ्ग उरेहा ॥
उलँगनी शक्ति रहे सुखमरना । चैतन शक्ती सूर्य प्रमाना ॥
सबसे मध्य जहाँ सुरति तरँगा । सुरती निरति कायाके संगा ॥
नख शिखज्योतिविराजे अङ्गा । शोभा विशद मनोहर सँगा ॥
पांचतत्व तिया शक्ती राजै । ताहि सङ्ग दोय वीर विराजै ॥
तत्वरँग शक्तीन घर कीन्हा । तोहि महँ उपजनि पारस दीन्हा ॥
उपजनि पारस भा परसङ्गा । उपजी ज्योति कला बहुरँगा ॥
पँचई श्वासा देह समाई । उपजी रूपकला अधिकाई ॥
जागी देह अँखडित अँगा । शोभित भई कला प्रसँगा ॥
उपजनि अँश पुरुषके सङ्गा । भाखों भेद कला बहु रँगा ॥
जब कायामो आई श्वासा । जागि ज्योति पुहुप प्रकाशा ॥
उपजा रूप अखँडित बानी । बोले बचन पुहुपकी खानी ॥
मधुर बचन और लीला धारी । देखि रूप तब पुरुष दुलारी ॥
हुये मधुर धुनि लीला धारी । वचनरूप लखि आप दुलारी ॥

समय-पांच तत्वातिये शक्ती सँग, चन्द्र, सूर्य दोउ वीर ।
तीनों घर श्वासा रमे, बाहर भीतर तीर ॥

चौपाई ।

उपजी रूप रँग की खानी । बोले अमी विरहकी बानी ॥
उपजी कन्या कला अनूपा । पुरुष उत्पन औ पुरुष स्वरूपा ॥

जेहि पारस सब उत्पत्ति कीन्हाँ। सो पारस कन्या कहँ दीन्हाँ ॥
पारस हाथ महा बल जाना। तब कन्या कह भा अभिमाना ॥
उपजा रंग रोस गंभीरा। बैठी अमी सरोवर तीरा ॥
यहि विधि सोरह सुतनिरमाया। भिन्न भिन्न अस्थान बनाया ॥
जेहिको जेता तन बिस्तारा। तेहिको तैसा लोक सुधारा ॥
काहुको लोक सत्ताइस दीन्हाँ। काहूको सात पांच दशचीन्हाँ ॥
काहू चौदह काहू बीशा। काहू सत्रह काहु उनीशा ॥
काहूके बारह पन्द्रह तीसा। काहू इकइस बाइस चौबीसा ॥
काहू छतीस बतीसहि भारी। दीन्हों वास भए अधिकारी ॥
सब कह दीन्हों लोक बनाई। आपु रहे प्रभु अछप छिपाई ॥
उत्पनि पारस पुत्रिहि दीन्हा। सौंपेउ तेज धर्म सों लीना ॥
ताते धर्म भये बली बंडा। बैठो सात द्वीप नौ खंडा ॥
जिहिं विधि रचना पुरुष बनाई। तैसी कला धर्म निरमाई ॥
रचना रचि मनमें पछिताई। शून्य शरीर जीव कहँ पाई ॥
जीवन बिना जीव नहिं होई। रचि अस्थल बैठा मुख गोई ॥
जेहि विधिरचनापुरुषहि कीन्हाँ। तैसहि धर्म रचा सब चीन्हाँ ॥
पुरुष समान रची अस्थाना। बैठि शून्यमें करे अनुमाना ॥
जेहिं पारस प्रभु लोक बनाया। सो पारस प्रभु कहाँ छुपाया ॥
सो पारस अब कहवाँ पाऊँ। जेहि पारसते जिव निरमाऊँ ॥
हेरत पारस आये तहवाँ। बैठि सरोवर कामिनि जहवाँ ॥
कामिनि धर्म भये एक ठाँऊ। अंक मिलाय कीन्ह बहुभाऊ ॥
शील रंग रस कीन्ह मिलापा। धर्म रोष हो कीन्ह विलापा ॥
करे विलाप कला बहु भारी। मुख चतुराई हृदय विकारी ॥
कामिनिसों कीन्हों व्यवहारा। उपजा रंग रूप रसधारा ॥
धर्म कहैं कामिनिसों बाता। गहै अंग चमकावै गाता ॥

कामनि देह कामकी खानी । बोले मधुर बिरहकी बानी ॥
उपजा मोह महा मद भारी । कामिनि कामकला अनुसारी ॥
देखि कला अनुसार भुलाना । व्याकुल भये रंग अभिमाना ॥
कामिनि देखि धर्म अकुलाना । उपजा रंग रोष अभिमाना ॥
धर्म कहै कामिनिसों बानी । तोरे है पारस सहिदानी ॥
सो पारस अब तुमरे पासा । जाते पूजे मनकी आसा ॥
सो पारस देहु मोरे हाथा । तुमहूँ रहो हमारे साथा ॥
धर्मराय जब कही कुवानी । तब कामिनि चित शंकाआनी ॥
कामिनि कहै धर्मसों बानी । काहे धर्म होहु अज्ञानी ॥
हम तुम एक पुरुषकर कीन्हाँ । तुमकहँ दीन्ह सोहमहुकोदीन्हाँ ॥
हम लहुरे तुम जेठे भाई । हमसों कहा करहु अधिकाई ॥
। एकै नाल कुमारग वानी ॥
बहनिहिं भाइहि होत कुबानी । आगे चलिहै यहि सहिदानी ॥
जब कामिनि कही अस बानी । धर्मराय चित दुबिधा आना ॥
कामिनि चलहु हमारे देशा । कहा करहु मानहु उपदेशा ॥
छल बल करि अपने पुर लावा । तहाँ आनिकै रारि बढावा ॥
धर्मराय कामिनिसों बोला । शोभा सुरति अमीरस डोला ॥
निरखि नैन कामिनिसों बोलै । शक्ति आधीन बैन बहु खोलै ॥
सोलह शशि कला शशि पूरी । तीनों शक्ति कर छूरी ॥
नैन निरखि मूर्ति होय झांके । तत्व निःतत्व आप तनताके ॥
विधि लौलाइवधिक विधि बोले । निरखत अंग २ तनु डोले ॥
अंतरगति विधि विधिहि मनायो । कुमति हाथपर साजनि आयो ॥
विधि वर दीन्ह बुन्द चुक आई । चितमकार एक रच्यो उपाई ॥
याहि पुर एक अचभो ठयऊ । पारसको सुप्रताप जनयऊ ॥
इच्छा रूप हर्ष चित जागी । श्वेत सरोवर वार न लागी ॥

भूल्यो धरम चितहि अकुलाना। ऐसो सरवर मैं नहिं जाना॥
अक्षयअयूनिविधि पारसआना। कहा अचम्भो आनितुलाना॥
देखो तेहि पारसको चीन्हाँ। जेहिते मानसरोवर कीन्हाँ॥
शूर मलीन उदय शशि जोना। बानी बरन अंग तुअलोना॥
जादिन पुरुष रचा तुअदेहा। तादिन मोहिं तोहिं जुरासनेहा॥
मोहिं कारण तोहि पुरुषबनावा। तू कुल मोते अंग छिपावा॥
तोहि कारण मैं रचना कीन्हाँ। रचिके खानि तोहि चितदीन्हाँ॥
मोहिं कारण तोहिं रचना कीन्हाँ॥
देहनात हमरे घर नाहीं। हम तुम रहे एक घर माहीं॥
उत्पाति पारस तुमरे पासा। जाते पूजै मनकी आसा॥
देह सबै हम रचा बनाई। पारस दै तुम लेहु जियाई॥
हम तुम खानि रची बहु बानी। जाते होय ना एको हानी॥
जैसी रचना पुरुष प्रकाशा। तैसी रची लोक रहि वासा॥
जीव सीव रचि खानि बनाई। जाते ज्योति ज्ञान फैलाई॥
(जीव रची सब खानि बनाई। जागे ज्योति ज्ञान फैलाई)॥
लाज सकुचि औ रची सगाई। बरण विचारि छूत बिगराई॥
ठांव ठांव रचि राखी आपा। माता पिता शोक संतापा॥
श्वशुर भसुर औ भमित भाई। शिवशक्ती रचि पूजा लगाई॥
हंसन लाज भाव नात बँधाई॥
रची अचार कपट विस्तारा। तीरथ व्रत प्रतिमा देवहारा॥
(तीरथ व्रत औ नेम अचारा)॥
वेद कितेब धरि फंद सँवारी। रची दीनों दोय पर्वत भारी॥
हुओ दीन हुए राह चलाई। झगरा करै रहै अरुझाई॥
एक एकते रारि बढाई। मुक्तिपंथते रहे भुलाई॥
दोऊ दिन बाँधी मरजादा। रची बाद ममता औ स्वादा॥

एहिविधि रची सकल दुनियाई। लोभ मोह लालच बरिआई ॥
रचिकै खानि करिय रजधानी । राज पाठ सिंहासन ठानी ॥
तुम आद्या अरु हम अभिमानी। बारहखण्ड छह लोकके बानी ॥
(तुम अंश हमही अविनाशी । बारह खण्डछः लोकके वासी ॥)
पाप पुण्य दोए रची अपारा । जाकहँ सेवै यह संसारा ॥
पाप पुण्य दृढ फंदा होई । जामहँ अरुझि रहै सब कोई ॥
योग यज्ञ व्रत संयम पूजा। सोलहमहीं और नहिं दूजा ॥
रची क्षुधा मायादि विकारा । पुरुष लोकको मूँदिये द्वारा ॥
रची क्रोध माया विकरारा । पुरुष लोकको मुँद्यो द्वारा ॥
पुरुष लोक इहई रचि लीजै । इकछत राज हमहिं तुम कीजै ॥
तुमरे संग है पारस सूरा । जाते होय सकल विधि पूरा ॥
जेहि ते लोक पुरुष प्रकाशा । सो पारसहै तुमरे पासा ॥
सो पारस अब हमको देहू। रंग हमारा सबै तुम लेहू ॥
कामिनी कहै वचन बुद्धि धीरा। उपजेहु कालरूप बलवीरा ॥
जो जो वचन कहेउ तुम भाई । सो हमरे चित्त एक न आई ॥
पुरुष लोक कस मुदा हुदयारा। लेउ श्राप अपने शिरभारा ॥
जो छल हमते कीन्ह हु भाई । तैसो छल तुम्ह भुगतहुं जाई ॥
पारस कामिनि धरा दुराई । हाथ मलै शिर धुनी पछताई ॥
हाथ मिजि छिनाछिन पछिताई। कहै कामिनि धर्महिं समुझाई ॥
कामिनि कहै कुबुद्धि समझाई। हम तुम चलहुं पुरुषपहँ जाई ॥
बकसै पुरुष दयाकरि तोही । शीश नवायके लीन्हेसि मोही ॥
बिन दीयें बरिआई लेहौं । पुरुष लोक पुनि जाए न पैहौं ॥
कामिनि कहा वचन परवाना । धर्मरायके भयो अभिमाना ॥
कामिनि तोरि बुद्धिहै थोरी । अबना जाऊ पुरुषकी खोरी ॥
पुरुषलोक इहई रचि राखा । रच्यौ बिचारिबुद्धि बलभाखा ॥

अब तौ पुरुषत्रास नहिं मोही । गहौं बाहकों राखा तोही ॥
तैं कन्या का डहकासि मोही । रचा पुरुष मम कारण तोही ॥
(तैं कामिनि कठोर निर्मोही ।)
पहिले वचन बिरहते बोली । लागी कठिन कामकी गोली ॥
काम सतावै निश दिन मोही । दे पारसकी लीलहुँ तोही ॥
कामिनि कहै धर्म सुनु बाता । चढि कालिमा तोहरे गाता ॥
हठ निग्रह कामिनि किहु ताही । धर्मराय पकरी तब बाँही ॥
गही बांह कामिनिकी जबही । काम बाण घट व्यापे तबही ॥
धर्मरोष कामिनिपर कीन्हाँ । गहि पग शीसलीलतेहिलीन्हाँ ॥
लीलत कामिनि शब्द उचारा । पुरुष २ करि कीन्ह पुकारा ॥
कामिनिपुरुषनाम जब लीन्हाँ । आज्ञा पुरुष अंशही दीन्हाँ ॥
योगजीत आये तेहि वारा । सुर्त बान सो कालहि मारा ॥
पुरुष कोप ताऊपर कीन्हाँ । कन्या उगल धर्म तब दीन्हाँ ॥
(उगली कन्या बाहेर आई ।)
हाहाकाल रोषके धावा । कामिनि पारस कहां चोरावा ॥
कामिनी कम्प देख विषधारा । पारस मानसरोवर डारा ॥
मानसरोवर झलतै अंगा । गयउ पताल जहाँ जलरंगा ॥
परीक्षा चार पारस परवाना । उपजी चारखान निरवाना ॥
एक परीक्षाते सरबर गयऊ । पारसके सम पारस ठयऊ ॥
दूजो अंश भयो निरबाना । शिला सिंध पर्वत परमाना ॥
रतन शिला ताहिकी धारा । सो पाजी वारे संचारा ॥
तीसर अंश नार प्रगटयऊ । अंशहि अंश चत्रगुन भयऊ ॥
चौथाअंश कामिनि अनुमाना । जाते स्वर्ग नर्क परवाना ॥
अंशहि अंश अंशते मानी । एक प्रती चौगुना उतपानी ॥
चार २ गुण गुणहि समाना । अंशते अंश चत्र परवाना ॥

पारस मानसरोवर माहीं । पारस बुद्धि आपही आहीं ॥
पारस कामी न बहुत दुरावे । सुर्त सनेह तहां फिर आवे ॥
पारस अंत नाहे ठहराई । बासरूप कामिनिसंग धाई ॥
कामिन कालापुरुषपद परसे । पारषनीर नेत्र मह दरसे ॥
नैन निरख मूरत अनुरागी । धर्म अंश कामिनि तन लागी ॥
पारस अंश चितै नहिं डोले । बहुरि २ कामिनिसों बोले ॥
पारस अंशपट रह्या छपाई । निकसी कन्या बाहर आई ॥
जेहिकारण कामिनि हठ कीना । पारस संग छान सो लीना ॥
उत्पति पारस धर्म तब पावा । कन्यारही ताहिके ठाँवा ॥
जब लगि कन्या भई सियानी । तबलगि धर्म रचीसब खानी ॥
खानि वानी रचि कीन पसारा । बेदवाद बहुमत विस्तारा ॥

दोहा-रचना रची लोककी, शशि घर रहा समाय ।
पुरुष नाम जाने नहीं, ताते लोक न जाय ।
(रचा रची लोककी, नख सिख रहा समाई ।)
(पुरुष नाम जाने विना, सत्य लोक नहिं जाई ॥)

चौपाई ।

पुरुष नाम ज्ञानी जो पावे । लोक दीप पलमाँहिं ढहावे ॥
पुरुष नाम जाने नहिं भेदा । रचे खानि चौरासी फन्दा ॥
(चित चंचल औ अन्ध अभेदा ॥)
दुख सुख सबै रचीबहु भांती । जरा मरण पूजाऔ पाती ॥
रचि सब खानिबैठिअभिमानी । तब लगि पुत्री भई सयानी ॥
उपजा जोबन रसको भावा । तब कन्या कहँ विरहसतावा ॥
कामिनी कहे धर्मसों बानी । हमतो तुमरे हाथ बिकानी ॥
सूर्त डोला एके पारस लीन्हा । मदन भुअंगमके वसि कीन्हा ॥
जोबन विरह महामद गाजे । बिनुसंयोग गर्भ नहिं छाजे ॥

मोह महा झर बरषे लागी । मन समाध कामिनि सों लागी ॥
गर्भ किए मा करदीराजा । कामिन सोह दुहू दिशवाजा ॥
मनसालहर उद मद मनभएउ । काम दहन धन आहुत दएउ ॥
उपजा मदन माह औगाहा । पुत्री पितासों भएउ विवाहा ॥

साखी–बहनीसे बेटी भई, बेटीसों भइनार ।
नारीसों माता भई, मनसा लहर पसार ॥

चौपाई ।

बरबस धर्मराय हरलीन्हा । बिन लेखा रजधानी कीन्हा ॥
विषया वेद व्याह जमनाता । चौदह काल संघ उत पाता ॥
चौदह पारस लोक निसानी । शब्द व्याह चौदह यमहानी ॥
मनसा व्याह देव तिषगंधी । हंसना हंस भगत युगबंधी ॥
सुत हंस घट रचो विदानी । धर्म समाध बसाए आनी ॥
उपजा मदन मोह औगाहा । कन्या पिताहि तब भया विवाहा ॥
(कन्याव्याकुल भईतेहि माहा ।)
धर्म रायको उपज्यो भावा । कामिनि हृदय हाथ बतलावा ॥
उपजी रंग रोषकी खानी । कामिनि चरन गहो तब जानी ॥
मनसा लहरि ताहि तेइ दीन्हा । उपजी तीनि लोककर चीन्हा ॥
कामिनि संग करै सुख भारी । उपजा तीनिलोक अधिकारी ॥
तीनहि शक्ति पुरुष संग दीन्हां । तीनों सुत उपजावे लीन्हां ॥
(पांच तत्त्व तीन गुण चीन्हां ।)
तीनहुँ सुत उपजे बहुरंगा । पारस रहा धर्मके संगा ॥
(पारस रहा ताहिके संगा ।)
तीनउ सुत उपजे अधिकारा । धर्मराय तब भया निरारा ॥
(तीनौं सुत कहँ दीन्ही भारा । धर्मराय ऊंच भये निनारा ॥)
राजपाट कामिनि कहँ दीन्हां । आपन बासशून्यमहँ लीन्हां ॥

कामिनि दर्श सदा लौ लावै । राज पाट सब कीर्ति बनावै ॥
(तीनों सुतको राज सिखावै ॥)
राज नीति सुत चित्तहि धरहीं । मनसा ध्यान पिताको करहीं ॥
खोजत खोजत बहु युग गयऊ । पिता पुत्रसे भेट न भयऊ ॥
(ध्यान धरत बहुते युग गयऊ ।)
कामिनि पुरुष एकसंग रहऊ । सूतकी बात पुरुष सों कहऊ ॥
वहांकी बात न सुतसों भाखे । करै दुलार सदा सँग राखे ॥
इहिबिधिबहुतदिवसचलिगयऊ । सुत न खोज पिताकर कियऊ ॥
धरत ध्यान बहुते युग गयऊ । पिताको खोज करत तब भयऊ ॥
मातासौं पूछे सुत बाता । पिता हमार कहाँ गये माता ॥
माता कहै सुतन्हसों बानी । पिता तुम्हार हमहुँ नहिं जानी ॥
रचना सकल हमहीं होई । हमसो दूसरा और न कोई ॥
रचना सब मोहीते होई । दूसर जान परो नहिं कोई ॥
हमही पिता हमहींहैं माता । हमही तीनि लोककी दाता ॥
हमहीं छांडि कोइ दूसर नाहीं । तुम्ह जो पूछहुं सो कहुं कहीं ॥
तीनलोक महँ दूसर नाहीं । माता कपट करै मन माहीं ॥
तब सुत सोच कीन्ह मनमाहीं । पिताका भेद बतावत नाहीं ॥
आपु आपु कह सुत सब रूठे । माता बचन कहै सब झूठे ॥
तब माता कहै बचन रिसाई । पिताको दरश करहु तुम जाई ॥
माता कहै फूल लै धावहु । पिताको शीस परसिके आवहु ॥
पुहुप समाधि वासले धाओ । पिताके शीस परसिके आओ ॥
चले पुत्र पिताकी आसा । पिता रहे पुत्रनके पासा ॥
खोजत बहुत दिवस चलि गयऊ । पिताको दर्श कतहुँ नहिं भयऊ ॥
तीनों सुत सो दरशन भयऊ ।
पिता निकट सुत दूरि सिधाये । खोजत कतहुँ अन्त नहिं पाये ॥

खोजि थाकि माता पहँ आए। काहु साँच काहु झूँठ सुनाए ॥
ब्रह्महि भाषा झूँठ संदेशा। सकुचिबचन नहिंकहेवोमहेशा ॥
भाषा विष्णु सत्यकी रेखा। खोजी थाकि पिता नहीं देखा ॥
माता बिहँसि कही तब बानी। ब्रह्मा झूँठ झूँठ तो खानी ॥
शिव लचाय शिर नीचे राखा। सांच झूँठ एको नहिं भाखा ॥
ताते करहु योग तप जाई। जटा बढाय विभूति रमाई ॥
(तुम सुत करो योग तप जाई। शीस जटा तन भसम चढाई) ॥
लेहु आमण्डल भेषसो कीन्हाँ। शिवको थापि भवानी दीन्हाँ ॥

साखी–जप तप योग समै दृढ, आगे ध्यान पसार।
माना कह्यो क्रोध कारि, चतुर मुख अन्ध अहार ॥

मातहि कीन्ह विष्णु पर दाया। मुखहिं चूमिके कंठ लगाया ॥
सत्य बचन सुत बोलेउ बानी। तीनहु लोक करहु रजधानी ॥
शिव ब्रह्मा करिहैं तोर सेवा। गण गंधर्व ऋषि मुनिदेवा ॥
ब्रह्मा मोसों झूंठ लगावा। तेहि कारण बिधि झूँठ कहावा ॥
ब्रह्मा वेद पढे बहु भांती। कुकरम कर दिवस औ राती ॥
(विद्या देव पढे बहु भांती। कुकरम करै दिवस औ राती ॥)
एहि अवगुण गायत्री गाई। ब्रह्मा दोष शाप तिन पाई ॥
मृत्यु लोक गो धरे शरीरा। अघ भुगते चौरासी थीरा ॥
गोय होय नारी कलयारी। अघ निचोए होए पातक भारी ॥
जहाँलग पुहुप खान परकाशा। निरधिन ठारे तुम्हारो बासा ॥
झूठी बात वेद में निर्माई। च्यार वर्णमें बडी बडाई ॥
पाहिले चारों वरन पुजावे। दक्षिणा कारण गरा कटावे ॥
गरा कटाए करावै पूजा। गायले समे ब्रह्मा नहीं दूजा ॥
लए मूँड पडिवो रमाई। ब्राह्मण भए सो काल कसाई ॥

खाए अखज चले एडाई । जस मडवाको श्वान अघाई ॥
ब्राह्मणहूको झूठी आसा । हरि नहिं भजे न हरिके दासा ॥
कहके विर ब्रह्मा करोए । उत्तम जन्म पाए जड खोए ॥
झूठी बात वेद निरमाई । चार बरण आश्रमहिं दृढाई ॥
ऋषि अगसी सहस्र बखानी । ते ब्रह्माके सुत उतपानी ॥
जेते ऋषि तेते मतधारी । अस्तुति करि हसेब तुम्हारी ॥
ब्रह्मादिक मुनि देव गण भारी । अस्तुति करिहैं विष्णु तुम्हारी ॥
निशिदिनध्यानपिताको धरिहो । किंचित ध्यान जोत अनुसरिहो ॥

साखी–विचलि गयउ निजनामको, गहे कुमारग जानि ।
तीनलोक गुण विस्तरेऊ, निरंजन आदि भवानि ॥

चौपाई ।

कहे कबीर सुनो धर्मदासा । दोऊ मिल एह मत परकाशा ॥
यह सब खेल कामनी कीन्हा । निरंजन बास शून्यभौ लीन्हा ॥
ज्योति निरंजन ध्यान लखाई । शिव ब्रह्माको भेद सुनाई ॥
सेवहु विष्णु निरंजन ध्याना । हेसुत बचन निश्चय मम जाना ॥
ताते ज्ञान अगम फेलाहो । जाते तामस सिद्ध कहाहो ॥
सिद्ध न कामत होइहे भारी । ज्ञान अगम गुण होहि भिखारी ॥
अंश दहन तन तामस भारी । असुरभाव पशु वासु वतारी ॥
मतपा खंड ठगोरी टोना । षट दरशन पाखंड खिलोना ॥
यंत्र मंत्र विखया अधिकारी । अन्तरध्यान भक्त तुव धारी ॥
तव गुण सहस नाम ऊचारिहे । एक अंश चौसठ योगिन होइहे ॥
कर खपरलें मंगल गेहे । यह उपदेश महादेव देहे ॥
(शंकर चिह्न इहे सो पेहें ।)
रजरुचि सतगुन दया समानी । असुरहतन भक्तन रजधानी ॥
आगम कहो संघमुनि लीन्हेउ । जहाँ जसभाव तहां तस कीन्हेउ ॥

चारि खानि अण्डे निरमाई। चामहि त्वचा लुच लै लाई॥
शिवको वरन भेद नहिं होई। क्रोधरूप धरि भेष विगोई॥
मात विष्णुपर दाया कीन्हाँ। पिता दिखाय निकटहि दीन्हाँ॥
(अनुभव दया विष्णु पर कीन्हीं।)
पिताको दर्श विष्णु जब पावा। तब माता कहं शीस नवावा॥
माता पिता एक ह्वै गयऊ। विष्णु देखि चितहर्षितभयऊ॥
माता पिता एक मिलि गयऊ। विष्णुसमाय ज्योतिमहँगयऊ॥
तेहि पाछे जग सिरजे लेऊ। ताको वरण सविस्तर कहेऊ॥
प्रथमें चारि खानि निरमाई। लक्ष चौरासी योनि बनाई॥
चारि खानिकी चारिउ बानी। उपजी तीनिलोक सहिदानी॥
चारि खानि रचि कियो पसारा। चारि वरण पाषंड सँवारा॥
(चौदहभुवन करचो विस्तारा।)
लक्ष चौरासी योनी कीन्हाँ। चारिखानि महँ एकही चीन्हाँ॥
लक्ष चौरासी बचन बखाना। चारि खानि जीव एकै साना॥
रचना रची सखा बहु रंगा। सुर नर मुनि गणकामतरंगा॥
कामदेवकी कला अनंगा। पशु पक्षी सुर नर मुनि संगा॥
कामकला सबही भरमावे। शिव शक्ती संग काम लगावै॥
उत्पति प्रलय रची अबिनाशी। कामिनि कामकालकी फाँसी॥
कनक कामिनि फन्द बनावा। तेहि फंदे सबही अरुझावा॥
कनक कामिनी फन्दा कीन्हा। चार खानिमें एकै चीन्हा॥
नर बानर कीट पतंग सँवारी। सबके सँग करै रखवारी॥
(नर नारि जत खान सँवारी। सब घट काम करै रखवारी॥)
पशु पक्षी जत कीट पतंगा। रक्षक भक्षक सबके सँगा॥
स्वासा सार होय गुँजारी। पांचों तत्त्व सँग विस्तारी॥
पांचों तत्त्व जुरे बल जोरा। तापर चढे साहु औ चोरा॥

चारिउ खानि होय गुजारा । स्वासा चलै अखण्डित धारा ॥
देहदशा जस पुरुष सवारा । तैसी देह रची करतारा ॥
पांच तत्त्व तीनों गुण साजा । आठ काठ पिंजरा उपराजा ॥
(अष्टधातु पिंजरा उपराजा ॥)
पिंजरा में सुगना एक रहई । वाकी गति मंजारी लहई ॥
(यामध्य सुवना एक रहई । दावपरे मंजारी गहई ॥)
सुगना पढै दिवस औ राती । रक्षक पिंजरा ऊपर सँघाती ॥
रक्षक भक्षक संग रहावै । सदा पढावे घात लगावै ॥
(एक घातक यकसुआ पढावै ॥)
जस सुअना पिंजरा महँ गहई । ऐसो देह प्राण दुख सहई ॥
नख शिख रचा काल फुलवारी । फूली वास कुवास सवारी ॥
कनक कामिनि काल बनाई । चारि खानि महँरहा समाई ॥
कामिनि काम सँवारे जानी । चारि उब खानि रहा विकशानी ॥
चारि खानि मह श्यामअमाना । काल कुटिलतेहि माहि समाना ॥
काल कलाकी खानि बनाई । शिव शक्ती महँ रहा समाई ॥
(दया क्षमाकी खान बनाई । नर नारि महँ रहा समाई ॥)
सुरनर मुनि सबही कह डहके । चारिखानि सबके घट महके ॥
चारि खानिकी सब उतपानी । जेतिक तीनि कोक सहिदानी ॥
तीन लोक स्वासा विस्तारा । स्वासाते भा सकल पसारा ॥
स्वासा संग काल अवतारा । बिष अमृत दोनों संचारा ॥
श्वासा संगम कालऔकाली । श्वासा संग भये वनमाली ॥
प्रकृति पचीस संग जंजाली । पंच पंचदश माल तमाली ॥
चन्द्र सूर श्वासा संग पूरा । इंगला पिंगला सुष्मनि जोरा ॥

दोहा—श्वासा सँग स्वासा, तेहिते उपजा बारि आर ।
चन्द्रसूर्यहै श्वासामध्ये, सकलविधिविस्तार ॥

शिव शक्ति सुखधामहै, जोचितज्ञानसमाय।
सुखसागर अभिरामहै, कालत्रासढरिजाय॥

चौपाई।

चन्द्र सूर जीवन सहिदानी। शक्ती शिवकी उपजे खानी॥
(संयोग जढ चित विदानी॥)
एक संग विष लहरी समानी। एक संग बसे अमृतकी खानी॥
एक संग मन बसे अपारा। एक संग अमी जीव रखवारा॥
एक संग काम क्रोध दुखभारी। लोभ मोह पाषंड विकारी॥
अहंकार लालच औ ममता। घिन्न औछतिलाज प्रतिहता॥
एते एक वीरके साथी। माया मद जस मैगर हाथी॥
एक संग शीतल शीलसुभेषी। इक संग छैमा सुबुधि विशेषी॥
एक संग भक्ति रहे हितकारी। ज्ञान विवेक संतोष सुधारी॥
दया दीनता निर्भय रमता। धीरज मतीसहज सुधि समता॥
दुई घर दुवो राव कर वासा। इक घर राहु केतु प्रकाशा॥
राहु अमावस सूर्यहि ग्रासे। ग्रासे केतु पूरणीमा चंद्रहींफाँसे॥
दोउ करे यहि भांति बसेरा। खन बाहर खन भीतर डेरा॥
(दोउ करै एक नगर बसेरा॥)
एकहि रथ दोऊ असवारा। बाहर भीतर मध्य दुवारा॥
पांचों अविचल तुरे तुषवारा। ता ऊपर है जीव असवारा॥
एक तुरे पियरे पट नेहा। एक नील रंग है देहा॥
कुवेत एक लाल बहु रंगी। एक सबुज हरियारे अंगी॥
एक श्याम मुश्की रँग भारी। पांचों एकते एक अधिकारी॥
(एक श्याम वदन रूपचारी। आप आप पांचों अधिकारी॥)
पांचों बसे एकही संगा। एकही रथ मन जीव सुसंगा॥
एक तब ले पांचों वासा। दाना घास पानीकी आसा॥

पांचों पांच घाट जल पीवै । दाना घास खाए सुख जीवै ॥
पांचों तुरै पहली पल धावै । छिनबाँधहि छिनछोरि कुदावै ॥
छिनबाहिर छिनभीतर आवाहि । पांचों पांच ढुंड फिरि धावहि ॥
(सरवर पार सो तवे ले आवे । सकल पराश तव ले आवे ॥)
इहिं प्रकार जाही ओर आवाहि । कोइ नियरे कोई दूरिसिधावहि ॥
सुरंग तुरै जो जन भारि जावै । मुसाकि योजन डेढ सिधावै ॥
हरियर दुइ योजन पर जावै । योजन तीन पाति पहुँचावै ॥
हंसा चारि योजन जो जावै । फिरिके दंडवत बेलै आवै ॥
(श्याम रंग आवै नहिं जाई ॥)
यहि विधि पांचों आवै जाहीं । अपनि अपनिमंजिलके माहीं ॥
पांच तुरै रथ एक सुधारा । ताऊपर मन जीव असवारा ॥
जीव पराहै मनके हाथा । नाच नचावै राखै साथा ॥
पांचौ तुरै होय असवारा । घेरे काल कलीके द्वारा ॥
यहि धोखा गहि जीव भुलाना । सत्य शब्दको भाव न जाना ॥
सत्य लोकके तुरै तुखारा । ता ऊपर सतगुरु असवारा ॥
हाहाकार करै चहुँ भाती । करै शिकार दिवस औ राती ॥
रथ ऊपर चाढि तुरो कुदावै । मारि जनावर लै घर आवै ॥
मारै बाण जान पर तानी । नख शिख वेधै घाव न जानी ॥
ताहि जनावरके शिर नाही । रुधिर मांस देह नहिं ताही ॥
देखत देहदृष्टि नहिं आवै । बिन देखे असमाने धावै ॥
(बिन देखे असमानहि धावे । ता धोकेमें जिव डहकावे ॥)
ऐसा देखो जनावर जोरा । बन औ नगर करै घनघोरा ॥
ऐसो विषम जनावर भारी । मारि पारधी लीन्ह संभारी ॥
मारि जनावर नगर बसावै । वाहि ओड देहे बिलमावै ॥
एक नगर दुइ रहे नरेशा । भिन्न २ दोनों कर देशा ॥

ताहि नगर दुइ महल बनाये। दुइ दरवानी तहाँ रहाये ॥
महा बिकार दोउ दरवानी। दोऊ रायकी सेवा ठानी ॥
करै उतपन्न दोऊ रजधानी। धर्म धीर औ आदि भवानी ॥
जो कछु उत्पति शहरमें होई। सो सब बाँटि लेहि नृप दोई ॥
बाँटि खजाना धरै दुराई। लेखा खरच उठावहि राई ॥
लेखा जानि खरच उठाई। लेखा खरच उठावे आई ॥
एक हवेली दश दरवाजा। अहुठ हाथ गढभीतर राजा ॥
राजा प्रजा सबेहि रहावै। इकछत राज चले नाहिं पावे ॥
दोउ राहुके शहर बताऊँ। बाहर भीतर प्रकट दिखाऊँ ॥
एक घर बसै मोह नृप भारी। ताकी साज विषय अधिकारी ॥
दूसरे घर विवेक बलधारी। ताकी सात सबै हितकारी ॥
इकघर राजा एकघर रानी। बिधि सँयोग मिलावै आनी ॥
एकघर सूर एकघर चन्दा। एक तेज विष अमृत मन्दा ॥
इकघर शक्ती इकघर शीवा। इकघर मन एकघर जीवा ॥
इकघर पाप एकघर पुन्नया। इकघर साँच एकघर शुन्या ॥
इकघर भक्षक बसे अपारा। इकघर रक्षक है रखवारा ॥
इक राजा कर रक्षक नाऊ। रक्षा करै सदा सब ठाऊ ॥
एक राजाकर भक्षक नाऊ। भक्षै सबै न छांडे काऊ ॥
दूनौं नृपति एकपुर माहीं। एकरथ चढै एक सङ्ग ताही ॥
प्रथमहि भक्षक होइ असवारा। तहां जाय जहां है करतारा ॥
विषम सरोवर पहुँचे जाई। पैठि विषम जल माहिं नहाई ॥
करि असनान तीर्थ परसै। झांई झलकि ज्योति तहँ दरसै ॥
दुइ प्रतिमाको दर्शन पावै। आदि निरंजन ज्योति दिखावै ॥
काली कालरूप विस्तारा। नाना रंग तरङ्ग अपारा ॥
देखि रूप मन हर्ष समावे। ज्यों पतङ्ग दीपक कहँ धावै ॥

देखत बहुत सुहावन ज्योती । नाना रङ्ग लागे बहु मोती ॥
जब परसै तब तेज अपारा । लागे आंच महा बिष झारा ॥
सो विषलै भक्षक घर आवै । आनि जीव कहँ घोरि पियावै ॥
विषपिलाय जिव घात लगावै । रथते उतरि आपु घर आवै ॥
जब विष चढे आप बिसरावै । तब रथ चढिके रक्षक धावै ॥
रक्षक दूरि देश कहँ धावै । विषम सरोवर पार सिधावै ॥
विषम सरोवर तजि है पारा । जाइ जहां सतनाम पियारा ॥
अमर चोलना देखे जाई । चरण स्वरूप महँ रहे समाई ॥
परसै सुरति नामकै पाया । मिटे जहर भइ निर्मल काया ॥
दया तूरे चढि उतरै पारा । परसै अमी तत्त्व विस्तारा ॥
अमी तत्त्व तूरै जब परसै । अग्र ज्योति अखंडित दरसै ॥
वरषै अमृत अग्रही धारा । पिवे जीव विष होय निनारा ॥
सुख सागरमें सुधारस पीवै । लै अमृत फिरि घरहि सिधावै ॥
घरमों आइ रहा ठहराई । अग्र अमी घर राख छिपाई ॥
घरी आध घर माहि जुडावै । भक्षक जहर बहुरि लैआवै ॥
फेरि जहर जीवहि पहुँचावै । जीव मुग्ध होइ अमी गँवावै ॥
जब भक्षक विष जीव पिआवै । फिरि रक्षक अमृतकह धावै ॥
एहि विधि रक्षकभक्षक धावहि । एक विष एक अमृत लावहि ॥
विषम सरोवर भक्षक जाई । रक्षक सुख सागर पहुँचाई ॥
इहिविधि दोऊ करै रजधानी । इक दारुण इक शीतल बानी ॥
जादिनघर बिधिने दुइकीन्हा । तादिन सौंपि खजाना दीन्हा ॥
दोइ नृपतिके दोइ स्वरूपा । राखे दाम चन्द सूर भूपा ॥
इकघर सूर्य एकघर चन्दा । इक दुख दारुण एक अनन्दा ॥
सकल समाज दोऊके हाथा । अविधि समान खजाना साथा ॥
भमर मता दोऊ घर भारी । श्वासा सार सुधारी सुधारी ॥

बाँटिके दाम दोउ घर दीन्हां । अमृत विष निशवासरकीन्ह ॥
रचि खानी बहुरंग अपारा । देह माँहि बहु देह सुधारा ॥
(रचि देह बहुरंग अपारा । विष अमृत बहु रंग अपारा)॥
अष्ट देह एक देह मझारा । बाहर भीतर मध्य दुआरा ॥
(अष्ट देह यदि देह मँझारा । बाहर भीतर मध्य अखारा) ॥
चारि विमल हैं चारि तरंगा । चारि सुरंग एक बहुरंगा ॥
(चारि विमलहैं फटिक तरंगा । चारि सुरंग श्याम बहु रंगा ॥)
दुइ उज्वल हैं बाहर बासा । दुइ उज्वल दलमध्य प्रकाशा ॥
(दुइ उज्वल दल मध्य प्रकाशा । श्याम सुरंग अधर दुइवासा ॥)
श्वासा सुरंग अधर दुइवासा । जरद नील घरमाहिं निवासा ॥
बाहर दुइ सफेद बहुरंगा । रूप अनन्त सतशक्ती संगा ॥
पार बसै सत्व सुकृतको डेरा । मध्यमें विषम सरोवर घेरा ॥
निस्तत्त्व कमलसुकृत सत्यबासा । विषम सरोवर कालनिवासा ॥
पुहुपदीप साहेबको बासा । सुखसागर ज्ञानी रहि बासा ॥
ताके ओर काल उच्छ्वासा । मानसरोवर काम निवासा ॥
ताके ओर कालकी आसा । विषम सरोवर धर्म निवासा ॥
सबके डरे निरंजन बासा । धरमदास तुम लखो तमाशा ॥
धर्मराइ मुख पौन उडाई । विषकी लहरिध्वजा फहराई ॥
ज्ञानीके मुख ज्ञान प्रकाशा । अमरसार सुधा रहि वासा ॥
गुप्त झंझरी पुरुष बनाई । अक्षै अमान ध्वजा फहराई ॥
प्रकट झंझरी काल प्रकाशा । तेजपूंज विविधि रहिवासा ॥
जो रचना बाहरकी भाषा । सो रचना भीतर रचि राखा ॥
जो भीतर सो बाहर दरशै । तत्त्वहि तत्त्व तत्त्व तहँ दरशै ॥
तत्त्व कि रथ चढि बाहर आई । अमीकी रथ तहाँ परसै धाई ॥
क्षण बाहेर क्षण भीतर आवै । सतगुरुमिलै औ सहज बुझावै ॥
(निरखि परखि जब डेरे जाई ।)

चारि तीर्थमहँ प्रतिमा भारी । सत्यसुकृत तहँपुरुषअरुनारी ॥
स्वासा संयम राह सुधारी । देवल चारि देव हैं चारी ॥
घट भीतर घट राह अपारा । चन्द सूर्य ताके रखवारा ॥
उतर चँद तीरथ कहँ धावे । परसि तीर्थ अमृत ले आवे ॥
एकजीव दुइ अंग समाना । चंद्र सूर्यके हाथ बिकाना ॥
दक्षिण स्वर तीरथको धावे । तीरथ परसि जहर लै आवैं ॥
शुक्लपक्ष पूनो जब आवे । तबही जीव चंद घर आवे ॥
जलरँग तत्व चँद असवारा । सो परसै धाइ अमृत रसधारा ॥
जीव चंद्रके साथेहि धावै । योजन चारि पार पहुँचावे ॥
करि असनान पुरुष पग परसे । निर्मल ज्योति अखंडितदरसे ॥
जब फिरि चंद्र सरोवर आवे । बहुरिजीवसँगहि फिरि धावे ॥
आवत जात बार नहिं लावे । पल पल जीव दरस तहांपावे ॥
कृष्णपक्ष अमावस जब आवे । तब फिरि जीव सूर्य घरआवे ॥
सूर्य तेजपर होइ असवारा । बरसे अग्नि अखण्डित धारा ॥
जाय निकासि योजन परवाना । विषम सरोवरकरै अस्नाना ॥
परसै देव निरंजन पाई । लागे झार जीव कुँभिलाई ॥
जीव सूर्य फिरि कमल समावे । पल बाहर पल भीतर आवे ॥
सूर्यसंग विष पीवें अघाई । मूर्छित होय चंद्रघर जाई ॥
जाय अमावस परिवा आवे । चढि रथ ऊपर चन्द्र सिधावे ॥
वायु तत्वपर होय सवारा । चले चंद दुई योजन पारा ॥
विषम सरोवर पार सिधावे । मान सरोवर पारस पावे ॥
नागिनि एक सरोवर माहीं । पीय अमृत विष छांडे ताहीं ॥
सो विष खाय चन्द्र घर आवे । अमृतकी कछु खबर न पावे ॥
पल पल करे तीर्थ अस्नाना । भीतर बाहर एक समाना ॥
अमृत रहे भुजंगिनि पासा । भीतर बाहरएक प्रकासा ॥

सोइ विष लेय तीर्थको आवै । चंद्र कमल पर जाय समावै ॥
एहिविधि चंद्रपक्ष चलि जाई । पाछे जीव सूर्य घर जाई ॥
पूनिमा बीते परिवा आवै । तब रथ चढिके सूर्य सिधावै ॥
सुरंग तुरंगपर होय असवारा । योजन तीनि जाय चढिपारा ॥
सुखसागरमें पैठि नहाई । परसै योग सँताय न पाई ॥
अमृत मानसरोवर माहां । कामिनि दूरि धरै बोले ताहां ॥
सो अमान सुखसागर माहां । सूर्यके संग पीवे जिव ताहां ॥
पिये अमी जिव सूर्यके संगा । मिटै तपत होय शीतलअंगा ॥
पल भीतर पल बाहर आवै । पीवै अमी रस तेज समावै ॥
जबही सूर्य अमीरस पावै । चंद्रहि पकरि आपु घर लावै ॥
जब चंदा आवै रवि द्वारा । होइ संक्रमण तेज अपारा ॥
तेज किरण पूरण जब होई । दरसहि काल तपै रवि सोई ॥
तपै तेज बाहरको धावै । सुखसागरमें पइठि नहावै ॥
सुखसागरमों कर अस्नाना । उदितकमलहोइ द्वादश भाना ॥
सूर्यपर चंद होय जब जोरा । तब घर काल करै घनघोरा ॥
चंद्र सूर्य कह राहु जो फाँसे । पल चंदा पल सूर्यहि ग्रासे ॥
इहि विधि देइ दुइनको बाजी । पूनम धरिहि अमावस साजी ॥
चंद्र सूर्य ले जाय अकाशा । सुखमुनिकेघर दोउकहफाँसा ॥
मुसकि तुरोपर होइ असवारा । घेरे शशि सूर्य अकाशकेद्वारा ॥
जंबूद्वीप काल अस्थाना । सहज शून्य कह करै पयाना ॥
सहज शून्यमहँ पहुँचे जाई । सहज रहावे संग लगाइ ॥
योजन डेढ सहजकर बासा । तहवाँ करै काल रहवासा ॥
सहज कालसों अंतर नाहीं । जीवहि छलै सहजकी बाहीं ॥
पलमें जंबूद्वीपहि आवे । पलमहँ सहज शून्यकहँ धावे ॥
एहिविधि चंद्र सूर्य दोइ फांसे । काल सहज होय जीव गरासे ॥

चंद्र सूर्य दोउ अमृत पावे । काल सहज संग बाए लगावे ॥
बाए लगाय क्षुधा लेइ छीनी । जहर देइ जिव बुद्धि मलीनी ॥
जीवहि सदा कालकी आसा । तजि अमृत विष करहीग्रासा ॥
कालहि राहु केतु होइ आवे । कालहि चंद्रहि सूर्य सतावे ॥
कालहि अमृत जीवसों लेई । कालहि जल थल बाजीदेही ॥
कालहि ग्रहण ग्रसतहै जाई । देइ विष अमृत लेइ छुडाई ॥
कालहि आगे पाछे धावे । कालहि रचै काल बिगडावे ॥
कालहि चारि खानि रचि राखा । कालहि सब घट बोलै भाखा ॥
घट २ काल करै रखवारी । एक देह दुइ अंग सँवारी ॥
एकअंग चंद एक अंग सूर । श्वासा पारस हाल हजूर ॥
इकइस हजार छःसै श्वासा । इतने एक घरी परकाशा ॥
निशिवासर बीते युग चारी । दुओं अंग श्वासा संचारी ॥
दशहजार आठसै भारी । श्वासा चंद सनेह सुधारी ॥
जेतिक श्वासा चंद्र सनेहा । तेतिक चलै सूर्य सँग नेहा ॥
दशहजार तीनिसै घाटी । चलै चन्द्र अरु सूर्यकी बाटी ॥
दुइ हजार दुइसै अधिकारा । ताको भेद एक विस्तारा ॥
मध्यद्वार सहजके जाई । ता सुन्नह मों रहै ठहराई ॥
बाईस हजार चारिसे ऊने । जाप जपै जिव आप विहूने ॥
एकजीव तीनों घर संगा । राहु केतु शशि सूर्य अनंगा ॥
जाप जपै और तीर्थ नहाई । परसै देवल देय सहाई ॥
जब जिव सत्य सुकृत पग परशै । तबनिज ज्योतिअखंडितदरशै ॥
जब जीव आदि निरञ्जन दरशै । हीरामें ज्योति तत्व जसपरशै ॥
तासु भेद मैं कहौं बनाई । ग्रसिले गगनरु क्षुधा छुडाई ॥
जब परिवा पूनमकी साधी । तब चंद्रहि लै आवहि बाँधी ॥
राहुकाल होइ जाय समाई । अमृत छोडि पीवै दुखदाई ॥

चन्द्रके सुगमें जीवहि ग्रासे। ग्रहण लगाय शून्यमहँ फाँसे ॥
राहु काल जिव चन्द्र समाई। विष तजि अमृत होइ छुडाई ॥
इहिविधि राहु चन्द्र कह घेरे। गहन गरासि ज्ञान कह फेरे ॥
अमृत छंडि विष संग लगावै। ज्ञान गमी उपजे नहिं पावै ॥
इहि विधि सूर्यहि केतु गरासे। अमृत हरि विष तेज तरासे ॥
इहि विधि दोउ संतावै काला। ता सँग जीवहि करै बिहाला ॥
जब चंदा कह राहु गरासै। करमकाल व्याल होय फाँसै ॥
उग्र होत है श्वास विवेखै। शशि औ सूर्य दोऊ घर देखै ॥
छंडे केतु आप घर आवै। अपने घरमहँ सूर्य समावै ॥
सुरंग तुरेपर बाहर जाई। सुखसागर महँ पैठि नहाई ॥
योग संता इनके पग परशै। निर्मल ज्योति अखंडित दरशै ॥
अमृत पीवे तेज बल पावै। पल पल पीवै बहुरिघर आवै ॥
आपुहि मह विष अछप छिपावै। बहु विधि अमी सुधारसपावै ॥
पल भीतर पल बाहर जाई। जीवका मूल परासिसुखहाई ॥
पुनि जो चलै सूर्यकी श्वासा। पूरण तत्व तेज परकासा ॥
कबहूँ सूर्य चन्द्र घर जाई। चन्द्रहि लाभ सूर्य पछिताई ॥
ज्योंलगि रहै चन्द्रघर सूरा। तब लगि अमी अमान हजूरा ॥
इहि विधि तत्व छानि जबआवै। विद्वत्पुरुष हो अधिक पढावै ॥
चन्द्र सनेह जीव तब पावै। पावै जानि भव बहुरि नआवै ॥
शशि औ सूर्य ग्रहण जब होई। तब देखै तन भेद बिलोई ॥
ग्रहण ग्रासि छंडे जब क्रूरा। तब घर आवै शशि औ सूरा ॥
अपने अपने घर जब आवे। तब नाहिं कोई तत्व गवावै ॥
एकके घर एक जब आवै। कोइ जीते कोई तत्व गवावै ॥
ग्रहण ग्रास होत जब जानै। तै शशि घरही सुरले आनै ॥
शशि घर आवै शशि घरजाई। अग्रबास बासै लौलाई ॥

पुहुपबास तिल राखे छाई । तबके बासना बाहर जाई ॥
पुहुपके भीतर बास रहाई । सोई बास बाहर महकाई ॥
बाहरते भीतर ले आवे । ताके भीतर आनि समावे ॥
ताते वासन बाहर जाई । तिलके भीतर है ठहराई ॥
तिलते बासन बाहर आवे । बाहरते जो भीतर समावे ॥
भीतर वेधि एक जब होई । बास तेलमो रहै समोई ॥

समय-तौ लगि वासबहुत विधि, ज्यों लगि परैना तेल ।
तेल लाजछाडिकेडारै, दुइ मिलि होय फुलेल ॥

चौपाई ।

बास तेलमहँ रहे समाई । तेल छाड़ि नहिं बाहर जाई ॥
तेलके संग बास महकाई । बास के संग तेल रहु छाई ॥

समय-लहा बास जहाँ तेल रहु, जहां तेल तहाँ बास ।
एकै संग दूनों बसौ, महकै बास सुबास ॥

चौपाई ।

इहिविधि रहै दोऊ इक ठाऊँ । एकै बासना एक सुभाऊ ॥
बाहर कहि जब अंग लगावे । दुहे प्रतिमाको रूप दिखावे ॥
सुरतिफूल मन तिलकी खानी । नाम बास जीव तेल बखानी ॥
बाहर फूल भीतर फुलवारी । रवि शशि करे दोयरखवारी ॥
तिलफूले बिखियाकी खानी । दिनफूले निशि गिरतनजानी ॥
ऐसो फूल कृत्रिम उपराजा । तत्व तेल सबमध्य विराजा ॥
सोई तत्व मो अग्र सनेहा । तत्वहि तत्व मिले तिल देहा ॥
तिल औफूल एकसम कियऊ । तेहि पाछे पुनि प्राणबसियऊ ॥
दुख दीयते निकसेउ तेला । फुल देह तजि भएऊफुलेला ॥
इहि विधि गुरू शिष्य जो होई । मुक्ति पंथ पावे पुनि सोई ॥
धर्मदास यह अद्भुत बानी । कहीविचारिसुकृतसहिदानी ॥

उत्पातिकी गति सब हम पाई । परलैकी गति कहो बुझाई ॥
रक्षक भक्षक एकहि सङ्गा । कहो विचारि दोऊको अङ्गा ॥
जब साहब शिवशक्ति बनाई । सो तो गम्य सबै हम पाई ॥
सो शिवशक्ति काल रचिराखा । दोनों अङ्ग धरि प्रकटी भाखा ॥
कामरूप विष बाण बनाया । कला अनंतधारि प्रकटी काया ॥
घर घर शिवशक्ती सुत नारी । बिरह वियोग सोग सुख भारी ॥
नाना रूप रंग उपराजा । उपजनि बिनसनि सुखदुखसाजा ॥
कुल व्यवहार सकुच औ लाजा । नात गोत रस लीला साजा ॥
चारिखानि बानिधारि गाजा । चारि बरण औ शर्मउपराजा ॥
लाज वरन कूरी कुल काजू । योग यज्ञ व्रत दान समाजू ॥
संपति बिपत रंक औ राजा । अन्न वस्त्र माया उपराजा ॥
सब ऊपर मन आपु बिराजा । मनबसि होय सैर सब काजा ॥
मन इन्द्री महँ भोग संयोगा । मने स्वाद औ स्वाद वियोगा ॥
मनहरता मन करतासोगा । मने रोग औ दुख सुख भोगा ॥
मनते कोई और ना दूजा । मनसाहब मन सेवक पूजा ॥
मनदेवल मन प्रतिमा साजा । मनपूजा मन तीर्थे विराजा ॥
मन शिवभक्ती बिरह अपारा । रुधिर बिंदु मन सिरजनहारा ॥
मने जियावन मरने हारा । मनहिअशुभशुभ कर्म व्योहारा ॥
कर्मो कर्म मनहिते होई । भोग करै भुगतावे सोई ॥
मन भर्मित मन चेतनहारा । चारि खानि मन खेल पसारा ॥
मनशीतल मन तेज अपारा । मनश्वासा मन बोलनि हारा ॥

समय-चन्द्र सूर्य संग मन वसै, शुभ अशुभ मन आहि ।
श्वासा श्वासा मत बसै, कहि बरण गुण ताहि ॥

चौपाई ।

खानि खानि मनहोयअसवारा । फैलि रहा मन अगम अपारा ॥

चारि खानि मन रहा समाई। चारि चक्र चढि बोलै आई॥
रोम रोम मन रहा समाई। आपहि मारै आपहि खाई॥
आपहि भिक्षुक आपहि दाता। आपहि ईश्वर आपु बिधाता॥
आपहि चोर आप रखवारा। आपहि रचै आप संहारा॥
आपहि सीखै आप बिसरावै। आपहि मेटै आप बनावै॥
आपहि अन्ध आप डिठिहारा। आपहि ज्योति आप उजियारा॥
आपहितिमिरआपअँधियारा। आपहि मास पक्ष व्यवहारा॥
आप निरक्षर अक्षर होई। गुप्त प्रकट होय बोलै सोई॥
नानारङ्ग ज्योति दिखलावै। आदि अन्त मन मनहि समावै॥
मनही नाद शून्य महँ बोलै। मनहि ज्योति शून्य मह डोलै॥
मनही कहसब ध्यान लगावै। मनको अंत न कोई पावै॥
मनहि शास्त्र वेदहै चारी। तीनलोक मन कथा पसारी॥
निर्गुण सगुण मनहीकी बाजी। कवी पुराण कोकमन साजी॥
ब्रह्मज्ञान कथिमनहि सुनावै। आपु छिपाय दूसर दिखलावै॥

समय–आदिअन्तमन कर्ता, चारि खानि मनबास।
बन्द छोरि करी मोपै, कहू मंत्र प्रकाश॥

चौपाई।

सुनहुँ सँदेश हंसपति आगर। पुरुष पुराण हंसपति सागर॥
सुरति पुरुष हंसनके नायक। ज्ञान अनूप सुनी चित लायक॥
कहो अग्र आग्रकी खानी। कहो ज्ञान विज्ञान बखानी॥
चारखानिके श्वासा जेती। कहो बिचारि चलै दम तेती॥
अचल खाानि प्रथमहि विस्तारा। तेहि पाछे पिंडज अनुसारा॥
तिसरे अंडज खानि सँचारा। चौथे ऊषमज रचा अपारा॥
चारि खानिको रचना भारी। चारिखानि संगहि अनुसारी॥
प्रथम खानि सतसुकृत कीन्ह। रचना रचे निरञ्जन लीन्हा॥

प्रथम अक्षय वृक्ष प्रभु कीन्हां। अक्षय बट है ताकर छीन्हां॥
आदि अन्त पिंडज अनुसारा। जाते जग शिव शक्ति सुधारा॥
तिसरे अंडज अर्ध निवासा। जाते जग पंछी परकासा॥
चौथी खानिअमी रजकीन्हा। तेहि संयम उषमजकर चीन्हा॥
चारि खानिकी चारिऊ बानी। श्वासा नेह देह सहिदानी॥
चारि खानि मह एकै श्वासा। कहु खंडित कहुँ पूर प्रकाशा॥
अचल खानिकी श्वासा भारी। चालि तीस पांच अधिकारी॥
गिनती सौ हजार और लाखा। श्वासा अचल खानिमह राखा॥
चारि पहर चारिऊ जग भारी। तीनि पहर श्वासा अधिकारी॥
एक पहर वह उनमुनि रहै। ताते काल न आतुर गहै॥
तीन तत्त्वकी रचना भारी। अचल खानिकी देह सुधारी॥
धरती तत्त्व भास अस्थूला। जल औ तेज ताहि कर मूला॥
बांए आकाश नहि रहिवासा। ताते जड अचल खानि परगासा॥
तत्त्व बिहून देह अनुसारा। तातै जड नाहिं वचन उचारा॥
गहन ग्रास होत नहिं ताही। ताते बहु विधि बाढत जाही॥
जाको गहन गारसे काला। सो नाहिं बाढे बोलि बेहाला॥
अचलखानि बहुभांति सँवारी। नाना रंग रूप अधिकारी॥
कतहूँ छोट कतहुँ बड भारी। कतहूँ साय सरवन सुधारी॥
एक सुक्षम है एक अस्थूला। एक अमृत एक विषकर मूला॥
एक खात पलमह मरि जाई। एकु खातकछु अवधि बढाई॥
इक खट्टा इक कडुवा होई। एक मधुररस खावै सोई॥
एक विसौंइध विषके रूपा। नामाशब्द गुण भेद अनूपा॥
पांच सदा औ पांचौ रोगा। पांचौ औषध पाचौं भोगा॥
पांच वास और पांच कुवासा। पांच पचीस रंग परकासा॥
पांच पानि पांचौ रहि बासा। पांचशुभ और पांच विश्वासा॥

पंच पांच सकल पसारा । पंच रंग श्वासा अनुसारा ॥
तीनि तत्त्व अस्थूल निवासा । तीनि मध्य हुई बाहर वासा ॥
पांच तत्त्व सब इनके पासा । जहँलगिआप लखनि परकासा ॥
पंच तत्त्व तीन गुण साजा । नारि एक तामध्य विराजा ॥
अचल खानिमह कीन्हे वासा । तामध्ये श्वासा रहि वासा ॥
चन्द्र सूर्य बिन श्वासाहीनी । तातै खानि जड भई मलीनी ॥
अचल खानि ताते जड होई । सूर्य चन्द्र नाहिं मध्य समोई ॥
नारी एक श्वासा संग ताहँ । जहाँलै अचलखानि जगमाहँ ॥
नारिसुषुमण अचलघटबासा । ताहि संग श्वासा रहि वासा ॥
ता घट दोई नारी नहीं होई । ताते चन्द्र सूर्य नहिं दोई ॥
इंगला पिंगला नाहिन बासा । ताते रवि शशिनाहि निवासा ॥
चन्द्र सूर्य घटके रखवारा । एहि डोलैं एहि बोलन हारा ॥
चन्द्र सूर्य विन जागै नाहीं । ताते अचल खानि जगमाहीं ॥
दुइ दिन कोइ मास गलिजाई । कोई छमास कोई वर्ष रहाई ॥
कोइ दश वर्ष माह जग राते । कोइ तीस चालिस तन बासे ॥
कोइ पचाससाठिं रहि वासा । कोइ सत्तरी कोई असी नेवासा ॥
वर्ष इकावन कोइ तन राखा । कोइ सौ हजार कोइ लाखा ॥
कोइकोटिकोइअरब निवासा । कोइ पेड चारौ युग बासा ॥
इहिविधिअचलखानिकरभावा । औषधि व्याधि रोग उपजावा ॥
एक सजीवन जडी अनूपा । एक जडी विष तेज सरूपा ॥

समय–कोइ शीतल कोइ तेज है, कोइ पारसकी खानि ।
फूल बिना फल ऊपजै, सब फलफूल समानि ॥

चौपाई ।

इहिविधिअचलखानिऊपजावा । तेहि पाछे अंडज निरमावा ॥
अंडज खानि सजीवक कीन्हा । चन्द्र सूर्य संग जीवन दीन्हा ॥

नख शिख खचोप उपराजा। श्वासा सहज अर्ध धुनिगाजा॥
दुई सूर्य एक सहज घर शुन्या। तिहिं घर कर्म पाप नहिं पुन्या॥
दुई घर इंगला पिंगला भारी। चांद सूर्य संग जीव संचारी॥
ताकी श्वासा शक्ति सुधारी। अमृत प्रसन्नसहज सुख भारी॥
पांच तत्त्व रथ साजी थारा। तापर चंद्र सूर्य असवारा॥
ताके संग जीव उठि धावै। मन तरंग रूप उपजावै॥
सुरंग तुरै पर होय असवारा। सूर्य स्नेह जाए चढि पारा॥
विषम सरोवर पहुँचे जाई। विष धारामें पैठि नहाई॥
करि असनान ध्यान लौ लावै। धर्मराय कह माथ नवावै॥
परसै राय निरंजन देवा। पल मल करै ज्योतिकर सेवा॥
चरण परसि भरमत घर आवै। रवि जीवहि विष आनि पिवावै॥
रवि रथ रहे चन्द्र उठिधावै। तुरै लीला सरवर पहुँचावै॥
जीव सहित शशि पहुँच्यो जाई। मान सरोवर पइठि नहाई॥
करि असनान देवपग परशै। कामिनि देह कमलमहँ दरशै॥
लेके वास चंद्र घर आवै। घर आवत यम ग्रहण लगावै॥
पल पल कमल कमल महनावै। अंडज खानि दर्श नहिं पावै॥
परसै चरण सरोवर दोई। आवत जात न लागे कोई॥
श्वासा नेह देह व्यवहारा। एकलाख औ सात हजारा॥
एतिक श्वासा अंडज खानी। करै कुलाहल बोलै बानी॥
तत्व चले जो जन एक दोई। झाझरि पाटन बसै बिलोई॥
खाज अखाज विचारै नाहीं। भर्मत फिरै सदा भव माहीं॥
पल धरती पल फिरै अकासा। जल थल महिमहँ फिरे उदासा॥
कायाके बहु रूप सवारी। नानारंग वरन विष धारी॥
चञ्चल कुटिल कला मनधरहीं। नाना बानि शब्द उच्चरहीं॥
करै कलपना जगमहँ भारी। नाचै गावै करै खुमारी॥

चढि अकाश तरुवर फलखाहीं। पानी ऊतारि पीवै जग माहीं ॥
जो चन्दा घर चन्दा आवै। तो चन्दा सत्य लोकसिधावै ॥
मान सरोवर पैठि नहावै। विष तजि अमृत घर ले आवै ॥
पुष्प द्वीप होय फिरि घरआवै। पुष्प द्वीपमहँ जाय समावै ॥
एहि विधि चन्द्र ग्रहणको देखे। चन्द्र अंशकी श्वास विवेखे ॥
आयु अंश श्वासा महँ पावे। तो चंदा नाहिं मूल गमावे ॥
अंश जो आयु घरहि फिरि आवै। पूरी तत्व सदा सुखपावै ॥
उग्रह होतै सुरघर आवै। तादिन चंदा मूल गमावै ॥
एहि विधि सूर सतावे काला। ग्रहण गरासि करे जंजाला ॥
उग्रह होतै श्वास विवेखे। शशि औ सुर दोऊ घर देखे ॥
जहाँ पीवै पानी सब आवै। तहां दूतलै फंदा लावै ॥
एक तरुवर बनलासा लावहि। एकजल पीत चुगत सँतावहि ॥
एक पींजरामहँ जी आवहि। रामनाम कह सदा पढावहि ॥
एक अमृत मुकताफल खाही। एकजलाहारफलआनि अघाही॥
एक जीव मारिकै करै अहारा। एक जीव जीवहि कर चारा ॥
एक जोने बल बजाए अधीना। एक उज्वलजल ज्योतिमलीना ॥
जीव एकमत बहुत अपारा। एक उज्वलजल ज्योतिमलीना ॥
श्वासा तेजी ज्ञानगा देहा। काम कलाते बहुत सनेहा ॥
अंडज देह महाबल भारी। बचन बिचार करे सब झारी ॥
शुभ औ अशुभ दुहीहैं ताहीं। एक मधुर एक तेज सुहाहीं ॥
एक सुहावन बचन सुनावहि। एक अपावन सुनत न भावहि ॥
तीनलोक भरि रहा समाई। ज्ञान गुमान करे सेवकाई ॥
त्रिविध ज्ञान लीए तन डोलै। ऋतुऋतु बिरहका लिएँबोलै ॥
तेजहीन नाना दशा कीन्हां। ताकर भेद न काहू चीन्हां ॥

समय-एक अधीन एक दारुण, एकलै एके खाय।
बड़वानी जगमों कहहि, सुनौ भेद चितलाय॥

चौपाई।

अंडज कला अनंत सुधारा। तेहि पीछै पिंडज अनुसारा॥
कला अपार तत्व बहुरंगा। सिरजी पिंडज भ्रमके संगा॥
पाँचतत्व निश वासर संगा। जाकर पहर ताहिके रंगा॥
पाँचो पाँच तत्त्वके साथी। गाय भैंस घोडा और हाथी॥
खर्च ऊंटनी छेरी खारी। चुहि चाही मंजारी पारी॥
सो नहीं सुवरी कीनरी भाली। माली नौसी गही कंकाली॥
कहाँ लगी बरनौ बहुभाँती। मदही तें नरकी उतपाती॥
पांच तत्त्व सबहीके संगा। श्वासाके सँग चलै तुरंगा॥
पांचों तत्त्व पाँच पुरजाही। प्रीत पाँच हैं छत्रके माँही॥
पाँचहि कुच पांच मोकामा। पाँच सरोवर पांचहि धामा॥
पांचै देवल पांचै देवा। पांचै करहि पांचकर सेवा॥
पांचों मह सम पांच उदासी। पांचौ पांच शून्य अविनासी॥
पांचों आवही पांचौ जाही। पांचै पांच महँ पांच समाई॥
पांच शून्य पांच अस्थूला। पांचौ पांच पांचकर मूला॥
पांचहि होयघर एक जो आवै। पांच पांच तबही समुझावै॥
पांचौ सात राह होइ धावै। तिनहींके घर मंगल गावै॥
पांच तीनि जब सात समावै। पंद्रह मेटि एक घर आवै॥
पांचहि तीन सात एक धारा। पांचौ नाद बजावन हारा॥
पांचौ काहे खेल अपारा। पांचों करही एक विस्तारा॥
पांचौ दशके मांहि समाई। पांचौ आवहि पांचौ जाई॥
भौंर गुफा पांचोंकर याना। बाजै ताल मृदंग बँधाना॥
जब पांचौ दशके घर. जाई। तब दश पाँचहि आनि समाई॥

जब दश पाँच गुफामहँ आवहि । मधुरी तान अर्ध धुनि गावहि ॥
कोई घंटा कोई ताल बजावहि । कोईशंखनादकोईझालरिलावहि॥
कोईकिंकिनिचिंचिनिकिन्नारिवीना । कोईभेरिमृदंगऔढोलसहीना॥
कोई तारी कोई बेन बजावहिं । रहसि रहसि नानागुण गावहिं ॥
सा‌रँग जल तरंग धुनि धारी । तबलाचहुँ ओर नरसिंगाडफारी॥
इहिविधि भोरगुफा धुनिगाजै । नानारंग मधुर धुनि बाजै ॥
बाजे बाजन होइ धुनि गाजा । बिजुली चमके मोहै राजा ॥
दश औ पाँच पचीस समावै । तब घरनी घरियार बजावै ॥
पांच पचीस दश दशहि समावै । गुफाके ऊपर मुरली बजावै ॥
बाजै मुरली कला अनंता । जागै कमला सो मैं मन्ता ॥
निर्झर झरै गुफाके द्वारा । रविशशि पांचतत्त्व उजियारा ॥
श्वासा सार सहज घर बासा । रविशशि पांचतत्त्व परकाशा ॥
भौंर गुफामहँ बाजन बाजै । रवि शशि श्वासा संयम गाजै ॥

समय–नाना बाजन बाजहीं, नानारंग अपार ।
मन औ जिवइकसंगही, अविनाशीके द्वार ॥

चौपाई ।

मन नाचै पल लै औ गावै । आप नाचिकै जिवहि नचावै ॥
जीव नचै अविनाशी आगे । मन जिव रहे सदा सँगलागे ॥
आनँदधाम होत दिन राती । दीसे ज्योति दीवा बिनुबाती ॥
मुरली बाजै निर्झर झरै । नाडी सुषम मन्दिर भरै ॥
निर्भय सदा न जाति अजाती । निर्वंश सदा न पूजा पाती ॥
स्वर्ग नर्क औ नदी है ताहां । ज्योति उजागर निर्गुण नाहां ॥
सरगुण निरगुण एके माहा । दीखै ज्योति निरंजन ताहा ॥
सात तीन पाँचों जब एका । दुइ घर बास एक घर ठेका ॥
उतारि गुफासे जब घर आवै । आपु आपु कह चहुँदिश धावै ॥

पल घर आवै पल घर जाई। पांचतत्त्व संग सदा सहाई॥
पांच तत्त्व श्वासा असवारा। फिरही सहरवार औ पारा॥
जहाँ बाहर है शहर देवाला। तहाँ पांचौ तुरै फिरै चौफाला॥
ता ऊपर आतम चढि धावै। पल बाहर पल भीतर आवै॥
पांच तुरै श्वासा चढि धावै। सरवर पांच परसि घर आवै॥
सरवर पांच पांच तहां घाटा। गली एक पर्बत दुइ बाटा॥
पांचौ तत्त्व चलै एक साथा। रविशशि श्वासा नाथ अनाथा॥
पांचौ तत्त्व घर बाहर जाई। तासंग कमल हरी उमगाई॥
जादिन पांच तत्त्व नहिं आवै। एकतत्त्व निश वासर धावै॥
तादिन पांच तत्त्व गुणपावै। लखै तुरै जो बाहर धावै॥
बाहर चाल चलत गहि लेई। श्वास सुभाव बंद तहां देई॥
एक तत्त्व निश वासर धावै। दुसरी तत्त्व संग नहिं लावै॥
पांचौ तत्त्व चीन्हि जब पावै। जो बाहरचलै तासु गुण पावै॥
पांचौ तत्त्व जीव संग आवै। पल बाहर पल भीतर धावै॥
ताकर पावै पांचों मोकामा। लेइ तत्त्व पांचोंके धामा॥
पांचों पांच सरोवर जाहीं। अमी अमान बिरह रसखाहीं॥
दुई पुहुप सुख सागर परशै। अमी अंक सत्य सुकृतै दरशै॥
तहाँ अमीरस पीवत अघाना। रवि शशिसंग जीव निर्वाना॥
उतपति पारस तहवाँ पावै। लै पारस फिरि घरहि सिधावै॥
द्वैमन विष एक मनहै अमाना। परसै आदि अन्तशहिदाना॥
कालि काल जोति उजियारा। तहाँ एक नागिनवसे अपारा॥
सो नागिन घर भीतर बासा। बाहर भीतर एक निवासा॥
नख शिख बेधि रहा विष पूरा। श्वासा संयम शशि औ सूरा॥
पांचै तत्त्व रहे घट पाँचा। पांचहि साथ जीवकर साँचा॥
रवि शशि श्वासा संग बसावै। उत्पति प्रलय गहन लगावै॥

दुइ घर रवि शशिजीव बसावै । इक घर राहु केतु अच्छावै ॥
चारिउ चारि दिशा चलिजाई । फिर चारिउ एकमाँह समाई ॥
दुइ झंझरी परशि फिरि आवै । दुइ फिरि झँझरी बाहर धावै ॥
घर आवत राखै अटकावै । राहु केतु दोई गहन लगावै ॥
जादिन पांच तत्त्व नहिं धावै । तादिन कालगहन नहिंलावै ॥
दुवो तुरै जानि कसे धाई । फोरी द्वारी बाहर जाई ॥
बाहर अमी अमान अमाया । उत्पति पारस नारी काया ॥
नारी नेह निरञ्जन काया । ताते शिव शक्ती उपजाया ॥
एहि निजबुझहु धरमन भाया । नाना वानी वरन बनाया ॥
शिवकाया पति सूर्य सनेहा । ऊगे चन्द्र शक्तिकी देहा ॥
शिवकी देह सूर्य प्रभु साजा । शक्ती देह चन्दहै राजा ॥
रविशशि पांच तत्त्वदइ काया । एक एक संग उपजे काया ॥
एकतत्व निश वासर धावै । जीवका मूल परोस सुखपावै ॥
जीव मूल पारस परवाना । लेउत्पति पारस जाय ठिकाना ॥
मन जिव तत्व एक चढि धावै । लै पारस अपने घर आवै ॥
पारस आनि जगावे कामा । बिरह बाण मारे संग्रामा ॥
दोई तत्व निर्वाण उजागर । दुइ घट शिवशक्ती मनि आगर ॥
पारस एक दुवोंकी काया । चंद्र सूर्य संगही उपजाया ॥
चंद्र उगै शक्तीकी देहा । चलै तत्त्व जलरंग सनेहा ॥
एक तत्व चंद्रघर धारा । सात रोज एकै व्यवहारा ॥
सात वार निश वासर धावै । पल पल वढै घटै नहिं पावै ॥
पारस परसि होइ जिव पूरा । शक्ती शशि घरशिवघर सूरा ॥
एकतत्व संग पारस पावै । राहु केतु नहिं गहन लगावै ॥
तत्त्व तार टूटे नहिं पावै । बिना सिंधनी काल समावै ॥
एकै पेली एक जो धावै । तौ शक्ती नहिं पारस पावे ॥

टूटे तार तत्वकी जबही। काल संधि पावै घट तबही ॥
टूटे तत्व होय दुख कूरा। चन्दहि पेली ऊगै घर सूरा ॥
धरि शशि सूर्य काल लै जाई। बांधि अकाश राखै बिरमाई ॥
चन्द्र सूर्य श्वासा सहिदानी। पारस तत्व लेइ अस छानी ॥
पारस टूटत होय मलीना। निशवासर जीव काल अधीना ॥
पारस सङ्गहि लेइ निचोई। छांडि देइ जब जाने सोई ॥
छिन बाहर छिन भीतर धाया। जरामरण व्यापै आ माया ॥
एकतत्व सङ्ग सबै विगोई। एक तत्व उपजे सब कोई ॥
शिव घर सूर्य होय उजियारा। एक तत्व निश वासर धारा ॥
पारस परसि होय विथिपूरा। प्रेम प्रकाश ऊगै घट सूरा ॥
एकतत्व चलै रवि धारा। सूर्य सिंघ घट तेज अपारा ॥
शक्ती देह चन्द्र रखवारा। चले तत्व जल रङ्ग अपारा ॥
एकतत्व निशबासर धावै। सातबार टूटे नहिं पावै ॥
एक समाधि रहत अस्थूला। तब शक्ती घट फूले फूला ॥
फूलत फूउ तहां अकुलाई। मनबिकार तन रुधिर चलाई ॥
ताहि सभै तन खीर समावै। शिव सनेह रचि काम जनावै ॥
ताहि समै शिवशक्ती परशै। रति रुचि अमी गर्भ तेहि दरशै ॥
रहै गर्भ कामिनिकी देहा। उपजे जातक वरन सनेहा ॥
पुरुष देह शशि चलै जो धारा। कन्या उपजै कला अपारा ॥
सूर्य सनेह चलै जो धारा। उपजै कन्या कला अपारा ॥
सूर्य सनेह चलै जो धारा। उपजे सूरति सार कुमारा ॥
रहै गर्भ तब काया साजै। रुधिर मांस तिलतिल उपराजै ॥
पांच तत्त्व तीनों गुण मूला। तासों रचे गर्भ अस्थूला ॥
शिवके श्वासा बांये स्वरूपा। शक्ती गहै जानिके रूपा ॥
शिवके रूप शक्ति गहि लेई। तब सांचा महँ जावन देई ॥

जावन जामैं सांचा माहा । थाका होय रुचिरके ताहां ॥
तेहि थाककी रचना भारी । तीन लोककी विष सँवारी ॥
तीन लोककी जेतिक खानी । सो सब थाका माधिं समानी ॥
उपजा थाका थाल सँवारी । गर्भभेद यह कहौ बिचारी ॥
थल थहाए माल निरमाया । महलहिके माहीं जलहि समाया॥
जलके मध्य महल बनशाया । महलहिके मधि रचना लाया ॥
महलके बार धन वह छजा । पवारि पगार बना दरवाजा ॥
सांचा अजे जरै नाहिं कबही । शोच मढिर चाहै सबही ॥
सांचा मांहि दियो रस डारी । नख शिख शोभा सबै सुधारी ॥
तीनहिं लोक रचा पलमाहीं । गढके गढ पति गासौ ताहीं ॥
प्रथमें सायर सात सुधारा । पर्वत अहुट रच्यो अधिकारा ॥
अठारह सहस्र बहतरि नारा । पांचतत्त्व सब साज सुधारा ॥
अठारह गंडा नदी बनाई । सब तारि नीर रहा पुनि छाई ॥
लोहू हान स्तंभ अस्थूला । बढे लिंग सवारे मूला ॥
आगे सवरे दुइ भुज दंडा । सात द्वीप पुहमी नौ खंडा ॥
बहुरि सवारे दूनौ खम्भा । मदन महा बहल उपजे रम्भा ॥
नासिका चढाई मस्तकभारा । दुइकर जोरिके निकसी धारा ॥
श्रवने नेत्र रुचि अर्ध बनाई । कीला कीला मर्घी नवाई ॥
नौमी कूटी दश गुफा बनाई । सात भँवर नौ नाल लगाई ॥
उतर मेरु सिरजा अस्थूला । सरवर माहिं कमल बहु फूला ॥
नाभि माह नखशिख करलाई । फूला फूल बास घट छाई ॥
बाहर बास तन मांह समाई । सोई बास इन्द्री होय धाई ॥
इन्द्री रसना रङ्ग जनाई । लिंग जल हारिसे भूमि बनाई ॥
आठो अङ्ग रचा अस्थूला । शिवशक्ती दोउ सम तूला ॥
सोइ अङ्ग शक्तीसोइ अंग शीवा । शो एक एक सम नीवा ॥

नख शिख अंग एक अनुहारी। देह स्वभाव वचन दुइ मारी ॥
शक्ति देह विरह अधिकारी। शिव आशिष शक्तिको चारी ॥
इहि विधि रचना रची बिलोई। गर्भ सनेह संपूरन सोई ॥
नखशिख रचा गर्भ अस्थाना। सात द्वीप नौखण्ड बखाना ॥
एक दीपमें सातों दीपा। सात सुकृत तेहिमाय समीपा ॥
प्रथमै गर्भ द्वीप उपजावा। ताऊपर रचना बिलमावा ॥
एकद्वीप नौखण्ड बनावा। त्रिकुटी सात तहाँ निरमावा ॥
एय द्वीपमें सातों नाला। सातों कमल अधर दुइमाला ॥
सरवर सात कमल तहां साता। रंग पांच पांचौं उतपाता ॥
पांचके मध्यहि पांच रसीला। त्रिकुटीमध्य एक तहां कीला ॥
ता कीलामहँ कानी लागी। पौन सनेह आतमा जागी ॥
ता कीलामहँ लागी डोरी। खूटा गाडि पवन झकझोरी ॥
ता खूटा महँ डोरि लगाई। मन पवना गहि राखु झुलाई ॥
झुलि मन पवन झुलावे चेरी। इक घर शून्य एक घर फेरी ॥
खूटा होय पवन झकझोरै। इंगला पिंगला सुषुमण जोरै ॥
रवि शशि मन पौना गहिजोरी। खूट न लागि सबनकी डोरी ॥
मेरे दंडपर खूटा गाडा। नदी तीन ता ऊपर बाडा ॥
खूटाकी बांई दिशि है गंगा। विमल शीतलबहे नीर तरंगा ॥
चंद्र सनेही जिव जल परशै। सुरति स्वरूप धनीदिल दरशै ॥
तासु खूटाके दहिने अंगा। यमुना नदी बहै बहुरंगा ॥
कीर्ति नीर औ पीत तरंगा। लहर लाल तेज विष संगा ॥
तहां बसै सुर जीवके साथा। खल एक बयालिस हाथा ॥
कला अनंत रूप रस नाथा। सबै अर्ध नाहिं दीसै माथा ॥
बाढि नदी जो दोउ करारा। शीतल तेज बहै दोऊ धारा ॥
तिसरी नदीहै गुप्त प्रवाहा। नाजल थाह ना होय अथाहा ॥

खूंटा तर होय निकरी धारा । चली सरस्वती फोरि पगारा ॥
मध्य लहरि विषधार सखानी । गंगा यमुना मध्य समानी ॥
त्रिकुटी संगम भयउ मिलावा । मनही पवन लेत बिरमावा ॥
भँवरगुफा माधवकर थाना । बसै त्रिवेणी प्रयाग स्थाना ॥
त्रिवेणी तट बसै प्रयागा । जागत सोवै भाग अभागा ॥
गनि गंधर्व मुनि सबके थाना । सुरनर करै पैठि अस्नाना ॥
तेतिस कोटि देवगण नारी । किन्नर गुणी कंचनी भारी ॥
यक्ष यक्षनी देव कुमारी । नागसुता अप्सरा सुभारी ॥
चढि विमान सब करिहै जोहारी । काया मध्य इह अदभुत भारी ॥
असुरपिशाचचारिखानिजुलाहल । त्रिवेणी तट करी कुलाहल ॥
यक्ष यक्ष असुर सब देवा । बसै ग्राम करै माधव सेवा ॥
तीन लोक जत जीव निवासा । सो सब करै त्रिवेणी बासा ॥
तेहि त्रिवेणी तट माधो देवा । सब मिलि करै ताहिकी सेवा ॥
तब प्रयाग होइ चढि प्रवाहा । गंगा सागर संगम जाहा ॥
देश देश गंगा फिरि आई । घाट घाट बहु क्षेत्र बनाई ॥
जहाँ तहां जप ध्यान लगावै । योग यज्ञ व्रत प्राण नहावै ॥
ऋतु बसंत यागहि धावहि । मकर महीना बजार लगावहि ॥
अरध उरध बिच लागी हाटा । भीतर बाहर औघट घाटा ॥
गर्भमाहिं सब युगति बनावा । तीनै कचहरि तहां बसावा ॥
जहां नदी संगम परवाना । तहँवा रचा एक अस्थाना ॥
संगम बीच गुफाके तीरा । सातहि द्वार गुफामहँ बीरा ॥
एकद्वार होय शब्द सुधारे । एक द्वार होय रूप निहारे ॥
एकद्वार होय बास बसावै । एक द्वार होय अग्र समावै ॥
एक द्वार होय स्वाद संवारे । एक द्वार होय न्याय निवारे ॥
एक द्वार होय नाद उचारै । सत्य सुकृतकी रहनि विचारै ॥

सात नाल चौदह सुरभाऊ । सातों करहै एक सुभाऊ ॥
सातों सात शून्य मह वासा । सातों बसै गुफाके पासा ॥
गुफाके मध्य कन्दरा वासा । तहां सातों मिलि करै निवासा ॥
एतिक कुञ्ज द्वीपकी शोभा । आवागमन मोह मद लोभा ॥
कुञ्ज भँवरकी रचना भारी । शून्यसहज धुनिसकल सुधारी ॥
दुवहु नाल कैसे के सोरी । एक मुखबंकनाळ मह जोरी ॥
अग्र नाल अमरकी डोरी । शोभानाल होय विष रसघोरी ॥
कुञ्ज द्वीप रचि सुधर बनावा । नेह अमर पद क्षीर शमावा ॥
सुधर दीप परनाभि सँवारा । नाभी मंडल पौन किंवारा ॥
पौन घोर नाभी रस कीला । मध्य सरोवर जंबू शीला ॥
जम्बु द्वीप यम करहि स्थाना । ताहि द्वीपमाहि जीव भुलाना ॥
नाभि द्वीप रचि कच्छ बनावा । इंद्री आसनको रंग सुभावा ॥
कच्छ कला निजु द्वीप सुधारा । ऋतु वसन्त जावन विस्तारा ॥
कच्छ द्वीप काशी अस्थाना । नरनारी हि करै अस्नाना ॥
वरुणा असी गंगके तीरा । मनि कर्णिका निर्मल नीरा ॥
लिंग जलहरी मांहि समाना । नर नारि पूजही धर ध्याना ॥
पूजहि कामिनीमंगल गावहि । रहसिरहसि लिंगही न्हवावहि ॥
अक्षत चंदन बिल्व चढावहि । धूप दीप दै तत्व लगावहि ॥
भामिनी भाव फूलरंग धरही । करि असनान बसन सुइधरही ॥
सोइ बसन नर नाटक माँही । काशी तेहि वसनकी छाँही ॥
सोइ वसनकी बास उडानी । योग भोग छलकी सहिदानी ॥
बसन कुसुम दल ध्वजा उडाई । कच्छद्वीप शिव शिव शरनाई ॥
कच्छ द्वीप रचा रस कोपा । लिंग जलहरी घर घर रोपा ॥
कच्छद्वीप शिवको अस्थाना । शक्तिमाँहि शिव आपसमाना ॥
शिवशक्ती रंग रूप रसीला । शिवसमान शक्ती गहिलीला ॥

गर्भ सनेह रचा जब द्वीपा । लिंग जलहली सदा समीपा ॥
कच्छ द्वीप रचि पूरण कीन्हाँ । पाछे पच्छ द्वीप पग दीन्हाँ ॥
पच्छद्वीप रचि रंग बढावा । रंग रोसहै बिरत स्वभावा ॥
प्लक्षद्वीप रचि पच्छ पसारा । प्लक्ष द्वीप रचि गर्भ सुधारा ॥

समय–कच्छद्वीप तटपच्छ द्वीपहै, कच्छ प्लक्षकर भाव ॥
दुनो द्वीप कर एक कला है, रंगरोष कर दाव ॥

प्लक्ष द्वीप रचि गर्भ संभारा । पाछे मीन द्वीप विस्तारा ॥
प्लक्ष द्वीप बाहेर सुधारा । द्वीप ही कच्छप के द्वारा ॥
बारह द्वीप रचि पूरण कीन्हा । पाछे मीन द्वीप पग दीन्हा ॥
मीनद्वीप रस कञ्ज अमाना । कराहि कुलाहल द्वीप समाना ॥
मीनद्वीप रचि प्रकटी माया । पूरण भई गर्भ महँ काया ॥
मीनद्वीप तनको व्यवहारा । चमके चपल ज्योति उजियारा ॥
चली चिकुर चित्र बलवानी । दामिनि दमके बलकेबढानी ॥
मीनद्वीप मन मदन महीपा । सुख दुख साँग राग दीपा ॥
मीनद्वीप रचि पूरण कीन्हाँ । पाछे सुधाद्वीप पग दीन्हाँ ॥
मीनद्वीप सुख अमृत लीन्हाँ । पाछे सुधाद्वीप पग दीन्हाँ ॥
मीनद्वीप सुख अमृत नेहा । चक्र सुदर्शन द्वीप उरेहा ॥
सुदर्शनचक्र द्वीप निर्बाना । सुधावारि सत्य शुक्तिहि साना ॥
सुदर्शनद्वीप पति गुण आगर । परमानन्द परम गुणसागर ॥
सातों द्वीप रचा निर्बाना । काया ब्रह्म भया बंधाना ॥
द्वीप सुधारि कमल परकासा । कमलवास प्रगटी चहुँ पासा ॥
प्रथमहि मकाद्वीप निरमावा । उमराव कमल तेहिमाहबनावा ॥
उमर कमल मकारि कस जाना । लाख पंखुरी दलकी अनुपाना ॥
मकर तार डोरी तहां लागी । दरशै सुरति सदा अनुरागी ॥
दूजै पद्म द्वीप निरमावा । कमल कूर्मतेहि माहि बनावा ॥

ताकी डोरी सुतसम देखा। कमलनालके मध्य बिशेखा॥
तीजे द्वीप लंबनी नेहा। धर्मकमल तेहि माँहि सनेहा॥
ताकी डोरी अग्र सनेहा। अग्रनाल तेहि मांह उरेहा॥
चौथे द्वीप झांझरी कीन्हाँ। कूर्म कमल दामिनको चीन्हाँ॥
ताकी डोरी सहज स्वरूपा। चमके धारा तार अनूपा॥
पांचए झिलमिल द्वीप संवारा। ताके कमल कुसुम सुखसारा॥
ताकी डोरी धुआंके नेहा। अंध कार अकार उरेहा॥
पांचौ द्वीप अर्ध रहि वासा। पांचौ कमल ता ऊपर बासा॥
पांचौ कमलमें प्रतिमा पांचा। लागी डोरी अर्ध घर सांचा॥
कोई लक्ष कोई ऊत बनावै। कोई हजार कोइ सब निरमावै॥
कोई कमल पंखुरी सांचा। डोरी अर्ध पांचहुँके पांचा॥
ब्रह्माद्वीप घरमांहि निवासा। तेहिमहँ ऊर्ध्वकमल परकाशा॥
प्रथमहि अमी कमल निरमावा। अमी अमान अर्धधुनिछावा॥
तहवां होइ श्वास गुंजारा। बरसै अमी अखंडित धारा॥
अमी अमोल अर्ध रहि वासा। श्वासासार पुहुप परकासा॥
निश वासरको जानै मूला। श्वासासार शब्दसम तूला॥
निश दिन होय श्वासा गुंजारा। सातसै ग्यारह साठ हजारा॥
अमी कमल अमान सो नाला। अट्ठाईदल पंखुरी रिसाला॥
तेहिमहँ चले पवनकी धारा। श्वासा साथ शब्द गुंजारा॥
निश वासर श्वासा विस्तारा। छः सै अर्ब इकीस हजारा॥
उनतालिस हजार एकसै आवै। एतिक चिकुरद्वार होय धावै॥
दुइ दल कमलहु श्वासा आवै। इकइस हजार छः सै धावै॥
बाइस हजार चारिसै ऊने। जाप जपै जिव आप बिहूने॥
एतिक श्वास दोइ दलमें आवै। पल बाहर पल भीतर धावै॥
दूसर कमल झलाझल माँहा। झलकै ज्योति अर्धधुनि ताँहा॥

सहस्त्र पंखुरी कमल अनूपा । तहां वसै मनज्योति स्वरूपा ॥
ताहि कमल पर बाजन बाजै । बानी अधर मधुर धुनि गाजै ॥
कूर्म कमल मकरंदी राजा । तहां बिराजत शोभित साजा ॥
तहां घरनि घरियार बजावै । घनी २ टंकोर लगावै ॥
दश और पचहत्तर श्वासा । इतना एक घरी परकासा ॥
एतिक श्वासा सहज घर आवै । तहां घरनि घरियार बजावै ॥
छसै पचहतर की सहदानी । एक टंकोर ठोकावै जानी ॥
इहि विधि चारि टंकोर टोकावै । ताकर भेद सन्त कोइ पावै ॥
राहु केतु सँग व्यालिनि रोकैं । ताको मर्म कोइजानि अलोकै ॥
एक पहर मारै विधि पूरा । गहन गरासै शशि औ शूरा ॥
गहन गरासत निरखै श्वासा । रवि शशि राहु केतु परकाशा ॥
ताहि संग एक नागिनी रहै । घड़ी २ वह जीवहि घहै ॥
श्वासा सोहंगम गहन गरासै । आगम जानिके जीवहि त्रासै ॥
श्वासा सोरह गहन लगावै । छठये मासहि काल सतावै ॥
श्वासा परख घरीकी राखै । दमहि चलै सो आगम भाखै ॥
एहि विधि श्वासचलै पुनिजबही । दुइ हजार सातसै तबहीं ॥
पुजे घरि पूरण होय जबही । पहर कटोर मारै पुनि तबहीं ॥
एतिक श्वासा प्रहर प्रमाना । घरि चारि गरज बंधाना ॥
आठ घरी दुपहिर जब आवै । टांके गजर गहन नहिं लावै ॥
चारि घरी चारिउ युग मूला । चारि प्रहर चारिउ समतूला ॥
चारिउ युग एक पहरके माहीं । चारि प्रहर चारि युग ताहीं ॥
प्रथम प्रहर सतयुग परवाना । तापर प्रथम घरी निर्बाना ॥
सतयुगमें युग चारि अपारा । चारिउ युगको नाम निरारा ॥
प्रथमहि सतयुग रोपे थाना । चारों युगतेहि माहि समाना ॥
सतयुग प्रथम घरी निर्बाना । कीलक युग तेहिमांहि समाना ॥

कीलक युगकी श्वास सारा । छहसै सत्रे पाँच सुधारा ॥
एति श्वासा कीलक युग माहीं । परसै जीव अधरकी छांही ॥
बीतत घरी गजर घहराई । काल टकोरा मारै धाई ॥
इह युग अन्त कहावै घरी । नागिनि ग्रासे सन्मुख खरी ॥
प्रथम कीलक युगहोय संघारा । पाछे युगका मत विस्तारा ॥
सतयुग धरि दूसर जब आवै । तेहि श्वासा कमत युग पावै ॥
कमत युग होइ क्रोध बरियारा । उत्पति थोर बहुत संघारा ॥
कमत युगकी श्वासा जानै । छःसै सत्रह पांच बखानै ॥
एतिक श्वासा कामत युगमाहीं । गुण अवगुण दोउ निरखेहु ताहीं ॥
बतित कामतक मोद युगआवै । तिसरी घरी बासना धावै ॥
आवा गौन बिचारै कोई । युग कमोद सुख पावै सोई ॥
तिसरी घरी सतयुगके आई । तब कमोद युग होय सहाई ॥
युग कमोद सतयुग महं आवै । दुखी सुखी नर सब सुख पावै ॥
युग कमोदकी परलै होई । दुखी सुखी जानै सब कोई ॥
तब जो होई सूर्य संचारा । महाविरोध उपजै अधिकारा ॥
चन्द सनेह होय जो हीना । महासुफल तन होय मलीना ॥
श्वासा चलै सातसै भारी । युग कमोदकी कथनि है न्यारी ॥
युग कंकवत कि होय प्रकासा । अतिही दुर्ज विषयकी त्रासा ॥
चौथी घरी क्रोध बेकारा । महा कठिन होई ताकी धारा ॥
चौथी घरी निकट जब आवै । सतयुग अन्त कंकवत पावै ॥
सतयुग अंत होय नहिं पावै । युग कंकवत आय शिरनावै ॥
युग कंकवतकाल बरिआरा । कायाके बहु करै बिकारा ॥
काया कहर गरासै आई । तब न भेद मैं कहों बुझाई ॥
काया कहर हो परचण्डा । नख शिख व्यापि रहे नौखंडा ॥

युग कंकवत कालकी बानी। कालकला माति सब दिन जानी ॥
युग कंकवत महाबल योधा। अन्तकाल सतयुग पथ सोधा ॥
सतयुग अन्त कंकवत माही। अन्त कालकी व्यापै छांही ॥
युग कंकवत मोहकी खानी। काम क्रोध ममता लपटानी ॥
अन्तकाल सतयुगकर भयऊ। चारिउ जुग परलैतर गयऊ ॥
समय-एकहि युगके बीते, चारों युगभये नाश।
एकनद चारिउ युगखाए, सतयुग कीन्हगरास ॥

चौपाई।

कीलक कमोद चंद सनेहा। कमत कंकवत सूर्य सनेहा ॥
भाजुग अन्त एक संग चारी। चारि शब्द एक नाद संघारी ॥
एक नाद एक पहर कहावा। चारि घरीतेहि माँहि समावा ॥
चारि घरी चारिउ युग बीते। शब्दनाद रवि शशि धर जीते ॥
सतयुग अन्त बाजु घरियारा। त्रेतायुग कर भयो विस्तारा ॥
दुसरे युग कर भयो बिश्वासा। दुसरे पहर तेज प्रकासा ॥
तेज लगन श्वासा रहि बासा। ताते दूसर युग परकासा ॥
त्रेता युगकर भा अनुसारा। त्रेता युगहि ते व्यवहारा ॥
त्रेता युगकी पंखुरी चारी। चारि घरी युग चारि बिचारी ॥
जैसा युग सतयुग महँ देखा। सोई गति त्रेता महँ लेखा ॥
जब जब अन्त होई युग केरा। तब तब नाद काल घन घेरा ॥
त्रेता युग महँ कला अपारा। योगव्रत तीरथ आचारा ॥
प्रथम घरी होय क्रोध अपारा। अहंकार अभिमान पहारा ॥
ताकर नाम चिन्ता युग राखा। चित चंचल चकित अभिलाषा ॥
चक्रितयुग अलोप जब भयऊ। ठोकि टकोर नाद तब कियऊ ॥
होत नाद मृतु अन्धा धावै। लागत पलकमल नहिं लावै ॥
चक्रित युग बीती जब भयऊ। तेहि पाछे बुद्धि युग भयऊ ॥

बुद्धी युगकी बुद्धि अपारा । तायुग महाकाल बरियारा ॥
ज्ञान गयँद होइ असवारा । बुद्धि युगभान फोरे माहिभारा ॥
बुधिक बधिक बाँधि करैकमाई । विषै चतुराई कुमति समाई ॥
एही विधि बुधि युग चलि जाई । तेहि पीछे मन बरतैं आई ॥
मन मतंग महामद माता । तेज तपस्या व्यापै गाता ॥
मनयुग ऊंच नीच सतलीला । बरषै झारी विषैको शीला ॥
मन युगकी श्वासा बहुरंगी । ज्यों जलमध्ये उठै तरंगी ॥
मन युगराज बीतिगा जबही । अहंकार युग उपजा तबही ॥
अहंकार युग अंत समाना । मरै पतंग हार नहिं माना ॥
हारै नहीं आपु अहंकारा । गरजै छुच्छ हारे सुख भारा ॥
अहंकार युग श्वासा ऊनी । गरजि घुमाडि बरषै फिरिसूनी ॥
अहंकार उद्वेग अपारा । श्वासा हीन तत्व छिन धारा ॥
अहंकार युग बीते जबही । त्रेताकी परलै भइ तबही ॥
त्रेता अंतकाल जब कीन्हाँ । आधी निशाटंकोर जो दीन्हाँ ॥
आधी राति नाद घन बाजा । महा निशान मेघ जनु गाजा ॥
त्रेता आदि अंत व्यवहारा । उपजा द्रवा परकला अपारा ॥
द्वापर युगकी कला अनंता । सुखदुखमध्य आदि दुखअंता ॥
प्रथम घरी द्वापरकी आई । अर्थनाम युग महा समाई ॥
अर्थनाम युग द्वापर माहीं । अर्थ अहनिंश व्यापै ताहीं ॥
अर्थनाम युग घरी समाना । घरिकै बीते युग क्षय माना ॥
एक युग बीते दूसर आवा । धर्मनाम युग तहाँ धरावा ॥
धर्मयुग धरनी धरु साँचा । श्वासा छहसै सतरी पाँचा ॥
धर्मधार औ धीर तुरंगा । धर्मयुग रोग वियोग सुरंगा ॥
धर्मनाम युग बीते जबही । गहर काळ युग बरतैं तबही ॥
गहरकाळ युग कहर कमाई । रविरथ बीच ध्वजा फहराई ॥

गहर टंकोर जब धरनी मारा । गहर कहर रस ज्ञान अपारा ॥
गहर यम युग बीता जबही । मोक्ष महाबल उपजे तबही ॥
मोक्ष नाम जग सत्य सुरंगा । निमिष लक्ष दल सात तुरंगा ॥
मोक्ष नाग युग बीति जब जाई । द्वापर युगकी परलै आई ॥
जब परलै द्वापरकी होई । आदि अंत सब जाय बिगोई ॥
द्वापर अंत बिगुरचन भारी । दुःख प्रचंड सुख सबै खुवारी ॥
बीता द्वापर कलियुग आवा । कलियुग कालकलाके भावा ॥
कलियुग महँ युगचार समाना । चारिउ युगको करै बखाना ॥
चारिउ युगकी अर्थ कहानी । बिन परचै सब यमकी खानी ॥
सतगुरु बिना न होय मिटाऊ । चारिउ घरी कालकी दाऊ ॥
चारी घरी युग चारि बँधाना । कहौं भेद सुनु संत सुजाना ॥
प्रथमहि युगकर चेतन नाऊँ । चेतनि चित्त करै सब ठाऊँ ॥
चेतनि युगमहँ चिंताको धामा । विस्मय हर्ष दुनौ विश्रामा ॥
चेतनि चिंता करै सब ठाऊँ । महा बलीहै श्वास सुभाऊँ ॥
तीनिहिं ताप तपै ब्रह्माण्डा । भरमि भूत व्यापै नौ खंडा ॥
भ्रमित पौन भर्मकी खानी । भर्म हाथ सब दुनी बिकानी ॥
कैतौ पढै गुनै संसारा । बिनसतगुरु नाहिं चित्त सुधारा ॥
सतगुरु मिलै होय सम तूला । तेहि पाछे उत्पातिकर मूला ॥
दोरस युग बुद्धी बलनामा । शुची अशुची करै जो कामा ॥
ताकी संख्या बहुत बिचारा । छःसै सत्तरि दंड पसारा ॥
पाँच दंड वाकी रहि वासा । ताका भेद काल परकासा ॥
बुद्धि कुबुद्धि दोउ कर भाऊ । एकाहि युग दोउ रहनि बताऊ ॥
बुद्धि हीन मैं मत पसारा । बिनु आँकुशनहिं होत सुधारा ॥
अंकुश देइ मिलै गुरु पूरा । मोह सहामद विषहोय दूरा ॥
बुद्धि नाम युगकी सहिदानी । सुमति सनेह सुरति लपटानी ॥

बुद्धि नाम युग पारस सनेही । चित अभिमान रहे नहिं देही ॥
बुद्धि नाम युग बीते जबही । इच्छा राशि गरासै तबही ॥
इच्छा युगकी अकथ कहानी । सुनहु सन्देश कहो सहिदानी ॥
इच्छा आदि पुरुषकी काया । तासु नेह सब लोग बनाया ॥
सो इच्छा है जीवन नेहा । रही समाय जहां लौ देहा ॥
तायुगमाही विषय विकरारा । ज्ञान न उपजै भर्म पसारा ॥
ता युग माहि धरै नहिं धीरा । लालच लोभहि व्यापै पीरा ॥
इच्छा युगकी अटपट डोरी । शहर सँधार होय निश चोरी ॥
जब जब इच्छा युग विस्तारी । काया कष्ट होय दुख भारी ॥
ता युगकी बाकी भुगतावै । दृष्टि नाहिं अदृष्टि दिखावै ॥
अन्न अहार करै जब कोई । इच्छा युग तब पूरण होई ॥
तासे युगकी दूसरि धारा । सतगुरु मिलै तो होय उबारा ॥
सतगुरु शरण अमर पद पावै । इच्छा समय दूरि बिसरावै ॥
इच्छा युगकर तार पसारा । लाज महा बल तजै विकारा ॥
सातों दंड इच्छा कर भावा । दंड पांच सातहि विसरावा ॥
पांच शून्य इच्छा कर साथी । मद माते जस मङ्गल हाथी ॥
तासु नेह संयम जब पावै । इच्छा मेटि गरव विसरावै ॥
इच्छा युगकी एतिक बानी । सतगुरु मिलै तो होय छुटानी ॥
जाहि देह सतसुक्ती बीरा । ताकह काल देइ नहिं पीरा ॥

समय-कालत्रासव्यापै नहीं, इच्छा युगके माहिं ।
सतगुरुसो परचय करै, परसै नीरगुण नाहिं ॥

चौपाई ।

चौथे युगको करौ बखाना । धर्म महाबल माह समाना ॥
अभय तरंग ताहि युग नामा । संशय रहित सदा बिसरामा ॥
तेहि युग माहि सरव सुख होई । अहंकार व्यापै नहिं कोई ॥

तेहियुग माहि सुधाकी खानी । बोलै धीर मधुर धुनि बानी ॥
झीनी रङ्ग तारङ्ग विराजै । नाना नाद अर्ध धुनि गाजै ॥
सातों द्वीप होइ उजियारा । दामिनि दमकै शहर मझारा ॥
वन औ वृक्ष सघन सब होई । सदा बसन्त खेलै सब कोई ॥
षट ऋतु महा एक सम तूला । एकै बानी एक अस्थूला ॥
साहब सेवक एकै होई । सदा बसन्त खेलै सब कोई ॥
साहब सन्त लखै सब कोई । साहब सेवक लखै न दोई ॥
(एकै बास बसै सब कोई ।)
साहब सेवककी एकै शोभा । चीन्हि न परै अङ्गकी ओभा ॥
साहब सेवक बरन दुहेला । एकै बरण गुरू औ चेला ॥
जैसे फूल बास कह तोरी । पाछै फूल बास गहि जोरी ॥
पाछे फूल शोभासों देही । तिल तजि तेल बास गहि लेही ॥
बिना भेद जीव होइ अन्धेरा । पाछे परै कालकी घेरा ॥
सीख बिना गुरु छुटे नाहीं । बिरि फिरि परिहै भौचक माहीं ॥
गुरू सुबासहै फूल सनेही । सीख स्वरूप आसिका देही ॥
गुरु बिन कौन उतारै पारा । कठिन काल है भौजल धारा ॥

समय-बिन सतगुरु नहिं बाचै, फिरि बुडे तेहि माहिं ।
भवसागरके त्रासते, गुरु पकरी बांहिं ॥

चौपाई ।

युगत रंगकी कला अपारा । बिना भेदको करै विचारा ॥
जस तरंग जलमाह विराजै । ऐसे शब्द शीश पर छाजै ॥
मन मकरन्दीके गुण ऐसा । कोटके बासै विषधर जैसा ॥
अग्नि बीच काया कह डाढै । सागर मांझ दून होइ चाढै ॥
पर्वत मारि उडावे छारा । पुहुमी मेटि करै मसि आरा ॥
सूर्य मेटि सब किरन बनावै । पवन बांधि कायां दिखरावै ॥

पानी बांधि अग्निको डाहै। पाला मेटि गरमि नहिं चाहै ॥
तीन लोककी जेतिक खानी। करै बास सबकी सहिदानी ॥
विष दारुण विषयात्रसि होई। मारै मरै जियावै सोई ॥
जो चाहै सो सबै बनावै। मनकी कला हाथ जो आवै ॥
मन भूखा औ मनै अघाना। मनै पियासाकर जल पाना ॥
मन सूरा मन कायर हीजा। मनैविरह बिरहिन संग भीजा ॥
मन दारुण मन कही सियारा। मनै तास औ मनै पियारा ॥
मन राई मन राव कहावै। मनै बिना मन हाथ न आवै ॥
मन बाहर मन सबके माहीं। मनते भिन्न कोऊ जग नाहीं ॥
मन सर्वज्ञ चराचर माही। मनते करता दूसर नाही ॥
मनही देह मनहि पुनि लेही। मनबसि काम लहारि बससोई ॥
मन लोभी मन कृपणी होई। मन उदार मन दाता सोई ॥
मन पापी मन अघ जो ढोई। मनै भक्ति लरि तारै सोई ॥
मनै लेख मन करै अलेखा। मनही स्वर्ग नर्कको लेखा ॥
मनहि मरै मन नरकैं जाई। मनबसि जीव सदा पछिताई ॥
करता जीव रंग मन आहीं। शोभा सकल रंगके माही ॥
रंगदेखि सब जगहि भुलाना। रंगरूपको एक ठिकाना ॥
बिना रंगरूप होई फीका। रंगरूप मिलि देखिय नीका ॥
नीक देखि सब शीस नवावै। निरखि देखिकै शीस डुलावै ॥
नीकै लागि रहा सब कोई। अनइस नीक मनैते होई ॥
ताते इह मन कर्त्ता भाखा। तिरगुण डोरी बांधि जगराखा ॥
मन हर्षित होय गावै गीता। मन उत्कण्ठ मन कहै पुनीता ॥
मन खोजी वादी होई। मनै गुरु समुझावै सोई ॥
मन बारै मन आनि जुडावै। मनलीन दशहु दिशि धावै ॥
मन अज्ञानं मनै सज्ञाना। मनकाविता मन चतुर प्रमाना ॥

मनछंद धरि भाषा बोलै । मन अस्थिर मन चंचल डोलै ॥
मनै ध्यान धरि वेद बखानै । मनै नबोडा कर न बँधानै ॥
मन षटचक्र मन विप्र बँधाना । मनके सकल रूप हैं ठाना ॥
मन नट नाटक महा समाना । मन घट सर्व कथै अभिमाना ॥
मनहि अठारह पढै पुराना । मन मन कहि समुझावै ज्ञाना ॥
मन चउदय विद्या अधिकारी । मन त्रिकुटी महँ लावै तारी ॥
मनकी ज्योति सकल उजियारी । मनकी छाया मन अधिकारी ॥
मनहीसों सब सरही काजा । मन है सात द्वीपको राजा ॥
मन बिनु सरै न एको काजा । मनके ऊपर मनहिं विराजा ॥
(मन नवखण्ड दशहुँदिश गाजा ।)
सतगुरु सीख मनहिंको कीन्हा । मनते भक्ति मनते पथचीन्हा ॥
मनमानै तो सबै बनावै । मन बिनु पंथसो कौन चलावै ॥
मन चीन्है तो मनकहँ पावै । बिनु मन सत्यशब्दनहिं आवै ॥
मन चीन्हे तो सब बश होई । बिनु चीन्हे सब जात बिगोई ॥
तीनलोक जो बाहर भाखा । सो सब आनि देहमें राखा ॥
मन चीन्हे तो हाथहि आवै । तीनहि लोक देहमें पावै ॥
जो बाहर सो भीतर पावै । तीनलोक पल मांह दिखावै ॥
तीन लोकते बाहर बासा । मन चीन्हे तो होइ प्रकाशा ॥
जब लगि मनको अन्त न पावै । तौ लगि इहमन हाथ न आवै ॥

समय-तीनलोकहैं देहमहँ, रोमरोम मन ध्यान ।
बिन सतगुरु नहिं पाइये, सत्यशरण निज नाम ॥

चौपाई ।

सात द्वीप काया अस्थाना । सातों द्वीप कमल बंधाना ॥
नाल साति रसना गति देहा । सातों सुरकर एक सनेहा ॥
तहांको भेद हँस जो पावै । दुबिधा दूर मति सबै गवाँवै ॥

पावे भेद करै विश्रामा। पल पल परशै निर्गुण नामा॥
आवत जात बार नाहिं लावै। परसै नाम अमरपद पावै॥
नाल सात सुर एक ठिकाना। ताके निकट रूसके थाना॥
नदी तीन बाढी गम्भीरा। साम तहां गोफाके तीरा॥
तहां बैठि अजपा लौ लावै। रोम २ की सब सुधि पावै॥
रस औ बिरस तहाँकर मेला। होत बसन्त गुरू तहाँ चेला॥
गुरु समाधिमँह अटल प्रमाना। चेला अग्रबास मह साना॥
चेला बास गुफा महँ करई। पल २ सुरति शब्द पर धरई॥
त्रिगुण तेजकी दीखे काया। दामिनि दमकि झकोरें बाया॥
जो गुरु मिलै तो पांजी पावै। बिनु पांजी बिचही भटकावै॥
पांजी पावै सुरति सनेही। पूरण तत्व चलै जब देही॥
करै चंद्र तापर असवारी। प्रीति पूरण जागे खुमारी॥
प्रेम पियाला तहवां पीवहि। निशवासरचित आनंद दीवहि॥
चेतनि चेत होय बल जोरा। जागत साह न मूसत चोरा॥
श्वासा चारि लगनकर भावा। जब उपजे तब संगहि आवा॥
चारि लगन दुइ भाव अपारा। उपजे बिनशै क्रम व्यवहारा॥
एक लगन संग उपजे काया। एक लगन बहुसुख समाया॥
एक लगन दुख दारुण होई। शब्द गहै नहिं दुर्मति खोई॥
एक लगन संग उपजै काया। एक लगन बहु सुख समाया॥
एक लगन दुख दारुण होई। शब्द गहे नहिं दुर्मति खोई॥
एक लगन संग उपजे काया। मोह महामद विषकी छाया॥
विलसत उपजत सब जीव जाई। ना गुरु मिलै ना अर्थहि पाई॥
चारि लगनकर नाम निराला। दुइ मुक्ती दुइ काल कराला॥
उत्पति संग सुधाकी छाया। दुखदारुण होइ तजे काया॥

जे मुनि लगत सँवारे बीरा । उत्पतिकै सँग तजै शरीरा ॥
बाकी जवनिकाल लखि राखा । मेटै अंक कालकी शाखा ॥
उतपति होत लिखे यमराया । सो सब दीसे नरकी काया ॥
सातों द्वीप लखे सहिदानी । वासिल बाकी कर्म निशानी ॥
जोतिक श्वास चलै नर देहा । ताकर जानै सबै सनेहा ॥
दम विस्तार लिखे सब दाऊ । पाछे करै करे जे घाऊ ॥
द्वीप द्वीपकर अंग जलावै । करपग परलो प्रकट दिखावै ॥
चौरासी लक्ष योनिनकी धारा । नरकी देही ते कर्म अपारा ॥
चौरासीकर पातक भारी । नरकी देह सब लिखे बिचारी ॥
करपाछे वासिल लिखि राखै । बाकी अंक मध्यमें भाखै ॥
जमा शीसपर लिखै बिचारी । नित उठीके न्यावे निबारी ॥
सातों द्वीप सुधारे रेखा । ऐसा यमकर बरबस देखा ॥
करमज चारि अङ्क लिखि देई । पाछे सबसों निरणै लेई ॥
रेखा इलालि लिखै विष पूजा । लहसन मसा लिखै तिल गूञा ॥
चक्र लिखै औ आपहि बासै । सन्धि लिखै जीवन कहँ फांसै ॥
नख शिख लिखै कर्मकी खानी । गुण औ गुण नहिं मेटे जानी ॥
जाहि द्वीप जस अँक लिखावै । तहां तहां तस चाल चलावै ॥
रवि शशि अँक दोउ लिखि लेई । पाछे दोष जीव कहँ देई ॥
श्वासा स्नेह लिखे सहि दानी । पाप पुण्य भुगतावे जानी ॥
जैमुनि लगन होय उतपानी । लगन केतुकी सबही हानी ॥
दोऊ लगत साधें शशि सूरा । पावै सत गुरु हाल हजूरा ॥
जो गुरु मिलै तो मेटै रारी । बिन सतगुरु सब यमकी बारी ॥
सतगुरु बिना न होय उबारा । केतो ज्ञान कथै संसारा ॥
जप तप योग यज्ञ व्रत पूजा । काल सनेह और नहिं दूजा ॥

तप साधै रहसे मनमाहीं । काल करमकी लखै न छाहीं ॥
विद्या वेदकी करै उचारा । कर्मवश जीव भये यमचारा ॥
जबलगि हृदय शुद्ध नहिं होई । तब लगि पार न पावै कोई ॥
जाही लगन तन जग लेही । ताही लगन तजै जो देही ॥
सो जीव उतारि जाय भौ पारा । नहिं तौ अटकि रहै संसारा ॥
कालहि बश जो तजै शरीरा । ताकह काल देइ बड पीरा ॥
लगन केतुकी होय न न्यारा । पाछै लेई गरभ औतारा ॥
नर्क खानि भुगतै चौरासी । धरी काया बांधै बिसवासी ॥
सतगुरु बिना लगन नहिं पावै । अंतकाल यम धोखा लगावै ॥
जीवत कथै बहु ज्ञान अपारा । काल चतुराई छंद पसारा ॥
कर्मकी बंसी सब जीव फाँसै । हरी न मानै आनै हासै ॥
तादिन भूलि है सब चतुराई । जादिन काल धरै तन आई ॥
मूरख चतुराई सहज बैलाना । छोटे बडे मरम नहिं जाना ॥
ताते सतगुरु खोजहु भाई । जाते कर्म भर्म मिटि जाई ॥
लगन केतुकी देह बहाई । बाकी सबै कालकी जाई ॥
जे मुनिजन तजै शरीरा । गहै न काल विषयके तीरा ॥
कागद करि जाए भवपारा । मेटे यमकर सकल पसारा ॥
सतगुरुसेती चाल गहि लेई । ताकह काल दगा नहिं देई ॥

समय-काल दगा सब मेटिकै, उतरहु भवजल पार ।
यमकी चाल विचारिके, बहुरि न हो औतार ।

चौपाई ।

धर्मदास औरो सुनि लेहू । जीवन बाह जानिके देहू ॥
जाको होइ सत्यको रेखा । नख शिख देखहु अंगविशेखा ॥
चतुर शील दोउ निरखेउ जानी । करपर देखेहु भक्तिनिशानी ॥
शंख चक्र कंर देखेहु थाना । लक्षण जानि सुधारेहु पाना ॥

बोले मधुर शीलकी बानी । तेहितन होय ज्ञानकी खानी ॥
दहिने ग्रीव मसा जो होई । शब्द विवेकी जानेउ सोई ॥
खंभज होय जाहि कर माहा । यश विस्तार ज्ञान अवगाहा ॥
पलक पसार छत्र जो होई । लोक निशानि अंश जनु सोई॥
नासिका नेह होय जो मासा । कुटिल कठोर रोग तनबासा ॥
बौरनीपर जो गुजौ गूजा । तामस तेज विषयको पूजा ॥
कोतह गरदनी एचातानी । कुबजा गाडर बिषकी खानी ॥
मुख चतुराई हृदय कठोरा । बोले झीन क्रोध बल जोरा ॥
इन जीवन जनि बोधहु जानी । अंतकाल पुनि होवै हानी ॥
नारी नेह विचारहु जानी । देखेहु देह द्वीप सहि दानी ॥
राज गुंज निरखेहु अनुहारी । कर पग शीस लक्षहि विचारी ॥
चंचल चाल पोल होय पाऊ । तेहि जनि कबहु चरण छुआऊ ॥
गुंज होय जेहि मास लिलारा । तेहि बोधते होई कर्म अपारा ॥
वोठ भुजंग औ जीव भुजंगी । विष बरजोर बसै तेहि संगी ॥
नेत्र गुंज ए ऊंच लिलारा । कामलहरि बहु जहर पसारा ॥
हँसत वदन चालै चतुरंगा । बोधत ताहि होत सुख भंगा ॥
नैन शेष निरखे जेहि ओरा । ताकह कष्ट देइ तन चोरा ॥
शुभ रंगुत्र होई विषखानी । क्षीरे छिर विष बालककी हानी ॥
सो गुण छांडे तासु शरीरा । द्वादश कँवल बसे बलबीरा ॥
नाभिकमल होइ रेखा तीनी । बाएँ अङ्ग होए शशि हीनी ॥
कच्छदीप होइ गुञ्ज चितेरा । परसत ताहि कालको चेरा ॥
जम्बुद्वीप होइ गुञ्ज गहीला । लहसन मासा होइ जो ईला ॥
तेहि परसै औ बेधे जानी । गुरू शिष्य दोनोंकी हानी ॥
मीनांहि द्वीप बिकट होइ रेखा । ताके अङ्ग काल की रेखा ॥
बांझ मुआ बछ गूंगी होई । कलपत जाय कालपुर रोई ॥

कूर्म स्नेह लक्ष कर जोरा। चतुर सनेह ज्ञानबल जोरा ॥
पग छतनार होइ जेह जानी। पुस्तपांव पर काल कुबानी ॥
समय-चरण पलौ सम होय कर, घटिका पलो प्रमान ।
ज्ञान सनेही दूत है, रोम २ भगवान ॥

चौपाई।

दूनो अंग बिचारेहु जानी। एकरज भक्ति एकविष खानी ॥
दोऊ अंग लक्षण गहो शरीरा। पाछै देहु मुक्ति बरबीरा ॥
परिचय भेद विचारहु जानी। पान लेत जिव होय न हानी ॥
लक्षण लक्ष्य होय सम तूला। पावै सतगुरु मुक्तिके मूला ॥
समय-आदि निशानी देखिकै, बांए दहिने बाम।
शब्द सनेह नेह करि, तब दीनों निजनाम ॥

चौपाई।

बांए अंग मसा जो होई। तीरथ अंग रेखा हो दोई ॥
बांए अंग विषयकी बासा। माया सधन वंश कुल ग्रासा ॥
दहिने अंग विषय जो होई। शीस संपति सुख ग्रासै सोई ॥
बिकटदंत होय जेहि बारी। शीलवंत सुख प्रेम सुधारी ॥
बिरर चिकुर मुख चुम्ब सनेही। विहसत वदन सदा सुखनेही ॥
उज्ज्वल नेह सदा सुखदाई। शील सनेह भक्ति बहुताई ॥
हंस गमन सतगुरु सों नेहा। मधुरी बोले प्रेम सनेहा ॥
कर पद कोमल शरद शरीरा। सुत संपति जैसे दारुण धीरा ॥
मधुर बात औ चमकै देहा। सबते बोलै सुरति सनेहा ॥
सुरतिवंत प्रीतमकी प्यारी। पल्लो लांव जेठ पुर भारी ॥
श्यामगान लहसन तन माहा। माया संघ न औ ग्रासे नाहा ॥
राजवरण प्रिय श्याम शरीरा। पिया हि आहि परीमल गंभीरा ॥
बगलधि मुख आमिष जो होई। तन प्रसेव सुत सुतहि विगोई ॥

लभे गात मोट तन भारी । बिरह बिकार क्रोध अधिकारी ॥
छोट शरीर पातरी वामा । आपु घर तजै अन्त विश्रामा ॥
निहली चितवनि एँचा तानी । बहुते पुरुष एक पटरानी ॥
विहसत बोले कुटिल निहारे । आपु जरे औरन कहँ जारे ॥
आगे चलै पाछे तन देखे । गुण औगुण एको नहिं लेखै ॥
ऊपर हँसै मनही पछताई । देइ थोरहिं बहुत पुआई ॥
एक थन छोट कठोर कुवानी । एक थन झालरि विषकी खानी ॥
नाभी उपर तीनि होइ रेखा । सुखसम्पति सपनेहु नहिं देखा ॥
इन्द्री मांझ गुञ्ज होइ भारी । जो परसै तेहि करैं खुआरी ॥
मोट पतङ्ग चाकरी चाला । तेहि देखत पिय होइबे हाला ॥
पग पातर पलो छत नारा । परसत बास परे यम धारा ॥
कनअंगुरी अधर तिन लागे । आपु नाह तजि परघर बागे ॥
अस लक्षण होइ जाके गाता । प्रान लेइ करै यम घाता ॥
कुम्भ लिलार खम्भ जो होई । जो परशै सो जाय बिगोई ॥
कर पग पलों गुञ्ज सनेही । परसत होइ भालुकी देही ॥
जोरे पुअर करमहँ होई । नाहरि नाहक ग्रासे सोई ॥
ग्रहहि होय लक्ष तिरशूला । काल स्वरूप होइ अस्थूला ॥
मुक्तिपन्थ कबहूं नहिं चाहै । सदा विकार विरह रस लाहै ॥
चञ्चल चित्त थिर नहिं होई । भजन भङ्ग रस भक्ति बिगोई ॥
वरुणी बसै बिसंभर जोरी । नेत्र बिलोन रंग होइ गोरी ॥
झंखत फिरै प्रकट नहिं होई । अन्तर भक्ति ऊपर होइ छोई ॥
प्रेमवन्ती होइ सुरति निहारै । आप तरे औरन कहँ तारै ॥
करै दंडवत निर्भय नारी । भक्तिवन्त बहु लीला धारी ॥
बिगसित बदन शीलकी आंखी । कुल परिवार भक्तिगण साखी ॥
सत गुरु नाम सुनै वचुपावै । मण्डल चारि शब्द फैलावै ॥

हर्षित होइ सतगुरु गुण गावे। भक्ति कि बातसदा मन भावे॥
गुरु सनमुख होइ सेवा लावे। सहाकाल तेहि मस्तक लावे॥
संपुट वदन क्षीणता होई। सतगुरु शब्दहि लेहि बिलोई॥
सतगुरु देखि न परदा आने। शब्दकी चाल सदा पहिचाने॥
सदा अधीन रहे तनमांही। भागे काल देखिके ताही॥
कर जोरे सनमुख शिर नावे। लाज कानकी दशा मिटावे॥
ऐसी लक्ष गहे तन पासा। पावन पान लोक होइ वासा॥
ऐसी लक्ष विचारेहु हंसा। दीन्हेहु ताहि शब्दकर अंशा॥
लाज काज कह देहु बहाई। भेद सुधारत काल पराई॥
माता बेटी भई नेबारी। लज्जा तजिके काल बिडारी॥
लोक लाजकी दशा मिटावे। तौ रिपुकाल निकट नहिं आवै॥
रामचंद्र त्रिभुवन के राजा। लोकलाज बदि कपिदल साजा॥
जानि परी नहिं यमकी बानी। ताते काल कीन्ह तन हानी॥
लाज लिए तन करे उदासा। तेहि तन भरम भूतकर बासा॥
गुरुसों करे कपट चतुराई। चाल बिहून कालपुर जाई॥
भक्त कहावे लज्जा नहिं तोरे। निश्चल काल नर्क महँ बोरे॥
भक्ति करे कुल दशा मिटावे। परदा ठानि काल पुर जावे॥
सो सतगुरु जो होय सयाना। चाल चलावे शब्द प्रमाना॥
आगत परदा मेटि बहावे। पाछे भक्ति पंथ महँ आवे॥
कपट छाडिके शीस उतारे। हंस दसा धरि मुक्ति सुधारे॥
शीस उतारि हाथपर लेई। पाछे पाँव ताहिपर देई॥
भक्तिका चित हर्षित होई। ममता मोह लहर तज दोई॥
कामिनि कनक काल करफन्दा। भएऊ कालकपटि मन मन्दा॥
दुवो शीस अर्पना लाइ। मुक्ति पंथ पावे तब भाई॥
पावे भेद शब्द सहि दानी। काल कलपना मेटे जानी॥

समय–निठुरीनिठुरै नाचै, चारिउ अंचल छोरी ।
धनी पियारी होइ रहै, यमसो तिनुका तोरी ॥

चौपाई ।

इहि विधि मुक्ति गहे जो कोई । ताको आवा गौन न होई ॥
आवा गौन विचारै जानी । काया कष्ट होइ नहिं हानी ॥
सतगुरु शब्द जो लागा रहै । निकसि चरण सतगुरुको गहै ॥
तीन लोक नाद जब जाई । सतगुरु कौ पग रहै समाई ॥
तिसरी श्वासा साधै जानी । कुल अभिमान मिटै सब खानी ॥
नरको लक्ष पारख करि लेहू । पाछे बाह ताहि कह देऊ ॥
चंचल चपल कुटिल तन होई । पान पावै तन जाय बिगोई ॥
ताको लक्षन नर्ककी खानी । बोधत होइ दुवोंकी हानी ॥
राज बरण तन बंसी लावे । आप नष्ट होइ और नशावे ॥
जो वाकी संगति बैठे जाई । अपनी दशा ताहि पहराई ॥
सो सतगुरु जो होय सियाना । लक्षण देखि देइ तब पाना ॥
आगत पान धरै चितलाई । पाछे निर्णय शब्द बुझाई ॥
पानलेत चित हर्षित होई । चालु चलै नहिं दुर्मति खोई ॥
ताहि देहू गुरू पिपीलिका । लक्षग हीन रेष होइ जिसका ॥
तापर अंक लिखे सहिदानी । काल कलाधारि देइ निशानी ॥
जैसा लक्ष जाहिपह होई । पान देहु तेहि तहाँ बिलोई ॥
भामत पौन लिखै तेहि माहाँ । दिटै इलाका गुरुको ताहाँ ॥
जाके होई सुमतिकी खानी । ताहि देहु गुरुनाम निशानी ॥
राज बरण मुख शीतल बानी । ताघट होई ज्ञानकी खानी ॥
पूरी तत्त्व पान जो पावै । यमकी नाक छेदि घर आवै ॥
राजवर्ण होय क्षीण शरीरा । ता घट काल करै नहिं पीरा ॥
राजबरण मुख गुंज चतेरा । सो जिव होय कालको चेरा ॥

तापर काल लिखै सहिदानी । बोलत धीर हृदय कुबानी ॥
लक्षण भेद कहो सहिदानी । कालसभा भयभीत निशानी ॥
कालकला निरखेहु बहु भांती । करहु विचार दिवस औ राती ॥
कृपण होय माया नहिं छाडै । जोरी जोरी बरनि महँ गाडै ॥
आशा रहै तहां लपटाई । मुक्ति होय नहिं यमघर जाई ॥
देइ ताहि विष गंजित पाना । करम रेख सब देह पयाना ॥
नेत्र बिलोन मसा मुख होई । करत कल्पना जाय बिगोई ॥
लवा शीस होय मुख छाही । हृदय कठोर दया नाहिं ताही ॥
मध्य कपोल होइ तिल खानी । बांये तत्व लै बोलै बानी ॥
बांये भौं मासा जो होई । दहिने दारुण तेज समोई ॥
बांये विभो ताहिके होई । अंत चलै जिव सर्वस खोई ॥
गहरी चितवनि मुख चतुराई । लंपट चोर होइ दुखदाई ॥
छोटी गर्दन राजस भारी । मिथ्या बोलै होय खुआरी ॥
ताघट जीव दया नहिं होई । बोधत ताहि काल पुर रोई ॥
ज्ञान ऊपजै कुमति शरीरा । तेहि जनि देहु मुक्ति बलवीरा ॥
एक समय पान जो पावै । आपु जाइ संगति बगरावै ॥
विषयहि लम्पट होय जुआरी । इनते होइहै पंथ खुआरी ॥
शब्द पेलीजानि पांव छुआवहु । महाविकारतन कष्टहि पावहु ॥
ताते आगम कहौं पुकारी । कुमति छुडाय पान निरुआरी ॥
हर्षित वदन रहै दिनराती । गुरुसों प्रीति करै जेव स्वाती ॥
सीपेही सदा स्वाती आसा । उपजै मुक्ती ज्योति प्रकासा ॥
रहनि गहनि बूझे करजोरी । दीन्हेहु ताहि शब्दकी डोरी ॥
गुरु सन्मुख होइ सेवा लावै । काम क्रोध ममता बिसरावै ॥
सदा अधीन. रहै गुरुआगे । पावै शब्द सहज अनुरागे ॥

गुरुपद छांडि अन्त नहिं जाई । चुशै अमी रस पीवै अघाई ॥
समता धीर होइ जेहि गाता । तेहि यम कबहि करै नाहिं घाता ॥
गुरुगम भेद बूझि सब पावै । ममता मोह सबै बिसरावै ॥

समय-गुरुकी आज्ञा आवै, गुरुकी आज्ञा जाय ।
कहै कबीर सो हंस भए, बहुबिधि अमृत खाय ॥

चौपाई ।

क्षीण अधर औ नेत्र विसाला । गुरुगमी बोले शब्द रिसाला ॥
जो कोइ तपत ताहि पहँ आवै । अमृत सींचिके ताहि जुडावै ॥
पावै अमृत हर्षित होई । मोह महाबल जाइ बिगोई ॥
शब्दकी परच बोलै बानी । तन अभिमान बिसारे खानी ॥
तत्व तमाशा निश दिन देखै । भाव अभाव एक करि लेखै ॥
आसन मारि समाधि लगावै । एक पग संपुट पाछै लावै ॥
उलटी बाह शीशपर राखै । पूरणतत्व अमीरस चाखै ॥
पलकन मारै राख साधी । तिरवेणी तट राखि समाधी ॥
अमर महातम तत्वहि राता । दरशै सूख सागरके दाता ॥
ज्ञान महातम तबही पावै । अमर समाधि एकपल लावै ॥
तबही मिटै काल करदाऊ । दुविधा दूसर सब बिसराऊ ॥
अमर समाधि महा फल पावै । जमदारुन तेहि शीश नवावै ॥
करपग कोमल रोग न व्यापै । काल कला तेहि देखिकेकाँपै ॥
अखंड मंडल गुफाके तीरा । दरशै ज्योति अखंडित धीरा ॥
जो देखै तो प्रकटै चोरा । देखे बिना ज्ञान होय भोरा ॥
तत्व समाधि लगावै जानी । उपजै ज्ञान अमी रसखानी ॥
सत्य सुकृत पग परसै जाई । रोग न व्यापै काल न खाई ॥
तत्व तमासा गुरुमुख देखे । तत्व छाडि निहतत्व बिबेखे ॥
तत्व समाधि करै नित पूजा । सत्य सुकृत तजि और न दूजा ॥

पाँवके ऊपर पाँव चढावे । हाथ फेरिके संपुट लावै ॥
संपुट शीश छुआवै जानी । निरखै अरध उरधकी बानी ॥
कसनी कसै बहत्तर डोरी । सुरति शब्दसों राखै जोरी ॥
अरध अवाज लखै निरबाना । राग छतीसो सुने बँधाना ॥
मुरली टेर अर्ध धुनि होई । ज्ञानगुफा चढि निरखेहु सोई ॥
सुनत अर्ध धुनि उन मुनिराता । बूझै आदि अन्तकी बाता ॥
मन मकरंदी के गुण पावे । मगन होई चंचल नहिं धावे ॥
मनसर होई सरै सब काजा । छाँडे कपट शीश बिनुराजा ॥
नख शिख मनै बियापे सोई । मन चीन्हे मन आपे होई ॥
येह मन शक्ती येह मन सीवा । येह मन पांच तत्त्वको जीवा ॥
इह मन लेके उन मुनिरहै । तीन लोककी बातें कहै ॥
ऊन मुनीमें रहै रहावै । ताकर हंस काल नहिं पावे ॥
ऊनमुनी महँ लावै तारी । अङ्गमें महलमहँ सुरति बैठारी ॥
उनमुन महँ जो बासा करै । अगम महलमें सुरति लै धरै ॥

समय-उन मुनि चढी आकाशको, गई गगनपर छूटि ।
हंस चले जो जातहैं, काल रहे शिर कूटि ॥
उन मुनीमें धर्मदासबसै, बंक नाल गहिजोर ।
शिर ऊपर सतशुक्ति तहै, तहां शीत शब्दकी डोर ॥

चौपाई ।

उनमुनी सांची सुरति है बासा । धर्मदास गहि राखहु पासा ॥
सोहं सार मूल धुनि राता । तासु नेह मिले गुरु दाता ॥

समय-हंसा सोहंग मान करै, निकसि खेल मैदान ।
तहां सुरति बैठारिकै, नित प्रति लावै ध्यान ॥

चौपाई ।

अमर आसन करो बिचारी । धर्मदास यह कथा निनारी ॥

जो कोइ मूल ठीक धरि आवै। सोई अमर समाधि लगावै॥
सार समान रहै दिन राती। पावै आदि अन्त उतपाती॥
अमर महातम पावै नीका। अमर समाधि गहै धरिठीका॥
पांच पचीस सकल सब जानै। आवत जात श्वास पहिचानै॥
श्वासा सार शब्द निरुआरै। अमरसमाधि को भेद बिचारै॥
निशि वासर है शब्द समाना। जागत सोवत एक ठिकाना॥
अमरमूल धुनि शब्द समाई। बोलै ज्ञान गमी अधिकाई॥
लावे अमर मूल महतारी। अटल रहै मति टरति न हारी॥
अमर सुहावन आसन मूला। नख शिख भेद गहै अस्थूला॥
तनकी लक्ष्य लखै विस्तारा। लक्ष्य अलक्ष श्वास गुँजारा॥
लक्ष्य लखै सो साधु कहावै। बिना लक्ष्य सतगुरु नाहिं पावै॥
सतगुरु चीन्हे के सहि दानी। काल व्याल भयभीत निशानी॥
काल काल बन रेख बनावा। नख शिख जानै तासुसुभावा॥
पतरी ग्रीव नासिका भारी। भृकुटी देह नेह होई कारी॥
दाहिने ग्रीव मसाको बासा। गुण गंभीर ज्ञान परकासा॥
नेत्र रसाल बदन मनिहारा। शब्द सनेही सदा पियारा॥
सदा हृदय सतगुरुकी आसा। बोलै ज्ञान गमी परकासा॥
पूरण लक्ष पक्ष दोइ होई। शब्द गहै बहु भेद बिलोई॥
ललाट पाट रेखा होई चारी। सुरति सनेही सुरति सुधारी॥
तेहि जानेहु पीछल सहिदानी। पाछिल बोध भए सब हानी॥
सुनत शब्द मिलै सो आनी। शब्द सनेह गहै चित जानी॥
पलक छत्र औ झीने बोलै। पावत पान कपट सब खोलै॥
ताकहं जानहु हंस सुहेली। आनि मिले यम परदा खोली॥
भीतर वचन कहे हित जानी। पाछिल सुरति भई जत हानी॥
चरण टेकि चित बोधहु जानी। जाते आगे होइ न हानी॥
रोष करहु तो मोर दोहाई। गुरुके रोष लोक नहिं जाई॥

समय–गुरु माथेते उतरै, शब्द बेहुना होय।
ताको काल घसीट है, राखि सकै ना कोय॥

चौपाई।

गुरु भृंगी कर एक सुभाऊ। मेटे करम करे मुकताऊ॥
शीख जो मन बसिदुबिधा करई। गुरु पुरा होइ चित ना धरई॥
चित तो धरै शीख बिगारै। आपु सहित भवसागर डारै॥
दीन दयाल गुरुनकी रीति। जैसे चन्द चकोरहि प्रीति॥
सीखे सिखापन बहुविधि देही। भरम मेटि निर्मल करि लेई॥
शीख भेद जो पूछे आई। क्रूर होइ तौ उठै रिसाई॥
पूर होइ तो शीखहि बोधे। कलह कलपना तजिकै सोधे॥
शीख अज्ञान पार नहिं पाई। ताते करै कपट चतुराई॥
करै कुटिलता बोलै जोरा। गुरु पुरा होइ करै निहोरा॥
समय जानि बचन मुख बोलै। कहुँ शीतल कहुँ तेजस डोलै॥
समय जानि बचन मुख बोलै। कहुँ तेजस कहुँ शीतल डोलै॥
जब जब शिष्य करै अज्ञानी। हृदय शुद्ध मुख कहै कुबानी॥
भाव विचारि शिष्य सोंकहहीं। शिष्यकी दशा जो नीके लहहीं॥
जोर कहनको शिष्य डराई। गुरुशब्द महँ लेइ मेराई॥
गुरु पुरा होय ताहि सुधारे। करम काटि भव सागर तारे॥
गुरु सुवास सबके सुखदाई। गुरु राखै तो काल न खाई॥
जानेहु ताहि काल अभिमानी। काल अङ्ग धरि प्रकटे आनी॥
गुरु नाता धरि शिष्य नशाई। रहनि गहनि नहिं एक लखाई॥
अज्ञान दिसासे शिष्य कहावै। गुरु होय गुरुगम समुझावै॥
शिष्य करै बहु चंचल ताई। गुरु पुरा होय लेइ बचाई॥
गुरुकी दशा ज्ञानकी भाऊ। अज्ञान दशाते शिष्य कहाऊ॥
रण ज्ञान गम्मी जेहि होई। हंस उबारन सत गुरु सोई॥

सतगुरु कला अनन्त कहावे । ताकर भेद शिष्य किमि पावै ॥
ताते शिष्य कहिय अज्ञाना । गुरु बतावै शब्द निर्वाना ॥
शिष्य नाता धरिजो कोइ आवै । सतगुरु होइ सत राह बतावै ॥
गुरु सोई जाको चित थीरा । सुरति सरोतर साजे बीरा ॥
केतो चूक शिष्य सों परई । सतगुरु पूरा सब पारि हरई ॥

समय-जाका चित्त समुद्रसा, बुद्धिवन्ता मति धीर ।
सो धोखै बिचलै नहीं, सतगुरु कहै कबीर ॥

चौपाई ।

लक्षण लक्ष्य बिचारै जानी । निरखै आदि अन्त सहि दानी ॥
गुरु पूरा शिष्य होय उदासा । गुरुगम लेई शब्द परकासा ॥
आदि अन्तकी परिचय लेई । पाछे भेद शब्द तेहि देई ॥
परखै परिचय परखे रेखा । शब्द सनेह सुनावै लेखा ॥
त्रिकुटी तीर गुंज जो होई । परिखै शब्द रहैं तन गोई ॥
ममता मोह करै हँकारा । अन्तर कुटिल चतुर बारिआरा ॥
पलक भुअङ्ग परोहन साथा । हृदय मलीन नवावै माथा ॥
वरौनीपर जो गुञ्जै गुंजा । महा सुबुद्धि होय मुख पुञ्जा ॥
हृदय मलीन होय मुख छाहीं । गुरु गामि शब्द विचारै नाहीं ॥
लहसन मासा होय मुखमाहीं । शुक्री रवी जमहिकी छांहीं ॥
राज बरन औ लँबी देहा । गुरुगामि शब्द बिचारै नेहा ॥
नेत्र कीर्ति कुटि बृक्षकी शाखा । बोले सदा मधुर ध्रुनि भाखा ॥
बरन छीन लौं नेत्र मलीना । हृदय कपट मुख रहे अधीना ॥
भ्रुकुटी ऊँच शीश छतनारा । ज्ञान महाबल कथै अपारा ॥
लम्बी नासिका श्रवण है छोटा । हृदय शुद्ध मुख बोलै खोटा ॥
राज बरनाहि मोट तन भारी । छोट शरीर ज्ञान अधिकारी ॥
मोटी नासिका ऊँच लिलारा । ज्ञानहीन मन कथै अपारा ॥

पातरि अधर कपोलन्ह माँसा। ज्ञान महाबल कथै निरासा॥
धरनी धीर धरै गरमाई। डाढी दरबर औ बहुताई॥
आगे ग्रीव गुंज होइ भारी। माया सघन क्रोध अधिकारी॥
भुज भुअंग नागीनि मनिहारा। करपग रसना रेख सुधारा॥
रेखा चारि होय चतुरंगा। काल कला धरि प्रकटे अंगा॥
करपर होइ दाधि भंडारा। ताके निकट भजनकी धारा॥
सोई धार अखंडित होई। क्षीण भंग मति गहे बिलोई॥
धारा मिलि अवधी कह आई। हंसदशा धारि पंथ चलाई॥
सो धारा होइ मोट सनेही। ज्ञान गहे मति धरे ना देही॥
वारिष धारा मिलै सुधारा। हृदयशुद्ध प्रीतम मनियारा॥
भजनभंग कबहूँ नहिं होई। गहै शब्द गरभेद बिलोई॥
यशकी रेख बिचारै जानी। जेठ पलौ जीवकी खानी॥
तैसे ताहि बिचारहु रेषा। तहाँ २ तस कर्म विशेषा॥
अवधिके नीचे चुंगल होई। अयश करत यश पावे सोई॥
विश्वा जानि लक्ष गहि लेऊ। जस विश्वा तस सुमिरण देऊ॥
बिश्वा बीश होय नर पूरा। शब्द सनेही गुरुगमि शूरा॥
अजड होइ जड जनमें आई। घटी बढी होइ अंक लिखाई॥
पींडज खानि देह धरि आवै। बारह पंद्रह अंक चढावै॥
ऊष्मज होइ जग लेइ अवतारा। नरके कर दश अंक सुधारा॥
अचल खानि जग जन्मे आई। बत्तिस विश्वा अंक चलाई॥
चारि खानिकी लखै निशानी। दीहेहु ताकहँ शब्द सहि दानी॥
खानी लक्ष बिश्वा लिखि राखै। कर्म अकर्म भिन्नके भाखै॥
पिंडज चारि भांति तन होई। कर्म अकर्म सुधारै सोई॥
कर्मी नाहर घातिक जेता। अंक सुधारि लिखै कर तेता॥
एके करमह सती औ गेडा। लिखै अंक करमकर बेडा॥

गाय भैंस परमारथ खानी । जैसे अंक सुधारै जानी ॥
पशु पक्षी परमारथ होई । नख शिख रेखा लखे बिलोई ॥
अंडज चार बरनकी काया । कर्म अकर्म तहाँ निर्माया ॥
अंडज मीन सुफल तन होई । तैसे अंक सुधारे कोई ॥
अंडज पक्षी तन निरदाया । तहाँ २ तस अंक चलाया ॥
करमी पंछी जोरा बाजा । तैसे अंक सुधारै साजा ॥
अंडज नाग कर्मकी खानी । बोरे काल नरक सहि दानी ॥
ऊष्मज बरन चारि तन होई । गुण अवगुण सब लिखै बिलोई ॥
भृंगी आदि कीट सुखदाई । भजनके अंक लिखै यमराई ॥
बहुतक कीट होय सुखदाई । मारि खात नर रोग नशाई ॥
तासु लिखै परमारथ खानी । कर्म अकर्मकी सुनिये बानी ॥
एक कीट दुखदाई होई । कीटहि कीट खात है सोई ॥
सो निशान करमकर होई । जेतिक अंक लिखै तन सोई ॥
एक कीट नर दृष्टि न आवै । तेहि अवगुणते काल नचावै ॥
अचल खानिकी चारि निशानी । गरम शीतल लिखै अमृतवानी ॥
गुण औगुणको करै विवेका । गुण अवगुण नरके कर रेखा ॥
सो सतगुरु जो सोइ सयाना । चारि खानिको लखै निशाना ॥
पाप पुण्यको करै विचारा । ताहि तहाँ निज पान सुधारा ॥
कर्म जीव कर्महिकी खानी । काल कर्मकी बोलै बानी ॥
सतगुरु सोइ जो लक्ष्य विचारै । लक्ष्य विचारिके पान सुधारै ॥
चोर साहुको करै विचारा । भाव विचारि पान निरुआरा ॥
कपटी जीव कर्मबसि अंधा । शब्द सुनत चित होइ विष मंदा ॥
अस कर्मज जब देखि बिचारै । कर्म मिटाय पान निरुआरै ॥
खानिकी लक्ष फेरि जब लेई । तब तेहि शब्द परीक्षा देही ॥
विश्वा निरखि विचारै रेखा । गुण अवगुणका जानै लेखा ॥

कर पलौ कर रेख विचारे । तिरछि विषमको लेख सुधारै ॥
तिरछा रेख बिस्नाकी खानी । जस देखै तस बोलै बानी ॥
विषम रेख कर्मच अधिकारी । जत कर्मज तत रेख सुधारी ॥
ततका मल हरि परसे परनारी । सुनो धर्मनि मैं कहौं विचारी ॥
नख उज्ज्वल होइ गुंज चितेरा । कलह कलपना यमकर घेरा ॥
करपर लिखै बिषमकी खानी । गुण औगुणकी लिखै निशानी ॥
तिरछा रेख नारीकर नेहा । तासु नेह सुत सुता उरेहा ॥
माता पिता बन्धु भरतारा । विषमरेख यमालिखै बिचारा ॥
अवधि तीर दोउ तिरछा उरेहा । भक्ति भंडार विषमकर नेहा ॥
मीन पूछ भंडार सुधारी । सुख संपति बिभौ तन टारी ॥
नवो खण्ड यमरेख सुधारी । तेहि रेखनकर गहो विचारी ॥
गुण अवगुणसबतबहि लिखावहु । युक्ति जानिके हंस चेतावहु ॥
हंसा दासा तबही नर पावे । जब करताकी दशा मिटावै ॥
काल कर्म कालकी खानी । चाल चलावै नरकाग समानी ॥
काक कुबुद्धि तेज तनमाही । सतगुरु शब्द बतावहु ताही ॥
काक कुबुद्धि तजे कुटिलाई । तब सतगुरुके शरण समाई ॥
काक कुबुद्धि तन चाल मिटावै । तब निर्वान परमपद पावै ॥
बुद्धि फेरि पलटावै बानी । सतगुरु शब्द गहे सहिदानी ॥
लोक लाज कुल दशा छुडावै । तब कौआते हंस कहावै ॥
यम रेखन की जानै बानी । सो सतगुरु सोइ तत्त्व ज्ञानी ॥
रेखा विना न लेखा पावै । बिन लेखा नाहिं गुरू कहावै ॥
सूकर खान गीध औतारा । बिनु यमरेख लखै नहिं पारा ॥
यमकी रेख सकल जब जाने । गुण अवगुण तबही पहिचाने ॥
करपर होय चक्रकर थाना । शंख सीप गुरु भेद बखाना ॥
पाँचों चक्र होय सम तूला । योगकला चतुरथ अस्थूला ॥

एकचक्र अथवा दुइ होई । कछु ज्ञानी कछु दुर्मति खोई ॥
तीनि होय तो होय उदासा । चार होय तौ सूर्य प्रकाशा ॥
पाँचौ शंख होय करमाहा । दुख दारिद जान अवगाहा ॥
सीप होई तौ होय उदासा । शब्द प्रतीत शब्दकी आसा ॥
नखशिख रेख बिचारेहु जानी । तबहि सुधारेहु हंसकी खानी ॥

समय--नख शिख जानिके, तबही सुधारेहु पान ।
भर्मभूत नहिं दर्शही, हंस होय निर्वान ॥

चौपाई ।

निरखहु आदि अंत सहिदानी । गुण अवगुण देखहुँ बिलछानी ॥
कर्मजीव काल अधिकारा । कर्मके घर लेई अवतारा ॥
वरण भेद परिखै कुल जाती । रेखा लेख देखै उतपाती ॥
कर्मी काल कर्म बश होई । गुण अवगुण सब देखि बिलोई ॥
उपजै चोर जुआरी झूँटा । कर्मी काल कर्म धरि लूटा ॥
कामीके घर कर्मी होई । कर्म रेख तब देख बिलोई ॥
कर्म खानि कायामहं बासा । सुनै शब्द चितहोइ उदासा ॥
भर्म भूतकी गहै निसानी । पूजै शिला औ उलछै पानी ॥
मारु मारु मुख बानी भाखै । मन बशि जीव काल घर राखै ॥
नेत्र बिरह रस भ्रुकुटी छीना । कबहूं चंचल कबहुँ मलीना ॥
बालक होइ पौनके साथी । मदमातै जस मैंगल हाथी ॥
तिन जीवनकी दशा मिटावै । पाछे सत्य शब्द समुझावै ॥
पद्म मुरक जाके तन होई । सो कर्मी जग जीवै लोई ॥
दया लगनकी परमित पावै । निर्मल हो सत्यलोक सिधावै ॥
नेत्र विशाल रक्तकी झांई । सुरति सनेह ज्ञान बहुताई ॥
जब तब चितमहँ संशय आवै । ज्ञान गम्यते मार वहावै ॥
ताकी निर्णय अगम सुभाऊ । पावै सत्य शब्दको दाऊ ॥

काग बुद्धि मन दशा छुडावै। पावै शब्द लोक सो आवै ॥
स्वेत कुष्ठ मद गात मलीना। कर्म बिबश बिषयी लोलीना ॥
जवद कुष्ट मोती मनी भारी। धुन्ध कुहेर बहिरी रकतारी ॥
शून्य भाग्य दाग मतिमारी। फोकट कुष्ट औ गंध पहारी ॥
रक्तबिकार जहर धुनि फीका। अंग मलीन कर्मको लीका ॥
पाछिल कर्मज नरकी देहा। परखे सतगुरु शरण सनेहा ॥
तासु निशान परखिके काया। नेत्र गुञ्ज बिषत्राण बनाया ॥
कर्म निशान दशा पहिराया। तनविकार गुरु वचन न भाया ॥
तेहि जनि देहु मुक्ति बर बीरा। निश्चय काल करै बड पीरा ॥
पीरा सहै जीव शब्द न मानै। गुरु निन्दा निशि बासर जानै ॥
निन्दा करत जाइ यमदेशा। ज्ञान बुद्धि नहिं गहै सँदेशा ॥
गुरुकी दया जो मुखमहँ आनै। लोभ लहरि ममता मन सानै ॥
कबहिं न होहि ताहिकर काजा। कितनों करै बुद्धिकर साजा ॥
गुरु निन्दा कुष्टी औतारा। परै रौर नर्क की धारा ॥
सो सतगुरु जो होहि सयाना। ऐसे जीव कहँ देइ न पाना ॥
पान लेइ अंते बगडावै। स्वर्ग नर्क महँ ठांव न पावै ॥
तनकी दुर्मति लहै न पारा। भजै राज नर्ककी धारा ॥
कर्मी खानि दहे नर पावै। पाछिल अवगुण संगहि आवै ॥
तेहि जनि देऊ शब्द सहिदानी। मानहु सत्य शब्दकै बानी ॥
धोखे आइ पान जो लेई। पाछै समुझि सिखावन देई ॥
सुनत सिखावन हर्षित होई। ताहि देहु गुरुशब्द बिलोई ॥
गुरुकी त्रास करै लौ लीना। सुनत सिखापन होइ अधीना ॥
मानै त्रास रहै लौ लाई। पावत पान करम कटि जाई ॥
उतपनि लगन जो साधुहु धीरा। ताहि लगन सँग साजहु बीरा ॥
नाम पाँन पाँजी समुझायहु। सत्य शब्दकी रहनि बतायहु ॥

कामिनि कनक कलाकी फंदा । अरपै दुनों शीस मनमंदा ॥
कामिनि अरपै कनक चुरावै । इहि बिधि हंसलोक नहिं आवै ॥
कनक अरपि कुलभाव दिखावै । बाजी दिखाइके कला छिपावै ॥
कामिनि कनक करै सम तूला । पावै शब्द मुक्तिकर मूला ॥
चाल विना लागै बडि बारा । तामें नहिंहै दोष हमारा ॥
चाल चलै कुलदशा मिटावै । भक्तिसार धरि लोक सिधावै ॥
कथनी कथै करनी नहिं जानै । ताते अवगुण सबै बखानै ॥
कथनी कथे लोक नहिं जाई । भात कह नहिं भूख बुझाई ॥
पानी कहे प्यास नहिं जाई । कथनि कथ पाछे पछताई ॥
कथनी थोथर करनी सारा । कथनी कथि २ हुये गँवारा ॥
कथनी कथि जो करनी करै । कहैं कबीर सो प्राणी तरै ॥

समय-करनी बोलै पारकी, करपै लै व्यवहार ।
करनी कर शब्दै गहै, उतरै भवजल पार ॥

चौपाई ।

महा शून्यके भीतर रहई । सत्यलोक की बातैं कहई ॥
कहै अर्थ कथ करै विचारा । कहैं कबीर सो शिष्य हमारा ॥
कथै आन करै जो आना । सो अब जानहु पशू समाना ॥
जैसा कहै करै पुनि तैसा । हैं हमहीं हमहीं सों ऐसा ॥
करनी करै कहै तब बाता । ताहि मिलै गुरु समरथ दाता ॥
कथनी कथै गर्भ होय भारी । बिनु करनी सब यमकी बारी ॥

समय-करनी गर्भ निवारनी, मुक्ति सारथी सोय ।
कथनी कथि करनीकरै, तौ मुक्ताहल होय ॥

चौपाई ।

इहिविधि गहै शब्दकी आसा । निश वासर हम ताके पासा ॥
अति अधीन करनी कर शूरा । करनी किये मिलै गुरुपूरा ॥
शूर होय करनी मनलावै । भक्ति करैजग बहुरि न आवै ॥

करनी शूरा कथनी सार। करनी केवल उतरे पार ॥
करनी करैं शूरमा होई। कादर करनी कर न कोई ॥
शूरा होय तौ करनी आवै। कादर होई सो बार लजावै ॥

समय–शूरा सोई सराहिये, अंगना पहिरे लोह।
लरे सकल बँद खोलिकै, मेटै तनकर मोह ॥

चौपाई।

सदा अधीन रहै तनमाहीं। परिचे शब्द विचारे नाहीं ॥
रहे अधीन सतगुरुके आगे। निशवासर सेवा चित लागे ॥
जो लगि नहीं अधीनता आवै। तब लगि सत्य शब्द ना पावै ॥

समय–नहीं दीन नहिं दीनता, नहीं सन्त सन्मान।
ताघर यम डेरा किये, जीवतै भया मसान ॥

चौपाई।

सदा अधीन रहै जो प्रानी। दीन्हेहु ताहि शब्द सहिदानी ॥
कुल अभिमान महानद भारी। भक्ति पन्थ गहि ताहि सुधारी ॥
शब्द लेइ कुलदशा न तोरे। तेहि यम विषम सरोवर बोरे ॥
भक्ति करै कुल कानि न खोवै। आवा गौन गर्भ सुख गोवै ॥
जननी बेटी भैनी बाला। बहिन भयए ततक्षण काला ॥
इन्हते होइहि भक्तिकी हानी। लाज नदी महँ बोरे आनी ॥
कुलकी राह बहारे लोही। कुलना तयारी छुती बिगोई ॥

समय–कुलकरनीके कारने, हँसा गये बिगोय।
तब काको कुल लाज है, जब चला चलाको होय ॥

चौपाई।

कामिनि कनक कालकी खानी। काल कला धरि बोलै बानी ॥
इनते होय भक्ति कर नाशा। ताते बहुरि गर्भ महँ बासा ॥
परदा प्रकट जबे ना होई। बोलै वचन मधुर धनु सोई ॥

परदै रहै लाजकी बँधी । परदा साथ कालकी सँधी ॥
गुरुसों कपट करी धन लीनी । सुरति निरतिबिनुकालअधीनी ॥
कामिनी परदा सति सो ठानै । लाज लिये मुख बात न आनै ॥
गुरुके परदा बांचै नाहीं । बूडै विषम सरोवर माहीं ॥
गुरुसम मात पिता सो नाहीं । गुरु बिन बूढि सरोवर माहीं ॥
गुरुसम मात पिता नहिं होई । मात पिता गुरु जानहु सोई ॥

समय--जे कामिनि परदै रहै, गुरुमुख सुनै न बात ।
ते कामिनि कुतियाभई, फिरै उघारे गात ॥

चौपाई ।

लोकलाज पति सबै बिचारा । लक्षण लक्ष्य सबै निरधारा ॥
जाको होइ भक्तिकी आसा । सतगुरु चरण करै विसवासा ॥
तेजै गर्भ जो निकसी आसा । पावै सतगुरु चरण निवासा ॥
यमको अन्त जानि जो पावै । भवसागर तब साधु कहावै ॥
सतगुरु चरण गहै चित जानी । मेटै कुटिल कर्मकी खानी ॥
सन्त कहावै अन्त सम्हारी । चौदह काल चरण चित धारी ॥
चौदह यमकर सकल पसारा । सतगुरु शरण होइ निरुयारा ॥
चौरासी कर करम अपारा । बिनु सतगुरुको करै उबारा ॥
गुरुकरता गुरुदेव नरेशा । बिन गुरुगम सब भेद अनेशा ॥
गुरुसे दूसर और न कोई । जाते मुक्ति पदारथ होई ॥

समय–गुरुकरता कर मानिये, रहिए शब्द समाय ।
दर्शन कीजे बन्दगी, सुनै सुरति लगाय ॥

चौपाई ।

आगे मिलै बन्दगी कीजै । पाछै चरण कमल चित दीजै ॥
शब्द सुरति मिलि रहै समाई । ताप तपै नहिं सुरति समाई ॥
एकै देह एक अस्थूला । एकै भाव भक्ति कर मूला ॥

शिष्यके हिरदै गुरुके बासा। शिष्य रहै गुरुचरण निवासा॥
गुरु शिष्यसों अंतर नाहीं। मनहै एक देह दुइ ताहीं॥
शब्द स्वरूप गुरूकर बासा। सुरति स्वरूप शिष्यकी आसा॥

समय-गुरू समाना शिष्य महँ, शिष्य लियाकारि नेह।
बिलगाये बिलगै नहीं, एक प्राण दुइ देह॥

चौपाई।

ताहि गुरूसों सत्य जो कीजै। बाहर अंतै चित्त ना दीजै॥
जो गुरु शिष्य हृदय नहिं होई। तासों सत्य करै नहिं कोई॥
गुरु बाहर शिष्य भीतर आवै। दुबिधा धोखा काल तेहि लावै॥
सत्य होय सो सत्यहि जानै। गुरुकह राखि हृदयमहँ आनै॥
गुरु हृदये सो बसै निनारा। सत्य करत जाई यमद्वारा॥
गुरू शिष्यसों बाहर बसई। सत्य करत काल तेहि डसई॥
गुरुकी मति अंतै रहै बासा। शिष्यकी मती गुरूके पासा॥
ऐसे गुरुसों सत्य जो करहीं। सेवा करत काल तेहि धरहीं॥
शिष्य सयान गुरू अज्ञानी। धोखै होइ दुनोंकी हानी॥
गुरू शिष्यकी मति एकै होई। सत्य करै तारै कुल दोई॥
गुरुकी मति जो शिष्यन पावै। काज विसार चिंता मन लावै॥
गुरुको भेद लखै नहिं बानी। सत्य करै कुमती अज्ञानी॥
नवकाऊपर बहुजीव चढावै। खेवा विना पार नहिं पावै॥
खेवनहार चीन्हि जब लेही। पाछे पाँव नउका पर देही॥
खेवन हार चीन्हि नहिं पावै। नउका चढै सो मूर्ख कहावै॥
सागर सुमति मुक्तिकी धारा। ममती न्याव ज्ञान कडहारा॥
करै विवेक चार औ साहू। बिना विवेक घाट लागुन काहू॥
चोर जानिके पाँव न देई। साधु जानिके पारहु जेई॥
चोर साहुकर भाव बतावा। सागर नाव धार दिखलावा॥

चोरके नाम चढै जो कोई । सागर पार कबहुँ नहिं होई ॥
साहुकी नाव होइ असवारा । सागर उतरत लागन वारा ॥
सागर पार मुक्ति कर वासा । जो गुरु मिलैतो करै निवासा ॥
घर घर गुरू घरहि घर चेला । लालच बाँचै फिरै अकेला ॥
जैसे श्वान कामबश धावै । तृष्णा बाँधै अंग लगावै ॥
तृष्णा मिटै गांठि जुरि जाई । पाछे शीश धुनि पछिताई ॥
एहि बिधि होइ दुवोजग भूटा । काल कलाधरि गहै ना खूटा ॥
ऐसी सत्य करै जो कोई । धोखे जाय काल बसि होई ॥
गुरुकी करनी शिष्य जो पावै । तब सत्यकरै सत्यलोक सिधावै ॥

समय-सत्यतो तासों कीजिये, जहवां मन पतियाय ।
ठाँव ठाँवकी सतीसों, कुलकलंक चाढि जाय ॥

चौपाई ।

अंकके मिटत कलंक मिटि जाई । अंकके रहत अकलंक नजाई ॥
अंक लिखा यम एहतन माहा । अंक मिटाइ देहु तेहि माहा ॥
नख शिख अंक लिखा यमराई । चौदह कला थाना बैठाई ॥
गुरुगामि शब्द जानि जो पावै । तब चौदह यमफंद मिटावै ॥
एहि फंदै सुर नर मुनि भूलै । देह धरी धरि सब जग झूलै ॥
चौदह काल बिकार अन्याई । नर नारी घट रहै समाई ॥
भिन्न भिन्नके न्याय विलोवै । पारस निहार अन्तमुख गोवै ॥
प्रथम काल कामके अंगा । नख शिख व्यापै बिषै भुजंगा ॥
चित्तभंग औ कुल व्यवहारा । लाज सनेह सकुच बटपारा ॥
आलस निद्रा रूप बरियारा । लालच लोभ मोहकर धारा ॥
विषय वास बसै बेकारा । इन्द्रचौदह मिलि भक्ति उजारा ॥
भक्ति प्रतीत शितल इन्हनासी । प्रेम बिगारि लगावहि फाँसी ॥
दया धीरज संतोष न आवैं । सुमति सहज लै दूरि बहावै ॥

निर्भय ज्ञान विवेक गरासै। सुरति निरतिले उपजत फाँसै ॥
सो सतगुरु जो होय सयाना। निर्भय लगन देइ तिहि पाना ॥
निर्भय दशा सूर समुझावै। क्रूर कपट और भर्म बहावै ॥
निर्भय होइ भय तिनुका टूटा। नरनारी गुरु यमसों छूटा ॥
लगन सनेह गहै सहिदानी। उतपाति प्रलय बिचारै खानी ॥
आदि अंतकी लगन बिचारै। सत्य दिशा धरि हंस उबारै ॥
चद सूर्यकी गहै निशानी। आदि अंत गुरु भेद बखानी ॥
चंद सनेह लेइ औतारा। सोइ लगन गहि उतरै पारा ॥
ताहि चंदकी नाकी पावै। सो पाँजी गहि लोक सिधावै ॥
सूर सनेह विषम जम जोरी। प्रलय काल चौरासी डोरी ॥
सूर्य सनेह होइ संधारा। मरिके बहुरि लेइ औतारा ॥
जत उपजै तत बिनशै प्रानी। सूर्य सनेह सबनकी हानी ॥
चाँद सूर्य दोय गढके राजा। पौरि पगार बनौ दरवाजा ॥
अहुँठ हाथ गढ भीतर साजा। कपटभाव माया उपराजा ॥
दुइ दरवाजै बनो किंवारा। एकपट रहै एक खुलै किंवारा ॥
दोइ लगनकी राह संवारी। आवत जात लखै वैपारी ॥
आवत एक राह चलि आवै। फिर तेहि राह जान नाहिं पावै ॥
जोनी राह महलमहँ आवै। तहाँ स्वाति मुक्ता बरषावै ॥
तहाँ स्वाति मुक्ता बरषावै। फिरि तेहिराह जायजो खावै ॥
मुक्ता होय जग बहुरि न आवै। देवरूप होय जय जय पावै ॥
जब आव तब खुलै किंवारी। जात समय फिरि मारत तारी ॥
जब वह द्वार जान नाहिं पावै। तारी मारि बहुरि तहाँ धावै ॥
जाने बिना होय मतिहीना। भूलि परै होय काल अधीना ॥
आवत जोन तुरै चढि आवै। सोइ तुरै यम फेरि छिपावै ॥
आनै तुरै आन सो द्वारा। ताते पैर कालके धारा ॥

भूलै आदि तुरौ अस्थाना । ताते काल देहि बाँधि खाना ॥
जो वह तुरौ अंत जीव पावै । खोलि कपाट बाहरको धावै ॥
आदि तुरौ चढि बाहर जाई । पाछै काल रहै खिसि आई ॥
आदि तुरौ बिनु द्वार न पावै । बहुरि २ चौरासी आवै ॥
धर्मदास बिनती अनुसारी । सतगुरु हो मैं तुम बलिहारी ॥
आदि अन्त प्रभु कहो बुझाई । पकर न पावे काल कसाई ॥
अन्त करै पुनि गर्भमें बासा । काया धरे करै रहि बासा ॥
कायाते जब बाहर जाई । ताकर भेद कहो समुझाई ॥
मैं आधीन हौं मतिके थोरा । चरण टेकि प्रभुकरौं निहोरा ॥
आदि अन्त प्रभु कहौ बुझाई । सो सब जानौ चरण समाई ॥
वर्तमान भाषेहु उतपानी । जानेहु आदि भेद सहिदानी ॥
अन्त अवस्था कहौ बखानी । जाते आगे होय न हानी ॥
जाहि द्वार प्रथमें चलि आवै । तुम प्रसाद शब्द लखि पावै ॥
कर्म अकर्म वरण कुल जाती । कहेउ बुझाइ दिवस औ राती ॥
कर्म अकर्म भाषहु बहु भावा । यमकर अंतनजरि सब आवा ॥
कर्मरेख काल लखि राखा । गुरुप्रताप जानी सब शाखा ॥
गुणअवगुण सबकाहि समुझायहु । गुरु शिष्यकर भाव बतायहु ॥
सो सब जानि गही सहिदानी । आदिभेद गुरु नाम निशानी ॥
नखशिख काललिखा सहिदानी । सो सब जानिपरी मोहिं बानी ॥
करम रेख काल लिखि दीन्हा । सो हम जानि दृष्टिमहँ लीन्हा ॥
गुण अवगुण दोऊकर भाऊ । परिखे काल करमकर भाऊ ॥
जहां २ काल लिखी सहिदानी । तू अदया है सब पहिचानी ॥
नखशिख रेखा काल बनावा । सो जो रेख जानि सब पावा ॥
आदि मध्य भाषहु सहिदानी । सो निशान जानी सब बानी ॥
जो भारि कहेउ सिखावन आनी । सो सब जानि करै दिलछानी ॥

कहेहु बुझाय मुक्तिके नाहा। रेखा परखि देहु ताहि बाहा ॥
गुणअवगुणसबमोहि लखिआवा। रेखा परखि तब पंथ चलावा ॥
भाषेहु आदि लक्षकी खानी। सोसब जानि गहो सहिदानी ॥
गुणअवगुणसबमोहिलखि आवा। परखौ लक्ष हंसकर भावा ॥
लक्ष्य अलक्ष्य दोऊ लखि लेहू। पाछै बाँह हंस कहि देहू ॥
नर नारी लक्षण देखि शरीरा। पाछै देहो मुक्तिके बीरा ॥
करपर रेखा लखो सुभाऊ। शीश हृदय नाभी कर दाऊ ॥
कच्छ जंघ औ मीन निशानी। लक्षण परखि चेतावो जानी ॥
चौदह काल विषमकर दाऊ। शरण सनेह हंस मुक्ताऊ ॥
चौरासी कर बीज अंकूरा। संशय मेटि देहु मतिपूरा ॥
करमी जीवहि सूम पठायहु। निःकर्मी कह लोक पठायहु ॥
यह सब भेद विचारेहु जोरा। दगा देइ नाहिं पावै चोरा ॥
उत्पति भेद सबै मैं पाया। वर्तमान हृदये महँ आया ॥
चरण टेककी करौं निहोरा। अंत अवस्था भाषहु थोरा ॥
जादिन अंत अवस्था होई। तादिनकी गति कहो बिलोई ॥
जादिन अंत अवस्था आवै। पाँजी भेद कहो समुझावै ॥
जाते हंसहि काल न खाई। मुक्ति होइ सतलोके जाई ॥
जैसे आवा गमन बतायहु। आदिमध्य सबकहि समुझायहु ॥
तैसे कहो अंतकी बानी। जाते न होय जीवकी हानी ॥
धर्मदास मैं तुम्हैं बुझाई। अंत दशाकर भेद बताई ॥
जादिन हंस देह तजि जाई। ता दिनकी गति कहो बुझाई ॥
सोरह खाई दश दरवाजा। रवि शशि संग जीव तहांगाजा ॥
आवा गौन करै दिन राती। गहो निशान छोडि कुलजाती ॥
धर्मदास कुल जाति गँवावहु। तब तुम शब्दहि पारख पावहु ॥
शशिके संग गर्भ जीव आवै। जलरंगतत्त्व चढिआनि समावै ॥

ताही संग रहै ठहराई। देह सनेह गहै यमराई ॥
काया परचै गहै निशानी। अंतकाल जीव करै न हानी ॥
जादिन अमल कालकी आवै। आगम भेद हंस जो पावै ॥
पावै भेद चित होय सयाना। गुरुते लेइ सुधारस पाना ॥
काया परिचय आगम जानै। आदि अंत कह भेद बखानै ॥
प्रथमहि देह हमारी जो देखै। सो परिचय अवधी घट लेखै ॥
अंत देह हम यमकहँ दीन्हाँ। जानिगहै जीव ताकर चीन्हाँ ॥
देह हमारी निश दिन देखै। पूरण अटल सुफल तन लेखै ॥
जब देखै बिनु शीशकी काया। तब जानै घट काल समाया ॥
छठए मास अवधि नियरावै। हमारि देह यम अछप छिपावै ॥
अपनी देह दिखावै काला। तब जीव जानै काल जंजाला ॥
हमरी देह लै शून्य समावै। अपनी देह प्रकट दिखलावै ॥
यमकी देह शीश बिनु होई। तेहि देखत जीव जाइ बिगोई ॥
हमरी देह बिमल बिस्तारा। काल देह बहुरंग अपारा ॥
जर्द श्याह औ नील सुरंगा। और रंग बहु कला तरंगा ॥
हमरी देह रंग बिनु होई। नखशिख निर्मल देखै सोई ॥
जादिन आदि पुरुष निर्माया। तादिन देह वरण हम पाया ॥
सोइ देह धरि इहवाँ आए। कला अनंत जीव समुझाए ॥
देह धरे बहु लीला कीन्हाँ। ताते देह कालकर चीन्हाँ ॥
कालकला विष बान बनाया। सोइ विष नीर विषै दिखलाया ॥
जब हम चले पुरुषके पासा। काया रही अधरही बासा ॥
काया त्यजी हम भए निनारा। सोई काया रही संसारा ॥
कायाकाल लीन्ह सहिदानी। अपने देश बसायसि आनी ॥
सो काया सबही दिखलाया। जो देखे सो थीर रहाया ॥
सो काया जो अधरहि देखै। शशि संपाति सुख बिभौ बिशेखै ॥

ता काया की यह सहिदानी। सो काया यम हाथ बिकानी ॥
ऐसा काल भया अज्ञानी। हमसे लीन्हि सँदेह निसानी ॥
नरकी देह कालके हाथा। झाँई चले ताहिके साथा ॥
काया सरी गली इहाई जाई। झाँई जानि गहे यमराई ॥
गहै काल औ लेखा लेई। धोखा लाइ नरक महँ देई ॥
तेकाया कर करै विचारा। तीन लोक तजि होए निन्यारा ॥
सहज सून मह पकरै काला। झाँई साथ करै जंजाला ॥
काया धरिके लज्जित कीन्हाँ। तेहि कायाकर माँगै चीन्हाँ ॥
देह धरे कीहिसि अति चारा। झाँई साथ जाए नहिं पारा ॥
सो झाँई जो इहइ बिवेखे। कंठ ध्यान धरि हम कह देखे ॥
अखंड मंडील मह काया रहई। ताकर भेद जानिके गहई ॥
एह काया तजि ईहई बासा। झांई तजी होय लोक निवासा ॥
सत्य शब्द जानै जो कोई। ताको आवा गौन न होई ॥
सत्य शब्द जो जीव न पावै। झाँई साथ गर्भ फिरि आवै ॥
आवा गौन लखै सहिदानी। आदि अंतकी बूझै बानी ॥
गुण अवगुण झाँईके संगा। ताते काल करै मतिभंगा ॥
झाँई झमकि दिखावै गाता। आदि अंतकी बूझै बाता ॥
हमरी क्योंकर ध्यान लगावै। देखत ताहि परम सुख पावै ॥
जब वह काया काल चुरावै। काया परिचय आगम पावै ॥
काया परिचय भेद बिचारै। नाम सुमरिके हंस उबारै ॥
अंग अंगकी परिचय देखै। आगमजानि हरषित मन लेखै ॥
हर्षित रहै सदा दिलमाहीं। शोक मोह कछु व्यापै नाहीं ॥
कर औ शीश जानिके भावा। मास बरष कर आगम पावा ॥
आगम जानि गहै सहिदानी। बोलै सत्य शब्दकी बानी ॥
आगम जानि रहै लौ लाई। छूटत देह लोक तब जाई ॥

समाधान होइ आगम पावै । ताघट चोर न मूसन आवै ॥
लगन जानि जो पाँजी पावै । तत्त्व सनेह विलोक सिधावै ॥
आगम की गति काया देखै । पर्वत नाम मंडल हित लेखै ॥
पर्वत पांच नाम अनुमाना । कहौं भेद सुन संत सुजाना ॥
पाँचौ पर्वत नजरि समावै । काया भेद नजरि तब आवै ॥
रवि लीला एक पर्वत भारी । चंद सनेह दूसर अधिकारी ॥
दुइके बीच सुमेर अनुमाना । देखत ताहि हंस निर्बाना ॥
चौथे मलया गिरि कैलासा । गोमत नाम पँचए परकासा ॥
पाँचौ पर्वत देखै सोई । गुरुगामि बुद्धि जाहि तन होई ॥
जब देखै तब कुशल शरीरा । बिन देखै जानै तन पीरा ॥
रवि गिरिजादिन नजरे न आवै । तेजहि तन ना कष्ट जनावै ॥
चन्द्र शिखर जादिन नहिं देखै । द्रव्यशोक कछु हानि बिवेखै ॥
जादिन कैलास नजरे नाहिं आवै । मित्र हानिदुख खबरि जनावै ॥
गोमत पहार नजरि नहिं आवै । काया कष्ट देश दुख पावै ॥
गिरि सुमेर जा दिनहीं देखै । अन्तकाल तन घाव विशेखै ॥
रसना कान नजरि नहिं आवै । मास सातमहँ काल चलावै ॥
जाकी रसना चूमक वासा । सो नहिं देखै सदा निवासा ॥
पर्वत धवला नजरि नाहिं आवै । मास एक महँ मृत्यु जनावै ॥
तादिन काल चौकी अगआवै । ध्रुवमण्डल नजरे नहिं आवै ॥
सो सतगुरु जो होय सयाना । जैमुन जानि देह तेहि पाना ॥
जबतै काया आगम नहिं पावै । तबतै अमी बीज नहि पावै ॥
काम बसी पावे जो ताही । बोरें विषम सरोवर माहीं ॥
काया श्वास चलै पर मेहा । काल वश्य होय छाँडे देहा ॥
पश्चिम लहरी जो गावै जानी । पांजी द्वार लखै सहिदानी ॥
चंद उगै सूर्य अथवै जबही । हंस सुजन तन त्यागै तबही ॥

पुरी तत्त्व होय असवारा । पहुँचे सत्य लोक दरबारा ॥
सिंधु तेज होय तजै शरीरा । चले तेज चौराशी हीरा ॥
उतपनि लागन देह तजि जाई । संकट गर्भ धरे नहिं आई ॥
अपनी काया आपु बिचारै । आपन आगम आपु सुधारै ॥
औरो आगम कहो बुझाई । जाते अवधि आनकी पाई ॥
गुरू आपु घट परखै जानी । तब पावै शिष्यकी सहिदानी ॥
तन पारि आस परै जो प्राणी । तब निरखै ताकी सहिदानी ॥
झाँई झमकि जोत नहिं दरशै । काया कष्ट काल नहिं परशै ॥
गगन अवाज सुने नहिं बानी । कर पल्लवकी लखै निशानी ॥
मधीक पल्लो दूना करई । पल्लो सब पुहुमीमों धरई ॥
जेठा पल्लव ऊपर उठावै । तासु लहुरा उठि देखलावै ॥
निपल सहुरा पल्लो उठि आवे । तासु जेठ वह अटल रहावै ॥
अटल रहै की यह सहिदानी । काया कष्ट होय नहिं हानी ॥
सो पल्लो पुहुमीते डोले । देह तजे अस आगम बोलै ॥
दरश भयावन वदन मलीना । लंपट बोलै काल अधीना ॥
ताही भूत ताहि दिखलावै । महा भयंकर मोट दरसावै ॥
कर पग शीतल सबै शरीरा । माथ तपै औ पायर बीरा ॥
औषध का गुण व्यापै नाहीं । निश्चय अन्तकाल है ताहीं ॥
नासिका नेह बास नाहिं आवै । थोथरी जिह्वा स्वाद न भावै ॥
हाथ पाँव पुहुमी महँ मेलै । कांपे मेरु काल सँग खेलै ॥
छिन छिन माथ डुलावे सोई । जानहु अन्त काल पेहि होई ॥
आपन भाव दिखावै जबही । विषम कालघट व्यापै तबही ॥
स्वपने शीश काटि कोइ लेई । श्यामवरण कामिनि रति देई ॥
भइसा गदहा हाथी देखै । नाग श्वान औ भालु विशेखै ॥
झुरी नींद परैं निशि सोई । चलैं देह तजि सर्वस खोई ॥

समय–गगनगरज बिजुरी ना चमकैं, तहां दुनो बन्ददेई ।
कहैं कबीर दिन पांच सातमें, हंस पयाना लेई ॥

चौपाई ।

काया परिचय भेद बिचारैं । आपु तरै औरन कहँ तारैं ॥
सो सतगुरु जो होय सयाना । श्वासा नेह करैं बन्धाना ॥
परिखै लगन तत्त्व निर्वाना । गुण अवगुण सब करै बखाना ॥
निशवासर चले सुरकी धारा । कायाकष्ट होइ अधिकारा ॥
तिथि अनुमानलखै सहिदानी । श्वासा सूर चलै बलहानी ॥
बधिकके पहरे आपु उबारै । चन्द सनेह भेद निरुवारै ॥
श्वाशा सार गहै सहिदानी । शशिके घर महँ सूर्य उगानी ॥
जेतिक श्वासा सूर्य उगाई । चन्द्राके घर पीवे अघाई ॥
काया कष्टताप मिटि जाई । शील हंस होवे सुखदाई ॥
कालकी अवधि मिटावै जानी । समाधान होइ गहै निशानी ॥
तेज सुरनकी खा अतिचारा । ताते चले चन्द्रकी धारा ॥
महा अनन्द सफल तन होई । काल कला नहिं व्यापे सोई ॥
जब जब काल सतावे आनी । तब तब भेद करे बिल छानी ॥
साधैं लहरि समुद्र सनेही । तब सुख पावै यह जग देही ॥
साधन करै कहै लौलीना । तत्त्व स्नेह होय नहिं छीना ॥
प्राण आत्माके गुण पावै । जो सतगुरु निज भेद बतावै ॥
परिचय तत्त्व साधना करई । धोखैं प्राण न कबहूँ परई ॥
रूखा रूखा करै अहारा । सोई गहिहै भेद विस्तारा ॥
काम क्रोध तजि करै फकीरी । ज्ञान बुधि धारै तत्त्व धीरी ॥
वाद विवाद सबै विसरावे । दुविधा दूसर निकर न आवै ॥
श्वासा सार गहै गुंजारा । जाप जपै सतनाम पियारा ॥
अजपा जाप जपै सुखदाई । आवै न जाय रहै ठहराई ॥

चारि कमलकी परिचय जानै। गहै भेद निज तत्त्व बखानै॥
फाहा रोपि करे निरुवारा। आदि अन्त सब करै सुधारा॥
योजन चार करै बन्धाना। आसन मारि रहै निर्बाना॥
चारि योजन खूंटी विस्तारा। रूई फाहा जो करै सुधारा॥
सुधा रूई नर नाटक माहीं। खूँटी ऊपर रोपै छाहीं॥
बैठे आसन भूल सुधारी। देखै परिचय श्वास विचारी॥
चलै श्वास रतना गति नेहा। रवि शशि उदय विचारै देहा॥
फाहा सनमुख बैठि रहावै। निरखे ताहि तत्त्व जब धावै॥
पांचौ फाहा रोपै जानी। तत्त्व सनेह करै बिलछानी॥
रविके घर होय श्वासा आवै। योजन एक तीनि तहां धावै॥
एक योजन एक एकै विचारा। प्रलय प्रचंड तेजकी धारा॥
ताहि लगनकी गहैं निशानी। कछु सुख उपजै कछु होय हानी॥
मूलकमल ताकर रहि बासा। तेजपुंज है बुद्धि प्रकाशा॥
ताहि कमलकी देखे आशा। मूलकमल तब होय प्रकाशा॥
तासु लगन लै साजहु बीरा। उपजै बुद्धि ज्ञान गंभीरा॥
ताहि लगनकी पांजी पावै। तेजपुंज मह बहुरि न आवै॥
दूजै योजन ताजि प्रकाशा। ताहि तत्त्व की देखैं आशा॥
योजन तीन जो ह विस्तारा। पृथ्वी तत्त्व जानकी धारा॥
निर्वृत कमल महँ ताकर बासा। काया मध्य सुभर रहि बासा॥
तहां बसै पवन बल वीरा। जाहि पवन संग उपजै छीरा॥
ताके संघ सँवारहु वीरा। निर्मल हंस होय गंभीरा॥
श्वासा साथ पारस सहिदानी। विन रसनाकी बोलै बानी॥
दुसरी घडी चन्द्र सनेहा। गहो बिचार दोखक देहा॥
ताकी श्वासा चल चोचण्डा। कह कबीर मिट दुखदण्डा॥
झीनी श्वास होइ गुञ्जारा। चलै प्रचंड बासकी धारा॥

दूई योजन पैज बिचारा । पौनाविजय बल तहाँ सुधारा ॥
पुहुप कमलमहँ ताकर वासा । देहमध्य नाभी रहि बासा ॥
जाते होय क्षीर बंधाना । होइ खटाई स्वाद अमाना ॥
पुहुप कमल होइ लगन विचारै । पौन सनेह पान निरुवारै ॥
ताहि तत्त्व श्वासा चढि धावै । सोइ कमल जानि जो पावै ॥
जौन कमल तत्त्वकी धारा । तौन कमल नेव बिस्तारा ॥
जाहि तत्त्व सँग पान पठावै । ताहि कमलमहँ लै पहुँचावै ॥
आन कमलपर जीवकर बासा । आनते पान करै परकासा ॥
आन कमलमहँ पहुँचे याना । धोखे काल करे पछताना ॥
जाहि कमलपर जिवका बासा । तहाँ बयान कर रहु प्रकासा ॥
बालककी जिह्वा रहि बासा । सुभर कमलमहँ करै निवासा ॥
ताही लगन जीवके गहई । पावत पान काल ना दहई ॥
संशय कमल देहु जनि पाना । नाहिं तौ हंस होय अज्ञाना ॥
उपरहि पान लेइ यमराजा । संकट शिष्य गुरुकह लाजा ॥
सुरति कमल जीवकर बासा । ताहि कमलपर साधहु श्वासा ॥
पूरी तत्त्व चलै जब धारा । योजन चारि जाय चढिपारा ॥
सुरति कमलपर ताकर बासा । तहँवा पान करै परकासा ॥
पालता पौन ताहिके संगा । परसत ताहि होय नहिं भंगा ॥
पवन सजीवक करै अनुमाना । सो हंसहि लै जाय ठिकाना ॥

समय—चारि कमलमहँ चारि पौनहैं, चारिउ कमल अपीव ।
दीजै पान सुधारिके, जाहि कमलपर जीव ॥
चतुरंगीकी लच्छ नाहिं, तबहि सुधारहु पान ।
द्वादश कमल बिचारि हो, चौकाके अनुमान ॥
चौका चन्दन कीजियो, मलयागिरिको नाम ।
चारों कमल सुधारिकै, मध्य ताहिके धाम ॥

चौका चारि सुधारिके, चारि कमल अस्थान।
चारिउ पौन उरेहिके, देखो सुरति अमान॥
सुरति सनेही पौन कहँ, सुमिरहु सुरति सुधार।
चारिउ अंक सुधारिके, जल दल धरेहु सुभार॥
प्रथमहि चौका कीजिये, चारि खूँट अनुमान।
चौरासी द्वीप सुधारि है, सत्य लोक सहिदान॥
ऊपर पँखुरी द्वीपके, भीतर चौका चारि।
द्वादशदल निर्बान है, देखो सुरति बिचारि॥
द्वादशदल तहां सुरचिके, कीएहु प्रेम प्रकाश।
माया छत्र बिस्तारहू, सती नाम विश्वास॥
जापर बसै निरक्षर, ताहि तत्त्वको नाम।
शब्दसुधारस खानि है, हम तुम तोहिके धाम॥
शब्द सुरतिको नाम गहि, सुमिरै शब्द सुधार।
तब सिंहासन पग धरै, रचै लोक विस्तार॥

चौपाई।

कदली दल आनेहु पनवारा। धरहु नारियर प्रेम सुधारा॥
सनमुख कलशा लेसाजेहु जानी। बाती पांच धरेहु तहां आनी॥
आसन लिखेहु लगनको नामा। भर्मभूत भाजै ताजि धामा॥
दहिने राखहु दल परवाना। मेटै जहर अमी धरि ध्याना॥
निर्मल नीरकी देइ दुहाई। जहर नीरकी दशा मिटाई॥
आसन लेइ लगनको नामा। लगन सनेह सुधारै धामा॥
खरचा पांच धरेहु तिहि माहां। प्रकटे सत्य शब्दकी छांहा॥
बहुबिधि बाससुगन्ध मिलायहु। चौकाके दहिने धरवायहु॥
ताके निकट शिला अस्थाना। रेखा रोपि करेहु बधाना॥
सत्यशब्द ले . रखै बनायहु। ताके ऊपर शिला बैठायहु॥

शिला ऊपर फिरि अंक सुधारहु। शुक्तीकी श्वासा तहँ चारेहु ॥
ता ऊपर पुनि धरहु कपूरा। काल अंश होवै सब दूरा ॥
चौकाके बाँएँ अस्थाना। आराति थार धरेहु सहिदाना ॥
आद्याके श्वासा सुख मूरी। ताको नाम सुधारहु पूरी ॥
अंक सुधारिके आसन कीन्हेहु। ताके ऊपर थार जु दीन्देहु ॥
तिसरी श्वास करुणा मैं उचारहु। सुमिरण सार सत्य मुख भाखहु ॥
सुगन्ध सुपारी तापर राखहु।
चौका कलश मध्य अस्थाना। धरेहु मध्य धोती औ पाना ॥
नारियर मिष्टान मध्यमें राखेहु। धोती पान बचन अभिलाषहु ॥
इहिविधिकी यह सब विधिपूरा। सुमिरतके हम होव हजूरा ॥
लोक निशान पुरुष जो भाखा। सो हम गुप्त एको नहिं राखा ॥
सबविधि ज्ञान तुम्हें हम दीन्हा। अब हम लोक पयाना कीन्हा ॥
नरियर है ब्रह्मा कर माथा। सो हम दीन्ह तुम्हारे हाथा ॥
ताके मध्य जीव सहिदानी। मानतताहि कियहु बिलछानी ॥
ज्योति कपूर कियेहु प्रसङ्गा। काल अङ्ग परसत होइ भङ्गा ॥
सतएँ श्वासा ताके सङ्गा। जाते यमकर मिटै तरंगा ॥
जसा लक्ष्य जीवके पासा। हाथ नारियर नीक सुतासा ॥
कर्मी जीव कर्मके बांधा। निर्णय भेदन जानहिं अन्धा ॥
अङ्ग छिपाइ करै जिव बोटा। ताकर होय नारियर खोटा ॥
निर्मल हँस होइ सुखदाई। मोरत नारियर वास उडाई ॥
निर्मल अंकुर सेतपुर होई। शब्द सनेही प्रीतम सोई ॥
जैसी दशा जीवकी जानी। प्रकट होइ जब नरियर भानी ॥
जेते लपट तासुकी काया। सो नरियरमें होय सुभाया ॥
नरियर एक होय जलरंगी। सतगुरु सत्यशब्द पर संगी ॥
पारसते ताकी उतपाना। हंस दसा धरि निकसी खानी ॥

कर्मी एक रोष निर्मांवा । निरखत ताहि तत्त्व कर भावा ॥
कपट सनेह कर्म सहिदानी । ताकर अङ्गसत्य करै हानी ॥
शब्द विचारि करेहु गुरुआई । पूरी तत्व लेहु सङ्ग लाई ॥
जेतिक लक्ष जीवकी काया । तेते पान साथ निर्मांया ॥
रेखा गुञ्ज बिचारेहु जानी । विषमतिछर करि है जिम हानी ॥
गुरुकी रेखा जाहि पर होई । छत्र सोहावन पश मिति सोई ॥
गुञ्ज औ छत्र शरन मुकतायहु । ताहि पानपर अंक चढायहु ॥
सत्य शब्द पारस परसायहु ।
पारस मनि है तत्त्व सनेही । तासु लगन लै पान उरेही ॥
पावत पान हंस घर जाही ।
पौन सजीवक जावन नेहा । तत्त्व लगन लै सुरति सनेहा ॥
सत्य नाम सुकृत सठिहारा । सो सहिदानी पान सुधारा ॥
छत्रके छल होई जेहि पाना । तापर अंक लिखै निर्बाना ॥
जाहि देहु हंसन कह खाहा । पान छत्र मणि दीजै ताहा ॥
निशदिन रहैं जो सुरति समानी । सो दीजै सीखन सहिदानी ॥
धर्मदास तुम्ह जेठे भाई । हम लहुरे कीन्हा अधिकाई ॥
तुम्हरी वस्तु तुमहिकहँ दीन्हा । अब हम लोक पयाना कीन्हा ॥
जेते जीव आहि जगमाही । सो सब आवै तुम्हरे बाही ॥
तुम्हरे शिर जीवन कर भारा । आदि अन्तको तुम कडिहारा ॥
तुमरे हाथ जीवकर काजा । काल डसैं तव तुम कहँलाजा ॥
वंश बयालिस कुलके राजा । ज्ञान गम्य सबै तेहि साजा ॥
उन्हके पास जीव जेत जावैं । सो सब सत्य लोक कह आवैं ॥
वंशके वंश छत्र मनिहारा । सोइ शब्द सुत वंश हमारा ॥
जेहि वा देइ सो लेकर जाई । काल डसैं नाहिं मोरि दुहाई ॥
वंशके बांह जीव जत आवैं । यमकी नाक छेदि घर जावैं ॥

वंश बयालिस राज तुम्हारा । जिन्हसों पन्थ चलै संसारा ॥
कोटिन्ह दगा वंशपर पराई । कहै कबीर नाम बल ताई ॥
नाम कबीर पान है सारा । इहै नाम काल हंस उबारा ॥
नाम कबीर कहो गुरुराई । बावन लाख दगा मिटि जाई ॥
जाहि देहु औ नाम निशानी । हंस उबारि करै रजधानी ॥
वंश समाहि हंस हिया माँहीं । हंस देहि जीवन कह वाही ॥
अहनिंश नाम हमारो लेई । ताकों काल दगा नहिं देई ॥
भजनी भजन करे सुकहावै । अमर सनेह समाधि लगावै ॥
शील दशा धरि हंस उबारै । विषम लहरि भवसागर तारै ॥
वँश बयालिस अँश हमारा । करपग शीश छत्र मनि आरा ॥
कलावन्त शूद्र सुखदाई । हँसके नायक शरण सहाई ॥
वँशके चरण शीश कुरबानी । अङ्ग अङ्ग हमरी सहिदानी ॥
जाके मस्तक दीन्हें हाथा । काल करम नहिं ताके साथा ॥
चरण छुए रज अमृत लेई । ताकह काल दगा नहिं देई ॥
दया प्रीत सब जानत रहई । काल कर्म सब दूरि खँदे रही ॥
जासों कहै सत्य हित बानी । ताकी काल करे नहिं हानी ॥
जौन जीव सत्य पारस पावै । छोडै देह लोक सो आवै ॥
सुख सनेहसो पारस पावै । सो निश्चय सुख सागर आवै ॥
देह धरि प्रकटे संसारा । शब्द विदेह हंस रखवारा ॥
जाकह देहि सत्यकर भारा । सोई शब्द सुत वंश हमारा ॥
करनी करै वंशकी चाला । ताको नाहिं सतावै काला ॥
करहुँ राज औ पन्थ चलावहु । शब्द सनेह हँस मुकतावहु ॥
राज पाट सौंपो अनुमाना । जम्बुद्वीप छत्र करहि अपारा ॥
आगे चलि है पन्थ विस्तारा । कालकला छल करहि अपारा ॥
तुमरे घर प्रकटीहि अन्याई । हँस दशा धरि पन्थ ननाई ॥

कपटकी भक्ती करहि विचारा। लाजधाज पाखंड पसारा॥
ज्ञानदशा धरि पंथ चलैहै। ममता बाँधि जीव भरमैहै॥
तहां आपु दृढ राखहु ज्ञाना। कालकिकला होय पिसिमाना॥
बाहर काल चतुराइ भखीही। सदा अमान मुक्तिते रखीही॥
सत्य दुहाई फिरिहैं जहां। टिकै न कील कलाकी तहां॥
जो जिव शब्द हमार न मानी। सो जाने वो है यमकी खानी॥
आन मेटि दुविधा फैलई है। सो जिव सपनेहु मोहिन पइहै॥
शब्दकी शरण गहहि लौलाई। निर्मल हंस होइ सुखदाई॥
काल कला धरि प्रकटीहि आई। बिरलै हंस रहै ठहराई॥
कालकला मुख भाषहि जबही। छुटिहैं चित्त हंसन कर तबही॥
भाषिहि ज्ञानदृष्टि व्यवहारा। सुरति डोलाई करै अतिचारा॥
कालपंथ महँ प्रकटिहि आई। ज्ञानमेटि भाषहि चतुराई॥
शब्द वंशकी निंदा करि है। ममता बांधि कालमुख परि है॥
आप थापी वंश उठै है। शब्द मेटि जीवन भरमै है॥
एक परिपच बांधि है सोई। जो नहिं हंस हमारी होई॥
जब परिपच सुनाइहि काला। शब्दन सुमिरै तेहि करै बेहाला॥
मन बच आश शब्दकी करि है। कालकी चाल चित्तना धरि है॥
मन वच जानि शब्द कहँधइ है। निश्चय सत्यलोक सो जैहै॥
पाषण्डकी गति देहु बहाई। शब्दकी शरण गहै चितलाई॥
शब्दकी आश शब्द लौ लाई। शब्द छोडि नहिं आन चलाई॥
शब्द पाइ करि है अभ्यासा। सुमिरन भजन शब्द विश्वासा॥
अमर समाधि शब्द अवराधे। अक्षरमांह निअक्षर साधे॥
पूरी तत्व लखै जो कोई। पूरण ज्ञानगम्य जेहि होई॥
वंश सदाहि या तत्व समाई। बंद परै तो मोरि दुहाई॥
वंश दयाते सब मिटि जाई। सुमिरि बंश बयालिस पाई॥

समय–मनसा वाचा कर्मणा, तत्त्वहि तत्त्व समाय।
अक्षरमांहि निअक्षर दरशै, अधर ध्वजा फहराय॥
दामिनि कैसी दमक जिमि, ऐसी शब्दकी डोर।
कहै कबीर पहुँचाइ हों, हंस सुजनकी जोर॥

चौपाई।

अक्षर मां निरक्षर पावै। छोडि देह पांजीको धावै॥
पांजी द्वार सत्यकी धारा। जलरंग चौकि सुकृत रखवारा॥
आदि अन्त हम तुम कह दीन्हा। अब हम लोक पयाना कीन्हा॥
तुम साहब सतलोक सिधाए। हम सेवक संसार रहाए॥
निश बासर तुमहीं लै लैहा। पलपल दरश तुमहिको दैहों॥
छिन छिन रहों तुम्हारे पासा। धर्मदास मोहि तुम्हरो आसा॥
तुम हो भाई प्रेमहित मोरा। हंसन जाय करौ बँदि छोरा॥
लोक बोडइसा बैठे रहिहौ। गुहालोक बिरले सों कहि हौ॥

समय–भेद पुरुषकोतासों कहिहों, जो शब्द पारखी होय।
शब्द पारखी मिलै नहिं, तासों राखेहु गोय॥
चन्द्र सूर्य चाढि जल पिवैं, विनु रसना रस सोय।
तासों कहि हा शब्दनिरक्षर, नेह धरो जनि गोय॥
बिनु रसना रस पीवन जानै, कहा निरक्षर पावै।
कहै कबीर ताहि परिहरहु, काल कला धरि आवै॥
सूक्षम बेद भेद नाहिं जानै, कथनी कथि लपटान।
गुरुगम भेद विचारै नाहीं, यमपुर जाय निदान॥
चंद सनेह लखै सहिदानी, तुरति होइ असवार।
दुइ करजोरि महारस पीवै, सतगुरु शरण अधार॥
संयम करै अधर धुनि साधै, सत्यसुकृत रखवार।
गुरुकी दया साधुकी संगति, उतरे भवजल पार॥

काया परिचय जानिके, पकरै दृढ कडिहार ।
नाव लगावै घाट कह, खेइ उतरै पार ॥
पश्चिम लहरि जो गावै, नाव लगावै घाट ।
उतर पांजी सोधिके, तब पावै निज घाट ॥
चंद उदय जब होतहै, सूर्य अस्त बलहीन ।
इहै लगन है आदिकी, जैमुनिकर सुर लीन ॥
जलरंग महलमें जाई रहै, करै जाइ विश्राम ॥
सतगुरु शब्द बतावहि, तब पावै निज धाम ॥
अन्तकी राह बराइके, चलै आदिकी राह ।
आसन पावै लोक महँ, अक्षय वृक्षकी छांह ॥
धर्मदास हंसनके नायक, माथै राखहु नाम ।
अब हम चले लोक कहँ, तुम जाय करौ विश्राम ॥

चौपाई ।

स्वेत मिठाई उत्तम पान । सत्यबचन भाषहू प्रमान ॥
आरति करी कीन्हेऊ भाऊ । नरियर मोरि पांच मिलिपाऊ ॥
भक्तिभाव कीन्हेहु बहुभांती । सतगुरु दूलह संत बराती ॥
शब्द सुरति ते गांठि जुरावहु । भावर की बंदन पहिरावहु ॥
तिलक बन्दन बहुबिधि किन्हेहु । पांच साधु मिलि आंशिष दिन्हेहु ॥
पञ्च जने मिलि अर्पण कीन्हेहु । डरत तिन्है पुहमीमें दीन्हेहु ॥

समय–डर पारस डर प्रेमगुरु, डर करनी डर सार ।
डरता रहै सो ऊबरे, गाफिल खासी मार ॥
तत्त्व तिलक तिहुँ लोकमें, सत्यनाम निज सार ।
जन कबीर मस्तक दिया, शोभा अगमअपार ॥
शोभा अगम अपार, पार बिरलै जन पावै ।
अमर लोकको जाय, बहुरि कबहूँ नहिं आवै ॥

अखण्ड फनिमनी तिलकहै, अक्षय वृक्षहै सार ।
अमर महात्म जानके, करै तिलक तत्त्व सार ॥
त्रिकुटी अग्रे मूल है, भृकुटी मध्य निशान ।
ब्रह्मद्वीप अस्थूलहै, अग्र तिलक निरबान ॥
अग्र तिलक शिर सोहै, बैसाखी अनुहार ।
शोभा अविचल नामकी, देखहु सुरति बिचार ।
जासु तिलक अस्थान है, तासु नाम अस्थीर ।
खंभ लिलाट सोभही, तत्त्व तिलक गम्भीर ॥
संता अयनकी खानिहै, महिमा है निजु नाम ।
अक्षयनामतेहितिलकको, क्षयनहिंअक्षयविश्राम॥
मध्यगुफा जहां सुरति है, उपर तिलकको धाम ।
अमर समाधि लगावै, अंग अंग अस्थान ॥
कंठी कंठ बिराजै, उज्वल हंस अमान ।
मुख उज्वल चक्षू उज्वल, उज्वल दशा न होय ॥
जो उज्वल है भीतर, ऊपर उज्वल सोय ॥
अंतर कपट मलीनता, ऊपर और न होय ।
जौन भाव भीतर बसै, ऊपर वरतै सोय ॥
(भीतर और न देखिये, ऊपर और न होय ।)
जौन चाल संसारकी, तौन संतको नाहि ।
डीभि चालु करनी करे, संत कहो नाहिं ताहि ॥
साधु सती औ शूरमा, ज्ञानी औ गजदंत ।
एतौ निकसि न बहुरै, जो युगजायँ अनंत ॥
साधु चाल जो जानिहै, साधु कहावैं सोय ।
बिन साधै साधू नहीं, साधु कहांते होय ॥
साधु कहावन कठिन है, ज्यों खांडेकी धार ।

डगमग है तौ कटि परै, गहै तो उतरै पार ॥
साधू सोई जानिये, जो चलै साधुकी चाल ।
परमारथ लागा रहै, बोलै बचन रसाल ॥
संगति करिये साधुकी, हरै सकल तन व्याधि ॥
नीची संगति असाधुकी, आठो पहर उपाधि ॥
निश वासर साधू मिलै, मिटै विषम तन पीर ।
तासु नेह नहिं छौंडिहौं, सदा सुफल तनथीर ॥
साधुनसों संगति करै, जागत सोवत हाल ॥
तासु संगमें ऐ वरहों, ज्यों कर सदा रुमाल ।
जाके हृदये सत्यहो, सोई सुकृतके साथ ॥
साधु २ सोहावे ताहि, खोजि लेइ नगमनीमाथ ।
साधु न संकट सों परै, अगमन हमही होय ॥
दुर्जन मारि वहाइहै, पला न पकरै कोय ।
तन मन शीतल शब्दपर, बोलत बचन रसाल ॥
कहै कबीर तेहि दासको, गांजि सकै ना काल ।
ररा काग बिष बोकरा, कूकर नाग मंजार ॥
नाहर बिष धर दूत, भूत वट, औ पार ।
सब कह बाँधी कबीर, आन घाट बाटलै डार ॥
बाट घाट बन औघट, मोहिं खसमकी आश ।
मते चलै कबीरके, कबहि न होय बिनाश ॥
भागे यमदूत भूत यम, काल न तिनूका टूट ।
हंस चले हैं लोक कहँ, काल रहा शिर कूट ॥

चौपाई ।

धर्मदास सुनो शब्द संदेशा । जाहि देहु ताहि मिटै अंदेशा ॥
जाके घट तुम्हरी सहिदानी । तहाँ प्रकट हम तुमहि समानी ॥

जो कोइ लेइ तुम्हारो नावा । ताके शिर मह मन्दिर छावा ॥
सन्त दसाधरि पंथ चलावहु । छापा तिलक कंठी पहिरावहु ॥
वैरागी वैराग्य पढावहु । गृहि बासी रहनी समझावहु ॥
वैरागी उन मुनि घर करई । हर्ष शोककछु चित नहिं धरई ॥
रूखा सूखा करै अहारा । निशदिनरविशशिसूरहिसुधारा॥
विकशित बदन भजनके आगर । शीतल सदा प्रेम सुखसागर ॥
वैरागी आसन आरंभै । माला तिलक सुमिरिनि थंभै ॥
पश्चिम लहरि जो गावै जानी । अजपा जाप जपै सहिदानी ॥
रहिता रहै बहै नहिं कबही । सो वैरागी पावै हमही ॥
हमे पाय हमही अस होई । आवा गौन मिटावै सोई ॥
आवा गौन मिटावै काया । सदा अधीन रहै तत्त्व समाया ॥
काया धरि काया कह बोधै । आवा गौन रहित घर शोधै ॥
जीवत मरै २ पुनि जीवे । उनमुनि बसै महारस पीवै ॥
महा शून्य मों रहे समाई । मरै न जीवे आवै न जाई ॥
ऐसी विधि वैरागी सोई । हम मिलि रहै हमहि असहोई ॥
गृही होइकै रहै उदासा । शब्द कमाइ शब्द विश्वासा ॥
गृही दगा कोटि जो पाई । कहै कबीर भक्ति बतलाई ॥
गृही भाव भक्ती जो साधै । सन्त साधु सेवा आराधै ॥
घर तजि बाहर कबहि न जाई । गुरु गम भक्ति करै लौलाई ॥
भक्ति करै निर्भय सहिदानी । गुरु औ साधु एककरि जानी ॥
जहाँ साधुतहाँ सतगुरु वासा । जहाँसतगुरुतहाँ मुक्ति निवासा॥
जहाँ मुक्ति तहाँ लोक उजागर । जहाँ लोकतहाँ रहै सुखसागर ॥
जहँ सुख सागर तहाँ कबीरा । भक्ति मध्य बाहर औ तीरा ॥
जहाँ मध्य तहाँ पुरुष अमान । जहँ बाहे तहाँ हंस सुजान ॥
जहाँ तीर तहाँ निर्मल धीर । जरा मरण नाहिं व्यापै पीर ॥

जहां पीर तहां संशय धीर। संशय मध्य असंशय नीर॥
जहां नीर तहां सुख संतोषा। जरा मरण नहिं व्यापे धोखा॥
जहां धोख तहां आवै धीर। जहां धीर तहां गहिर गम्भीर॥
जहां गँभीर तहां थिर होई। जहां थिर तहां लहरी न सोई॥
लहरि नाहि तहां आप होई। आपा मेटि होई रहै समोई॥
ममता मोह लहरि तजि जोई। भाव भक्तिके मानुष गोई॥
मनसा गहै होय निर्वाना। पावै सत्य सही अस्थाना॥
नातरु फिरि आवै संसारा।
संसार आइके भक्ति कमाई। भक्ति कमाइके भक्ति कहाई॥
भक्ति कहाइके रहै उदासा। सतगुरु मिलै सत्य विश्वासा॥
सतगुरुते दूसरे गुरु नाहीं। आवा गौन रहित वर जाहीं॥
सतगुरु मिलै तो संशय भागे। संशय बहुरि अङ्ग नहिं लागे॥
सतगुरु सुख संतोषके नायक। परमारथ सो सदा सहायक॥

समय–साधु बडे परमारथी, घनज्यों वरषैं आय।
तप्त बुझावै आनकी, अपनो आपन लाय॥
जैसे वृक्ष न फल भखै, नदी न अँचवै नीर।
त्यों परमारथ कारने, संतन धरो शरीर॥
सन्त सराहिये ताहिको, जाके सतगुरु टेक।
टेक निबाहै देह भरि, रहै शब्दमिलि एक॥
सत्यशब्द हितमानिकै, सुमिरि सतगुरु धीर।
धर्मदास तुव वंशके, एकै गुरू कबीर॥

चौपाई।

सत्य सुकृत सुमिरै चित माही। टूटत वज्र राखि लेउ राही॥

समय–सत्य सुकृतके बाल कह, जो चितवे कर दीठ।
ताजन लागै चौहटे, गुन हगारके पीठ॥

जिह्वा कहौं तो जग तरै, प्रकट कह्यो न जाय ।
गुप्त प्रवाना लेहु हो धर्मनि, राखो शीश चढाय ॥
हंसा तुम मतडरपो कालसों, कर मेरि परतीत ।
सत्य लोक पहुँचाइहौं, चलिहौं भवजल जीत ॥
इति ग्रंथ उदय टकसार, श्वास गुंजार सम्पूर्ण ।
जो देखा सो लिखा, मम दोष न दीजिए ॥

भूल चूक अक्षर लेव सुधारी ॥ समय नाम गोसाँई साहेब लक्ष्मणदासजी को कोटि कोटि दण्डवत् सब संतन महंतनको कोटि कोटि दण्डवत् । मोकाम गोरखपूर महल्ला काजीपूर छोटा लीखा भवानी बकस सब संतनके किंकर ॥

असल पुस्तकानुसार नकल किया ।

इति श्वासगुंजारसपूर्ण ।
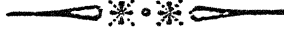
सत्य

आगम निगमबोध प्रारम्भः ।

भारतपाथिक कबीरपंथी–
स्वामी श्रीयुगलानन्दद्वारा संग्रहीत ।

उसीको
गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदासने
अपने " लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर " छापेखानेमें
छापकर प्रसिद्ध किया ।

संवत् १९८३, शके १८४८.

कल्याण–मुंबई.
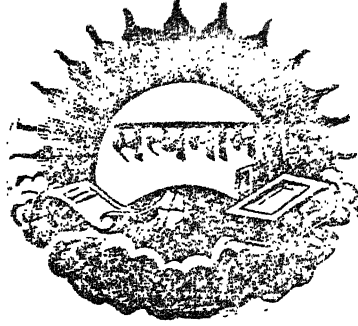
सत्यसुकृत, आदिअदली, अजर, अचिन्त, पुरुष, मुनीन्द्र, करुणामय, कबीर, सुरति, योग, संतान, धनी धर्मदास, चुरामणिनाम, सुदर्शन, नाम, कुलपति नाम, प्रबोध गुरुवालापीर, केवल नाम, अमोल नाम, सुरतिसनेही नाम, हक्क नाम, पाकनाम, प्रगट नाम, धीरज नाम, उग्र, नाम, दया नाम, की दया वंश- व्यालीसकी दया ।

अथ श्रीबोधसागरे

त्रयस्त्रिंशस्तरङ्गः ।

आगमनिगम बोध ।

सखी-वेद शास्त्रको मत अबै, आगम निगम प्रमाण ।
अबबर्णन सोईलिखो, पढो सकल दे ध्यान ॥

अथ ब्रह्म और जगतउत्पत्ति वर्णन-चौपाई ।

आदि ब्रह्म बर वर्णन करेऊ । अहंशब्दमें सो थित धरेऊ ॥
ताहि शब्दकारि चित फुरिआया । चित हढताकारि मन प्रकटाया ॥

मनते तन मात्रा भे पांचों । मनस्वरूप ब्रह्माको वांचो ॥
मन ब्रह्मा ब्रह्मा मन सोई । जस संकल्प करे तस होई ॥
रचे अविद्या शक्ति विधाता । जिहिअनात्ममें आत्मलखाता ॥
ब्रह्मा सोइ अविद्या कारण । विद्या राचे ताहि निवारण ॥
उठे तरङ्ग सिन्धुमें जैसे । बहुरि समाय ताहि पुनि तैसे ॥
ब्रह्माते इमि जगत प्रकटाई । फेरि लीन तामें है जाई ॥
सत्य शुद्धमें मनको फुरना । सो कारण सब दुखको जुरना ॥
उपै खपै बिधिते जिव कैसे । अग्निते चिनगारी लखि जैसे ॥
दुःख मूल बासना बिकारा । मनही कर्मरूप निज धारा ॥
मन अरु कर्म एकही आहीं । कमल सुगन्ध भेद जिमि नाहीं ॥
मनमें जो संकल्प फुराई । सो अँकूर कर्म कहलाई ॥
कर्म कि पूर्व देह मन अहई । मनमय देह कर्मको गहई ॥
जो कछु सत्य असत्य गहोई । मनको कियो सत्य सब सोई ॥

इति ।

अथ चारवर्णकी उत्पत्तिवर्णन—चौपाई ।

ब्रह्मा मुख ब्राह्मण प्रकटाये । ब्राह्मणको इमि अर्थ बताये ॥
प्रथम अक्षर पवित्रता थापू । द्वितिये अक्षर तेज प्रतापू ॥
द्वितीये बाहुते क्षत्री भयऊ । अक्षर आदि पराक्रम गहेऊ ॥
द्वितीये अक्षर रक्षा कारी । तृतीये वैश्यको अर्थ उचारी ॥
प्रथम शब्द सम्पति गह सोई । दूजे अर्थ पालना होई ॥
चौथे चरणते शूद्र उपाये । ताको ऐसे अर्थ बताये ॥
प्रथम शब्द तुच्छता बताई । द्वितीय दीनता अरु सेवकाई ॥
वेद पाठ षटकर्म जनेऊ । तीन बरणके हेतु बनेऊ ॥
चहुँके संस्कार क्रम न्यारो । ब्राह्मण वर्णको भेद उचारो ॥
ब्राह्मणमें द्वै भेदहै सांचो । पंच गौड अरु द्राविड पांचो ॥

पंच गौडको नाम बखानो । गौडकनौजियासारस्वतिमानो ॥
उत्कल मैथिल पांचो गौडा । बहुरि बखानो पंच जो द्राविडा ॥
द्राविड गुजराती अरु नागर । महाराष्ट्र तैलंग उजागर ॥
इनतें बहुरि अनेकन भयऊ । न्यारे २ नाम सो कहेऊ ॥
वैरागी दश ब्राह्मण जेई । वेदके धर्म ध्वजाधर येई ॥
क्षत्रीमें द्वै भाग प्रशंशी । एक सूर्य द्वितिये शशिवंसी ॥
वैश्यनमें बहु भाँति कभनिया । अग्रवाल आदिक बहु बनिया ॥
शूद्र भेष भाषे विधि नाना । तिनको इहां न करो बखाना ॥
ब्रह्मा चारों वरण बनाई । ताके मन पुनि चिंता आई ॥
बिन लेखक जगकाज न सरिहै । लेखक गणक कर्म को करिहै ॥
यहि विधि ब्रह्म जो करे विचारा । चित्रगुप्त प्रगटे तेहि बारा ॥

इति ।

अथ चित्रगुप्तजीकी उत्पत्ति कथावर्णन—चौपाई ।

लीने कर लेखनि मसिदानी । प्रकटे चित्रगुप्त गुणखानी ॥
ब्रह्माकी अस्तुति उच्चारे । सोधुनिसुनिबिधि पलकउघारे ॥
ब्रह्मा की तब आज्ञा पाई । तपको चित्रगुप्त बन जाई ॥
बारह वर्ष कीन तप गाढे । पुनिभे ब्रह्मके सन्मुख ठाढे ॥
तब ब्रह्मा निज सभा लगाये । सुर नर मुनि भूपति चलिआये ॥
ऋषी सिसिरसा तहँ पगुधारा । निजकन्या बरहेतु बिचारा ॥
कन्या चित्रगुप्त को व्याहा । महिपमन्वंतर पुनि असचाहा ॥
भूप मन्वन्तर सूरयको पोता । ताहि सभा तिहि औसर होता ॥
सोऊ अपनी पुत्री देऊ । दोउ तिय चित्रगुप्त वर गहेऊ ॥
पुत्र उपाये दोनों नारी । एकते आठ एकते चारी ॥
माथुर गौड अरु कर्न भनीजै । बाल्मीक श्रीध्वजहि गनीजै ॥
सकसैना श्रीबास्तव ऐसे । अेठाना अ्रम सूक हैं तैसे ॥

भटनागर कुल श्रेष्ठ कहाये। निगम नाम बाहर बतलाये ॥
द्वादश चित्रगुप्तके जाये। कायथ लेखक गणक कहाये ॥
चित्र गुप्त धर्मरायके द्वारे। पुण्यपापको लेख उचारे ॥
तिमि ताके सुत पृथ्वी माही। राजद्वार पर लेखक राही ॥

इति।

अथ चारआश्रमको वर्णन।

दोहा--ब्रह्मचर्य गिरहस्थ पुनि, बानप्रस्थ संन्यास।
भिन्न भिन्न इनके धर्म, मरम वेद परकाश ॥

इति।

अथ चारवेदोंकी उत्पत्ति कथा वर्णन चौपाई।

चौमुह वाक्य ब्रह्मसुख भैऊ। चारों वेद ताहिते कियऊ ॥
असी सहस्र कर्म कांड प्रमाना। सोलह सहस्र उपाल्हा जाना ॥
चार हजार कहावै ज्ञाना। यह त्रिकांडमत वेद बखाना ॥
चारों मम वाक्यको टीका। लक्ष श्लोक व्यास कृत टीका ॥
जेते शास्त्र पुराण कहाये। चारों वेद कि आस गहाये ॥
चारों वेद मूल सब केरा। महावाक अब करो निबेरा ॥
प्रथमैं जो ऋगवेद कहायो। पूरब मुख ब्रह्मा प्रकटायो ॥
ब्रह्माकी बानी भइ येही। प्रज्ञाना ब्रह्म कहि देही ॥
महाज्ञान कहिये प्रज्ञाना। ब्रह्म अर्थ परमेश्वर जाना ॥
यहि मह वाक्य रचे ऋगवेदा। कर्म उपाल्हा ज्ञान त्रिभेदा ॥
पूरव दिश ऋगकी अधिकाई। द्वितिये यजुर्वेद कहि भाई ॥
दक्षिण मुख ब्रह्मा निज खोले। अहं ब्रह्मा अस्मी सों बोले ॥
अहं अर्थ में ब्रह्म है ईश्वर। हौं अस्मी कह मैं हों ईश्वर ॥
यहि महँ वाकते यजुर बनाये। दक्षिण देश अधिक फैलाये ॥
सामवेद तृतिये विख्याता। मुख पश्चिम ब्रह्माकी बाता ॥

महावाक्य ब्रह्माकी येही। तत्त्वमसी ताते कहि देही ॥
तत्त्व ईश्वर त्वं जीव कहाये। हौं पुनि स्मीको अर्थ बताये ॥
पश्चिम दिशतेहि अधिक पसारा। तीनों विधितोको व्यवहारा ॥
चौथे वेद अथर्वण भाषी। उत्तर मुख ब्रह्माकी साषी ॥
तीनों वेदसे ताहि निकारा। तामें महावाक्य यह धारा ॥
अहं आत्मा ब्रह्म पुकारो। ताको ऐसो अर्थ बिचारो ॥
अहं है मैं आतम है आपा। ब्रह्म नाम परमेश्वर थापा ॥
मैंही हौं परमेश्वर आतम। उत्तरमें यहि वेद महातम ॥
चार युक्ति चहुँ वेदन माहीं। प्रथमें विधि जिहिकर्म कराहीं ॥
द्वितिये अर्थ बाद बतलाये। अस्तुति और कर्मफल गाये ॥
तृतिये मंत्र जो देव अराधू। चौथे नाम कथा शुचि साधू ॥
षट प्रकारकी विधि चहुँ वेदा। प्रथमें जग उत्पति निवेदा ॥
द्वितिये प्रलयको व्यौरा ठाना। तृतिये सुरमुनि चरित बखाना ॥
चौथ मन्वन्तर कथ दशचारो। पंचम सुरसुरपति व्यौहारो ॥
छठये धर्मशास्त्र बिधिभाषा। तामें कथा भांति बहु राखा ॥
विद्या सकल जगत व्यौहारा। ज्ञान विधान अनेक प्रकारा ॥
ब्रह्मवाद भाषे बिधि नाना। जाके पढे लाभ हो ज्ञाना ॥
चार वेद बुधि विद्या मूला। रचे शास्त्र षट तिहि अनुकूला ॥

इति।

अथ षट् शास्त्रनको वर्णन चौपाई।

अब षटशास्त्रको वर्णन सुनिये। प्रथम न्याय ऋगवेदतें गुनिये ॥
गौतम न्याय कर्ताको करता। अस बिचारि ताके उर वरता ॥
सर्व मई परमेश्वर जाना। एकते बहुरि अनेक बखाना ॥
उत्पति प्रलय कथा बखाने। नित्यानित्य बाद बहु ठाने ॥
द्वितियमीमांसाशास्त्रजोकहिया। यजुर्वेदते ताको गहिया ॥

जैमिनि मीमांसक रचताही । शिष्य प्रसिद्ध भये बहु बाही ॥
परमेश्वरहि अकर्ता जाना । जक्त अनादि अनंत बखाना ॥
ज्ञान मुक्ति सब कर्मके द्वारा । कर्मके वशी भूत संसारा ॥
मुक्ति होय जिव ज्ञानके मर्मी । ब्रह्मा होय करन भल कर्मी ॥
तृतिय शास्त्र वेदांत बताये । सामवेदते व्यास बनाये ॥
एक ब्रह्म द्वितिया कछु नाहीं । स्वप्न समान जक्त दरशाहीं ॥
ब्रह्ममें जबही माया डोले । ताको तब ईश्वर कहि बोले ॥
ईश्वर तीन भाग पुनि भयऊ । रजसत तम गुन नामसोकहेऊ ॥
जेते जक्त माह व्यौहारा । यही तीन सबके करतारा ॥
कर्म रहितसो ब्रह्म बखाना । कर्म स्वरूप तीन ये जाना ॥
मायायुक्त भये जब तीनों । तिहि कारण ईश्वर कहि दीनों ॥
ब्रह्म अविद्या युक्त जो होई । ताको जीव कहे सब कोई ॥
त्रिगुणब्रह्म अरु जग जिव सारे । सबही एक स्वरूप बिचारे ॥
भिन्न अविद्या करिके माना । द्वै शक्ती तिंहि मांह बखाना ॥
यक विक्षेप शक्ति कहलाये । द्वितिये अबरन शक्ति बताये ॥
शक्ति विक्षेपते जग उपजाये । अबरन शक्ती ज्ञान दुराये ॥
ज्ञानके उदय मुक्तिपद धरही । वेदांती यह निर्णय करही ॥
चौथे सांख्यशास्त्र मत गाढा । ताहि अथर्वण वेदते काढा ॥
रचे ताहिको कपिल मुनीशा । सोउ अकर्ता कथ जगदीशा ॥
सबही रचना प्रकृति कराये । जक्त अनादि सदा यहिभाये ॥
काहू बस्तूको नाश न होई । करता में करतूत समोई ॥
द्वैविधि भाषे पुरुष महातम । जीव आतमा अरु परमातम ॥
पुरुष प्रकृतको जब हो मेला । होय सकल रचनाको खेला ॥
पुरुष पंगुला परकृत अन्धी । दोहु बिन नहिं जग रचनाबंधी ॥
प्रलयकाल तिहु गुन समताई । रचनामें सतगुरु अधिकाई ॥

पुरुषते महातत्त्व प्रकटाई। पुनि हंकार इन्द्रितत्त्व गाई ॥
प्रलयको पौस बहुरि जब आवै। इन्द्री तत्त्व सब तहां समावै ॥
जिहि क्रमसे जो दियौ देखाई। तिहि क्रम २ सब जाहि लुपाई ॥
पंचम शास्त्र पतंजल कहेऊ। वेद अथर्वणसे सो गहेऊ ॥
ऋषि पातंजलि ताहि बनाई। वर्णन सांख्यशास्त्र सम ताई ॥
योग युक्ति तिहि मांह बखाना। ज्ञान द्वारते युक्ति प्रमाना ॥
छठे शास्त्र वैशेषिक भाये। मुनि कणाद कर्ता कहलाये ॥
वद अथर्वणते गहि लीना। यह षटशास्त्रको वर्णन कीना ॥

इतिश्रीषट्शास्त्र।

अथ चार उपवेदवर्णन।

दोहा–आयुर्वेद धनुर्वेद पुनि, गन्धर्ववेद बखान।
अर्थवेद ये चारहैं, तिनकी निर्णय ठान ॥

चौपाई।

प्रथमें आयुर्वेद करतारा। ब्रह्मा प्रजापति अश्वनीकुमारा ॥
धन्वन्तरि आदिक रच ताही। कामशास्त्र वेदादिक जाही ॥
द्वितिये धनुर्वेदके करता। विश्वामित्र नाम सो धरता ॥
ब्रह्मा परजापति से जोई। विश्वामित्र सिखे गुन सोई ॥
सकल युक्ति शिष कीन प्रचारा। परजा पालन को व्यौहारा ॥
शस्त्र प्रहारकि युक्ति है तामें। युद्धकरनकी बिधि वह वामें ॥
आयुध दोय प्रकारके युक्ता। एक है मुक्त अरु द्वितिय अमुक्ता ॥
तृतिये मुक्ता मुक्त कहाऊ। मंत्र मुक्त चौथेको नाऊ ॥
हाथसे । चक्रादि चलाये। ताको नाम मुक्त बतलाये ॥
तरवार आदि अमुक्त बखाना। बरछी मुक्ता मुक्त प्रमाना ॥
बहुरि तीर आदिक अरु गोली। यंत्र मुक्त तिनको कहि बोली ॥
मुक्त आयुधको अस्त्र कहीजे। अरु अमुक्तको शस्त्र भनीजे ॥

सेना चार प्रकार नाम धर । घोढ चढ रथचढ गज चढपद्चर ॥
असगुन सगुन बहुत विधिभाषा । क्षत्री धर्म सकल तह राखा ॥
तृतिये गन्धर्व वेद बताये । ताहि भरथजी ने प्रगटाये ॥
नाद नृत्य सुर ताल अनन्ता । विविधि भांतिसे ताहि बदंता ॥
युक्ति अनेकन देव अराधू । निरविकल्प पुनि कथे समाधू ॥
चौथे अर्थवेद विधि कहिये । नाना युक्ति ताहिमें लहिये ॥
नीति शास्त्र अरु अश्वा रूढा । शिल्प सूप आदिक मतिगूढा ॥
धन उपाय बहु विधि तहलहिये । अर्थ वेद यहि कारण गहिये ॥
द्रव्य उपार्जन रीति बनाई । अर्थ वेद पुनि अस अर्थाई ॥
कसेहु निपुण होय नर जोऊ । भाग विना धन लहै न कोऊ ॥
ताते अन्त कथे बैरागा । सब चातुरी वृथा इमिलागा ॥
चहुँ उपवेदको यह सिद्धाता । सब तजि हो विरक्त बुधवन्ता ॥
वेद उपवेद कि विधिमें पागा । अन्त मुख्य वैराग अरु त्यागा ॥

इति ।

अथ चार उपवेदके षट् अंग वर्णन—चौपाई ।

शिक्षा कल्प व्याकरण बरनो । पुनिनिरुक्तिज्योतिषचितधरनो ॥
पिंगल सहित कहै षट अङ्गा । विविधि भांति भाषे परसंगा ॥
प्रथमें शिक्षा शास्त्रमें कहेऊ । नाना भांति कि युक्ती गहेऊ ॥
वेदके शब्दन माह बखाना । अक्षरनके अस्थानको ज्ञाना ॥
पाणिनीय है ताके करता । युक्ति चातुरी बहु तहँ धरता ॥
द्वितिये कल्पके सूत्रन माही । वेद कि विधिसो कहै तहाहीं ॥
कर्मके अनुष्ठान विधि गायन । पाणिनि पातांजलि कात्यायन ॥
तृतिये कथे व्याकरण जोई । वेदको शब्दबोध तिहि होई ॥
पाणिनीय आदिक बहु तेरे । कर्ता सोई व्याकरण केरे ॥
चौथ निरुक्त शास्त्रके माहीं । ऐसी निर्णय कीनो ताहीं ॥

अपर सिद्धपद वेद जो होई। तासु अर्थ बोधक है सोई ॥
यास्क मुनीश्वर कथे बखानी। नाम निरूपन निर्णय ठानी ॥
आदित्य आदिक अरु बहुतेरे। रचित निरुक्त शास्त्र तिन केरे ॥
पंचम पिंगल कीन बखाना। पिंगल मुनि रचि छंद विधाना ॥
छठये ज्योतिष कालको ज्ञाना। आदित्यादिक गर्ग बखाना ॥

इति चार उपवेद।

अथ अठारह पुराणोंके नाम–चौपाई।

ब्रह्म बहुरि वयवत बखानो। बावन अरु ब्रह्मांड प्रमानो ॥
मार्कंडेय भविष्य कहावै। नारद बिष्णु पुराण बतावै ॥
गरुड बराह अरु पद्म गनीजै। भागवत मीन वो कूर्म कहीजै ॥
लिंगो वायु पुराण बताया। फिर अस्कंधो अग्नि कहाया ॥

इति।

अथ शास्त्रके अठारह प्रस्थान वर्णन–चौपाई।

शास्त्रके हैं प्रस्थान अठारा। याबिधि तिनको नाम उचारा ॥
चार वेद उपवेद हैं चारी। वेदनके षट् अंग विचारी ॥
धर्मशास्त्र मीमांसा न्याई। चौथे पुनि पुराण बतलाई ॥
उप पुराण पौराण अनेका। अठारहेंकी नियम न एका ॥
स्मृती महा भारत रामायण। मंत्रशास्त्र नाना विधि गायन ॥
वाम तंत्र देवीके राखा। नारद पंचरात्र पुनि भाषा ॥
देव अराधन बिधि बहु भनते। जक्त कार्य ताते भल गनते ॥

इति।

अथ चारवेदको बाद वर्णन–चौपाई।

प्रथम कहै ऋगवेद बखानी। निराकार परमेश्वर मानी ॥
निरलेपो सो अलख अगोचर। निरालंब सो जान ब्रह्मबर ॥
द्वितिय अथर्वण भाषत होई। निरालम्ब निर्लेप न कोई ॥

नहिं निर्गुण नहिं सगुण कहेऊ । जो कोइ मरा मुक्त सो भेऊ ॥
जैसे पत्र वृक्ष ते टूटा । फेर न सो तरुवरमें जूटा ॥
ऐसो जीव मरा यकवारा । बहुरि नहीं ताते तन धारा ॥
तृतीय यजुर अस कहे बहोरी । इन दोनोंकी मतिभई भोरी ॥
सगुण ब्रह्म नरायण होई । क्षीर समुद्र शयन कर सोई ॥
दश अवतार सोई धरिलीनो । गोपिनके संग क्रीडा कीनो ॥
चौथेसाम कह पुनि मतअपना । यहै सब जानो झूठ कल्पना ॥
नहिं सगुण नहिं निरगुण देवा । नहीं दृष्टि गोचरको भेवा ॥
सम्पूरण है ब्रह्म अखण्डा । तत्व मसी अद्वैतसे मंडा ॥

इति ।

अथ षट्शास्त्रकी वादवर्णन--चौपाई ।

प्रथम मीमांसा शास्त्र आचारी । कर्म थापि निजु ज्ञान उचारी ॥
जो कछु लाभ जक्तसे कीना । सो सब जान कर्म आधीना ॥
कर्महि अधिष्ठान जिवकेरा । कर्मते करे जक्त में फेरा ॥
कर्म प्रवृतिकर्म लय पावै । कर्महि दुखसुख जीव भुगावै ॥
भूत भव्य व्रत मानिक जोई । कर्म अधीन जान सब सोई ॥
अज हरि हर सनकादिकजेते । कर्म अधीन जान सब तेते ॥
कर्म अधीन ज्ञान अरु योगा । जो जस करे भोग तसभोगा ॥
कर्म स्वतंत्र सर्व परगावै । जो जस करै सो तस फलपावै ॥
द्वितिय बाद वयशेष वदंता । कर्म नहीं जानिये सुतंता ॥
कर्मतो कालकि बसमें होई । काल पाय कर्मकरै न कोई ॥
जब कतहुँ परभात न होई । भोर कर्म तब करै न कोई ॥
जौं मध्यानन सन्ध्याआवै । बिना काल को कर्म गहावै ॥
बाल कर्म ना हो तरुनाई । युवा कर्म नाहिं शिशु करि पाई ॥
युवा कर्म करि सकै न बूढा । वृद्ध कर्म तरुनाई गूढा ॥

तातै यह निश्चय करि मानो । कर्म कालकी वंश में जानो ॥
कालहि ब्रह्म और नहिं कोई । काल पाय अज हरि हर होई ॥
काल पाय पुनि सो बिनसाही । उतपति प्रलयकाल बश आही ॥
कालहि ते सुख दुःख लहंता । काल स्वतन्त्र कर्म परतन्ता ॥
जब चाहे क्रम कर नर लोई । काल किये ते कबहु न होई ॥
तातै काल सत्य करि मानी । कर्म असत्य बैशेषिक बानी ॥
तृतिय न्याय निज मत अर्थाई । कालहै छीन छीन है जाई ॥
घटि बढि जाय कालकी बाते । काल कर्म नास्ती दोउ ताते ॥
अस्ति एक परमातम आही । तीन काल आवै अरु जाही ॥
निजु बश ईश्वर कालको धरई । जब जसचाहे तब तस करई ॥
ग्रीषम बर्षा काल बनावै । बर्षाको ग्रीषम दिखलावै ॥
चाहे रंक रावकरि द्वारी । भूपतिको पुनि करे भिखारी ॥
सकल सूत्रधर ईश्वर ऐसे । नाचे जग कठपुतली जैसे ॥
तातै परमेश्वर है अस्ती । काल वो कर्म सुभावहै नास्ती ॥
चौथ पतञ्जलि कह यह लेखा । कहो कहां तुम ईश्वर देखा ॥
तुम नहिं जौं ईश्वर लखिपाई । तौ पुनि कैसे ताहि बताई ॥
कैसो ईश्वर होइ रे भाई । बिन देखे कह कहो बुझाई ॥
ईश्वर कहां सो कैसे जाना । बिन अनुभव भाखे अनुमाना ॥
पीतर पाथर प्रथमा पूजो । आनुमानहिते मनमें सूजो ॥
यह सब झूठ भरमको फन्दा । आतम शुद्ध सच्चिदा नन्दा ॥
सो हम योग मार्ग ते जाना । तुमको नहिं कछु अनुभव ज्ञाना ॥
तुम प्रतिमा पूजो यहि लेखे । हम ब्रह्मांड पिंडमें देखे ॥
तुमहो झूठो हमहै सांचे । ईश्वरकी अनभौ तुम काचे ॥
तातै योग सत्तकरि जानो । और सकल झूठा करि मानो ॥
पञ्चम सांख्यपती अस बोलो । तुम सब मिथ्या भ्रमयुत डोलो ॥

यकदेशी अनुभव अरु ज्ञाना । सो कछु कामको नहीं बखाना ॥
ब्रह्म सर्व देशी कह सोई । साक्षी सर्व अकर्ता होई ॥
सब करतूत प्रकृती ठाना । योग समाध साधना नाना ॥
उपपाति अस्थित परलय कर्मा । सो सबही प्रकृतके धर्मा ॥
पांचों तत्त्व पचीस प्रकृती । चारों देह आदि सब नास्ती ॥
ईश्वरको जो जानत हारा । सर्वसाक्षि सो आस्ति पुकारा ॥
ये सब अनित्तमें नित्तकोआस्ती । योग आदि सब मिथ्या नास्ती ॥
झूठे वेदांती ऐसे कहईं । मिथ्यावाद सकल यह अहईं ॥
एक अखण्ड ब्रह्म है जोई । तामें आस्ति नास्ति नहिं कोई ॥
आप आप सम्पूरण व्यापा । भ्रमकारि त्रिपुटी तामें थापा ॥
ध्याता ध्यान धेय नहिं कोई । ज्ञाता ज्ञान होय नहिं जोई ॥
ब्रह्म अखण्ड अद्वैत एकरस । ताते द्वैत भाष भाषे कस ॥
नित्य नित्य समाधि है जोई । तामें सो संभवै न कोई ॥
देखन अरु देखनमें आये । देखन हार ब्रह्म बतलाये ॥
ब्रह्मते इतर और न कोई । नास्ति और सब मिथ्या होई ॥

सोरठा—वाद करे इमि सोय, चार वेद षट शास्त्र मिलिं ।
भेद न पावै कोय, अगम अपार अकथ कथा ॥

सत्य कबीर बचन ।

साखी—वेद हमारा भेद है, हम वेदनके माहिं ।
जौन भेदमें मैं बसो, वेदौ जानत नाहिं ॥

अथ विष्णुके चौवीस अवतारको वर्णन ।

दोहा—मीन कूर्म बाराह कह, नरहरि बामन बंक ।
परशुराम रघुराम कह, कृष्ण बुद्ध निष्कलंक ॥
व्यासकपिल हयग्रीव पृथु; यज्ञऋषभ सनकादि ।
दत्त मन्वतर बद्रिपति, धानन्तर हंसादि ॥

चौपाई ।

हरि औतार बहुत जगमांही । तिनकी कथाकही नहिं जाही ॥
हरि औतार जेते जग भैऊ । राम कृष्ण सर्वोपरि कहेऊ ॥
सुजस जासु जगमाहिं बखाना । गुण गण गावैं वेद पुराना ॥
हरिमहँ चक्रवर्त तिहु पुरके । कोई शत्रु नाहिं सन्मुख फरके ॥
ताते तिनकी कथा न लेखो । वेद पुराण न अधनी देखो ॥
जहां तहां हरिमंदिर सेवा । पूजै विष्णु विश्वंभर देवा ॥
तीन देवमें श्रेष्ठ है सोई । घट घट माह बिराजै ओही ॥
चारों विधिकी मुक्ति लहीजै । विष्णु देवकी सेवा कीजै ॥

इति विष्णुके चौबीस अवतार ।

अथ ब्रह्माके षट् औतारके नाम ।

दोहा-गौतम कपि कणाद मुनि, व्यासो जैमिनि जान ।
मंडनमिश्र ममींस कहि, ब्रह्मा जग प्रकटान ॥

इति ।

अथ शिवजी के ग्यारह रुद्रके नाम ।

दोहा-सर्पकपाली त्र्यंबको, कपि कपर्दि मृग व्याधि ।
बहुरूपो वृष शंभु हरि, रैवत वीरभद्रादि ॥

इति ग्यारहरुद्र ।

अथ ब्रह्माके दैहिक और मानसिक पुत्रनके नाम-चौपाई ।

ब्रह्मा द्वै सुत प्रथम उपाये । एक दक्ष एक अत्रि कहाये ॥
दक्षते सूरयको औतारा । अत्रिते बहुरि चंद तनु धारा ॥
सूर चंद कुल क्षत्री भैऊ । पुनि सातौ ऋषि देही गहेऊ ॥
भृगु अत्री अरु पुलह बतावो । फिर अंगिरा पुलस्त कहावो ॥
नारद और वशिष्ठ उचारा । पुनि कह सनकादिक औतारा ॥
ब्रह्मा मानसी पुत्र बतावो । अत्री और अंगिरा गावो ॥

पुलह पुलस्ती कृत्त गनीजै । भृगु प्रचेत वाशिष्ठ कही जै ॥
पुनि ब्रह्मा तनु सुत कह नामा । दक्ष प्रजापति धर्मौ कामा ॥
क्रोध लोभ मद मोह उपाये । हर्ष मृत्यु दशनाम बताये ॥

इति ।

अथ चौदह विष्णुके नाम ।

दोहा–यज्ञ बिभू शतसेन हरि, पुनि वैकुंठो होय ।
पुनि अजितो बामन कहो, सर्वभूमि ऋषभोय ॥
पुनि अमूर्ति श्रममैं तहै, बहुरि सुधामा जान ।
योगेश्वर बृहद्भान ये, चौदह विष्णु बखान ॥

अथ चौदह इंद्रके नाम ।

दोहा–यज्ञो रोचनसताजितो, बहुरित्रिशिख विभु जान ।
तथा मंत्र द्रुम जानिये, फेर पुरंदर मान ॥
बलि अद्भुत शंभू कहो, पुनि बैधृत उच्चार ।
रितुधामा पुनि द्यौसपति, शुची इंद्रदशचार ॥

अथ चौदह मनुके नाम ।

दोहा–मनु स्वयंभू सारोचको, उत्तम तामस रैवत्त ।
चाक्षुष शतवृत सावर्नी, दक्ष सवरनी सत्त ॥
ब्रह्म सवर्नी धर्म सवर्नी, रुद्रसावर्नी होय ।
देवसावर्नी इंद्रसावर्नी, ये चौदह मनु राय ॥

इति ।

अथ सप्तस्वर्गके नाम ।

दोहा–भुवरलोक अरु स्वर्ग कहँ, महरलोक जनलोक ।
तपलोको सतलोकहै, सात नामको थोक ॥

इति सप्तस्वर्ग ।

अथ सप्त पातालके नाम ।

दोहा—अतल वितल सुतलोक हो, फेरि तलातल होय ।
महातला पाताल पुनि, अंत रसातल जोय ॥

इति सप्त पताल ।

अथ नौघरोंके नाम—चौपाई ।

प्रथम भूमि भूलोक बखानी । दूजे भुवरलोक है पानी ॥
स्वर्गलोक पुनि अग्निको घेरा । पितर लोक पुनि वायू टेरा ॥
पञ्चम शून्य लोक आकाशा । अंतर लोक हँकार प्रकाशा ॥
सप्तम सत्यलोक मह तचू । अष्टम लोका लोक कहचू ॥
ॐ शब्द तहवां ते होई । माया को घेरा है सोई ॥
ताके परै नामै अस्थाना । शुद्ध स्वरूप निरंजन जाना ॥
शब्द निरञ्जन ते उत पानी । ताते तब माया प्रकटानी ॥
मायाते महतत्त्व पसारा । महा तत्व से भा हँकारा ॥
अहँकार आकाश उपायो । पुनि आकाश वायू प्रकटायो ॥
वायुते अग्नि अग्निते पानी । ताते यह भूलोक बखानी ॥

इति ।

अथ सप्तद्वीप और ब्रह्मांडको वर्णन ।

दोहा—प्रथमैं जम्बूद्वीप कह, शाकद्वीप कह फेर ।
क्रौंच कुशा शलमल्प पुनि, प्लक्षो पुष्कर टेर ॥

चौपाई ।

ताते परे योजन दश कोरी । कंचनकी पृथ्वी ले जोरी ॥
परम प्रकाश मान महि सोई । तासु परे परवत यक होई ॥
लोका लोक नाम सो भाषा । महाशून्य बन तापर राखा ॥
उग्र उदधि यक ताते आगे । बहुरि अग्नि ताते पर लागे ॥

पौन दसगुना पुनि पर ताही । तासु परे दशगुन नभ आही ॥
तासु परे योजन यक लाखा । सघन कंध ब्रह्मंडको राखा ॥

इति सप्तद्वीप।

अथ अष्टवसुओंके नाम।

दोहा–प्रथम द्रोन पुनि प्रानकह, ध्रू अर्क अग्नि प्रमान।
दोषा वसू विभावसू, अष्ट बसू ये जान ॥

इति अष्ट वसू।

अथ चार युगोंकी आयुस्थितिवर्णन--चौपाई।

चारों युगकर लेख प्रमाना । कृत त्रेता द्वापर कलि जाना ॥
सतयुगकी आयू इमि कहसे । सत्रह लक्ष अठाइस सहसे ॥
त्रेताकी आयू पुनि भाषा । छानवे सहस्र अरु बारह लाखा ॥
आठ लक्ष चौसठ हज्जारा । द्वापर आयू करो विचारा ॥
बात्तिस सहस्र चार लक्ष कहिये । कलियुगको यह लेखा लहिये ॥
चारों युग यक ठौर गहीजै । एक महायुग तासु कहीजै ॥
एक सहस्र महा युग होई । कल्प एक मुनि कहिये सोई ॥
चौद मन्वतर कल्पमें होई । कल्प एक ब्रह्मादिन सोई ॥
ऐसे दिनको लेखा लीये । एकसौ वर्ष लौ ब्रह्मा जीये ॥
एक सहस्र ब्रह्मा है बीते । तब यक घडी विष्णुकी रीते ॥
ताके दिनते करि पुनि लेखो । निजुसौ वर्ष विष्णु थित देखो ॥
जब दश लक्ष विष्णु बित जाही । घडी एक तब रुद्र सिराही ॥
ताहि वर्ष पुनि लेखा कीये । निजु सौ वर्ष रुद्र पुनि जीये ॥
ग्यारह रुद्र जो लगि खपिजाना । रमा शिवा यक घडी प्रमाना ॥
निजु सौ वर्ष कि आयू पाई । सहस शिवा जब लगि खपजाई ॥
तब मायाको पलभर होई । ब्यौरा वेद बखाने सोई ॥
यह लेखा यक भयो प्रमाना । प्रभु माया गति काहु न जाना ॥

चहुँ युगमें आयू नर केरी। लखदश सहस्र सहस्र सतहेरी॥
याहूको नहिं कौन प्रमाना। आयूथित हैं विविधि विधाना॥

इति।

अथचौदह रत्नके नाम।

दोहा-श्रीमणि रंभा वारुणी, अमी शंख गजराज।
कल्पद्रुम शशि धेनु धन, धन्वन्तर विषबाज॥

इति चौदहरत्न।

अथ पंचप्रकारके यज्ञ वर्णन।

दोहा-अभ्या गत आदर कहै, बहुरि वेदको पाठ।
आहुत भूतन यज्ञ कह, पितर यज्ञकी ठाट॥

इति पंच प्रकारयज्ञ।

अथ कर्म उपासना और ज्ञानको वर्णन-चौपाई।

मारग तीन वेद जो भाषा। प्रथमहि कर्म कांडको शाषा॥
पुनि उपासना ज्ञान कहाही। तिहुके तीन देव तनमाही॥
क्रम इन्द्री क्रम कांड गहाये। अन्तःकरण उपासक गाये॥
ज्ञान इन्द्री सो ज्ञान गहंता। यह तिहु देवको भेव भनंता॥
मूरुख कहां उपासक होई। कर्म ज्ञान यामें नाहिं कोई॥
कर्म उपासना ज्ञान जो तीनी। चौदह इन्द्रीते कहि दीनी॥
जबलो नहिं तिहुको सम ताई। कोई कर्म शुद्ध नहिं पाई॥
एक हाथ जो चोरी करई। देह समस्त बन्दिमें परई॥
कर्म उपासना ज्ञान गहाई। भली भांति तिहु मेल मिलाई॥
दृढ हो गहे मुक्ति जिव पावै। अब कर्मन को भेद बतावै॥
जो कोई पित्राकि मुक्तिकि हेता। तन मन धन अपनो सबदेता॥
पितृ लोकमें सो चलिजाई। पुनि जो जैसो कर्म कराई॥
कोइ गंधर्वके लोक समाही। देवकर्मी परजा पति पाही॥

हिरण्य गर्भ गुरु पंडित जासी । यज्ञ करंत चन्द्रपुर बासी ॥
जीव आतमा को गुण येही । जोहि औसर जैसी गह देही ॥
भ्रम भयते संयुक्त जो होई । भ्रमही रूप बनावै सोई ॥
ज्ञान बुद्धि जब होय संघट्टा । ज्ञान रूप हो भ्रम भय कट्टा ॥
पुण्य पाप कर्मनते जूटा । बँधा जीव ग्रह ताही खूटा ॥
तिहि अनुसार कर्म सब करई । जैसो कर्म धाम तस धरई ॥
जैसी देह कर्म कर तैसा । सदा आत्माको गुण ऐसा ॥
जीव वासनाते नित पूरन । जस वासना ताहिते जूरन ॥
मनमें यथा मनोरथ होई । अंतकाल फल पावै सोई ॥
रही लगी जह जीवकी आशा । सूक्ष्म तन धरि तहकर बासा ॥
पुत्र कामना जाको होई । पुत्र देह धरि प्रकटै सोई ॥
पुत्रको ऐसो उचित बतावै । पिताकि मन कामना पुरावै ॥
पिता मनोर्थ जो सुतन पुरावै । तौ पितु बहुरि देह धरिआवै ॥
पितु अपने मनोर्थको हेरे । धरे देह निज इच्छा प्रेरे ॥
ज्ञान अरु परमारथ के कारण । जीव कीन मानुष बपु धारण ॥
अबलों कथा प्रसंग जो रहेऊ । बंधकामना ब्यौरा कहेऊ ॥
वर्णन अब कीजै कछु तिनको । रहित कामना मन है जिनको ॥
सकल कामनाको जो त्यागे । कारण द्वै तिहि माह बिभागे ॥
होय कामना जो कछु हीये । फेर न चाह भोगि भल लीये ॥
द्वितिये ज्ञानदृष्टि मनकामा । तुच्छ दृष्टि देवै सब तामा ॥
मिथ्या सकल जो कछु दरशाई । जानि अनित्य न नेह लगाई ॥
आतम ज्ञान सर्व पर जानी । ताते सर्व लाभको मानी ॥
आतमते सब कछु प्रकटाना । ताहि लाभसब लाभ लहाना ॥
सकल कामना जो कोइ त्यागे । आतम ज्ञान तासु उर जागे ॥
जो कछु चितमें चाह चपेरे । तौनबीन तन यह जिव हेरे ॥

जाके हृदय कामना नाहीं । ब्रह्म स्वरूप कहीजै ताहीं ॥
रहित मनोरथ अमर है सोई । मयनहार कातिक जिव होई ॥
छन्द--सब चाह उरते दाह भै तब मुक्ति याकी सन्ध है ।
जब लोन करिये बामना तिहिकामना जिवअन्ध है ॥
यहि लोककी वहि लोककी तिहिशोकमेंयहबन्ध है ।
चाहै चमारी चूहरी तिहि फूहरी दुरगन्धहै ॥
जिमि सर्प त्यागे केचुली इमि चाह उतरे त्यागिये ।
ताजि ताही फणि फिरचाहनहिंयौंपुनिनतामें पागिये ॥
मद मार बिषय बिकार डारके रूपते अनुरागिये ।
दलमलितखलदललालितज्ञानतेब्रह्महो जिय जागिये ॥

चौपाई ।

जो निष्काम कर्म को करही । तिनको कबहु न घाटा परही ॥
चाह न कर्म फलनते जाही । निश्चय अधिक फल कर्मताही ॥
नफाहेतु जो कर्मको गहते । घाटा हू पुनि सोई सहते ॥
जिनको फलनकी इच्छा नाहीं । जो प्रभुकृपा सेतिहिमिल जाहीं ॥
सा फल नफामें लेख लगाये । ऐसी समुझ मुक्तिपद पाये ॥
जप तप तीर्थादिक व्रत दाना । सहित मनोरथ जाने ठाना ॥
इनको फल जो कोई चाही । सो जिव असुर लोकमें जाही ॥
कर्मके बन्धनमें सो बांधा । वृथा सो निज इन्द्रीको साधा ॥
बादि सो आपनो ग्रह सुख खोई । अन्धकारमें अधिक बिगोई ॥
जो कोई है आतम ज्ञानी । सर्वमई सो आपुहि जानी ॥
पुण्यपाप सुख दुःख सब जोई । नर्क स्वर्ग आदिक जो होई ॥
ब्रह्मा विष्णुरुद्र अभिमानी । सो सब अपनी देह बखानी ॥
भ्रम रज बन्धा जीव अज्ञानी । सो टूटै आतम जब जानी ॥
जिनमें नाहिं साधूकी करनी । बचन बनाय ज्ञान बहुबरनी ॥

साधू नहिं भाँड है सोई । ताते अधिक न शठ है कोई ॥
तिनते भलो जानिये सोऊ । आगम फल आसा कर जोऊ ॥
कर्म उपासना ज्ञान जो होई । भिन्न भिन्न तिहि फल करजोऊ ॥
ज्ञानते इतमें भेद बिचारा । तिनको फलहुबताव ज्योन्यारा ॥
सो अक्षर अभ्यासी अहई । ताहि न अर्थी पण्डित कहई ॥
कर्म उपासना ज्ञान जो तीनी । एकै फल तीनते कहि दीनी ॥
सनबन्धी यक दूजा हेरो । ज्ञानको अर्थ जानना टेरो ॥
कर्मको मर्म न हृदय गह्याया । नहिउपास्यगुणको लखिपाया ॥
कर्म उपासना झूठे तिनके । कछु व्योरा हियमें नहिं जिनके ॥
कर्मको अर्थ थाहि बिधिकहना । चाल चलन सुकर्म सबगहना ॥
जाके हृदय हो उत्तम ज्ञाना । करनी तासु विरुद्ध लखाना ॥
ताहि ज्ञानते गुन कछु नाही । कर्म उपासना वृथा कराही ॥
साची प्रीत उपासना सोई । होय एकता रहै न दोई ॥
जबलो नहिं यह गुन दरशाई । कर्म उपासन ज्ञान वृथाई ॥
जो कोइ विषयनको त्यागे । ताके हृदय ज्ञान यह जागे ॥
ज्ञान दृष्टि करि तब सो जाना । कर्मो पासन योगो ज्ञाना ॥
चारों चार तत्वसे कहिये । रचनासकल सृष्टितिहि लहिये ॥
चारों मिश्रित सम सुख दाई । घटिबढिभयेन सुख कोइ पाई ॥
बिना ज्ञान करा कर्म जो लोगू । कर्मोपासन अथवा योगू ॥
सोनिशिदिनजैनिजुतनकसही । आशातृष्णायुत बुधि नशही ॥
कर्मो पासन योग समाधा । ज्ञान सहित जो कोई साधा ॥
सो सब विषय अविद्या जानी । जीवत जीवन मुक्त सो प्रानी ॥
मुये विदेह मुक्ति लह सोई । जिनके हृदय ज्ञान अस होई ॥
मरण काल जिहि आसर आवै । देहकि नेह जीव को छावै ॥
तनकी प्रीतिसे दुःख बड माने । काहूको नहिं तब पहिचाने ॥

जीव आत्मा यह तिहि बेले। इंद्रिनको निजु संग सकेले ॥
सब इंद्री तजि निज निज खूटे। जाय जीव आतम ते जूटे ॥
उरमह दिसे बुद्धिके रूपा। मूर्ति एक तामें सब गूपा ॥
तनधारि तनू आपुहि जाना। इंद्री सकल रहितभे ज्ञाना ॥
दृष्टि तब खनते हिलही। सूक्षम तन गहि सूजेते मिलही॥
सूँघन पृथ्वी माह समाई। रसना स्वाद वरुण में जाई ॥
वाक अग्निमें पौन समीरा। दिशा श्रौन मनशशिके तीरा ॥
भूता काश बुधिकर थाना। जिव सब संगले करे पयाना ॥
जो जिव भले कर्मको करता। दृगमार बाहर पग धरता ॥
सूर्य माह सब जाय समाई। इमि सब इंद्री राह गहाई ॥
भले कर्म जिनके अधिकाई। ब्रह्मरंध्र कढि बाहर आई ॥
जैसो कर्म करे जो कोई। तैसी राह गहै पुनि सोई ॥
जिवको बासा तनते छूटे। आवा गौन श्वासको टूटे ॥
जड समान देही रहि जाई। जीव नबीन कलेवर पाई ॥
अहं बोलिके जीव सिधारै। हौं मैं प्रथमहि शब्द उचारै ॥
सहित कर्म जिव करे पयाना। तजितनथूलसो लिंग लहाना ॥
निज कर्मनके प्रेरित येही। सदा नवीन धरे जिव देही ॥
जिमियक भूषण भंजि सोनारा। निज इच्छाते और संवारा ॥
तैसे देह जीव यह गहई। पुनि पुनि गहै तजै श्रुतिगहई ॥
पूरन काल जीवको बाजा। उर्ध गमनको करे समाजा ॥
अधर लोक द्वार लोकके बीचे। कर्म तहां जब जिवको खींचे ॥
ज्यौं जाग्रत स्वपने भरमाई। अपने कर्मको फल इमि पाई ॥
सरगुन गहिकर सुरनमें बासा। असुरको गुनगहिदुःखचहुपासा॥
प्राण स्वप्नमें देखत सोई। जाग्रित माह बिचारे जोई ॥
ताहि समान गहै सो देहा। दुख सुखको है कारण येहा ॥

स्वप्न समान नर्क अरु स्वर्गा । इच्छारहित ग्रहित अपवर्गा ॥
ऐसे निज अनुमान गहाये । नर्क स्वर्ग अरुमध्य कहाये ॥
मारग मुक्ति कहावै सोई । सूरय मंडल बेधे जोई ॥
ब्रह्म लोक की मारग पाई । ताहि संग निज बास गहाई ॥
जिमि दीपक घटज्योति अपारा । जीव आतमा रूप सोधारा ॥
नसाजाल आतमकी ज्योती । सो बहुरंग ढंग की होती ॥
श्वेत हरित दुति प्रीती देखाये । भूरा रंग तासु प्रकटाये ॥
नसन प्रकाश तासु उर होई । मुक्त होत पहुँचै जो कोई ॥
सुषुम्णामें मिलि एकसौ नारी । उत्तम मध्यम लोक सिधारी ॥
केती नसा अधोमुख आहीं । अधोगती को सो लेजाहीं ॥
गहै गैल तिहि मारग जबही । अधोगती जिव पहुँचै तबही ॥
यहिबिधि नर्क स्वर्ग जिव जाही । थितप्रमाण दुखसुख लहताही ॥
पूरण जब करार हो आवै । तब मृत मंडल वासा पावै ॥
कर्मके बंधन जिव तन धरही । चार खानिमें दुःख सुख भरही ॥
स्वेदज जरायुज अंडज पिंडज । नाना बरन रूप निजु २ सज ॥
अंतमें जीव सुरति रहजाही । प्रकट होय सोधरि तनताही ॥

इति ।

अथ जीवको योनिप्रवेशवर्णन–चौपाई ।

योनिप्रवेश जीव जब करता । कोइ धूम्र मारग पग धरता ॥
देह वानमें जाय समाई । वीर्य रूप है सो प्रकाटई ॥
मेघ बून्द मारग ते कोई । हो रसरूप औषधी सोई ॥
तेहि भोगी के बीर्य मँझारा । केते प्राण बायुके द्वारा ॥
पौन पंथ गहि केते समाई । केते धान खेत प्रवेशाई ॥
चावल आदिक अन्नमें रहई । नाना वर्ण रूप सो गहई ॥
केते गगनमें स्थित गहाई । चंद्र किर्णमे रहे समाई ॥

किर्णमार्ग औषधहि समाही । किते पुष्प फलमें भरजाही ॥
तनधारी तिहि भोजन करही । जड आतमके बीर्यमें भरही ॥
सो सुखोसि में वेष्टित सारे । पिंजर गर्भमें सोई सिधारे ॥
दूध यथा है घृतमें पुरा । तिमि बीरजमें सब जिव जुरा ॥
बीरज दूरबीन ते देखो । चलताहिलतजिवअनितनिरेखा ॥

इति ।

अथ शरीरवृक्षवर्णन–चौपाई ।

एक प्रणवते सब संसारा । सबको आदि सर्व करतारा ॥
ब्रह्म सोई ओंकार कहीजे । मन ओंकार न भेद गहीजे ॥
ओंकार मन कर्म निरंजन । कर्म स्वरूप जक्तको रंजन ॥
कर्मते फुटी तीन पुनि शाखा । रज सत तम जगकारन राखा ॥
कर्मते करत होय निहकर्मा । आगम ज्ञान गहि टूटे भर्मा ॥
तृष्णा ग्रन्थि कर्ममें परई । सोई जीवको बंधन करई ॥
आतम परमातम यह रूपा । विषयमें भूलि परा भ्रम कूपा ॥
विषय वासना त्यागे जोई । ब्रह्म स्वरूप जानिये सोई ॥
आतम परमातमा बिहंगा । दोनों एकरूप यक ढंगा ॥
एक है पंछी एक है छाया । छाया नाहिं आया लखिपाया ॥
मूल थूल जहँ तहँ प्रभु आपू । भ्रमकरि न्यारा न्यारा थापू ॥
पडा जीव यह त्रिगुनके फन्दा । भूला रूप चिदानन्द कन्दा ॥
काया वृक्ष ऊर्ध्व है मूला । हेठ शाख पत्री फल फूला ॥
मूल परम पूरुषको भेवा । पेड निरंजन शाख त्रिदेवा ॥
पाती जान सकल संसारा । सत्य कबीर वचन उचारा ॥

सत्य कबीर वचन–शब्द ।

सार शब्दसे बाचिहो मानो इतबारा हो ।
अक्षैय पुरुष यक वृक्ष है नीरंजन डाराहो ॥

---

१ शरीर वृक्षका चित्र देखो " कबीर भानु प्रकाश " में ।

शाखा तिरदेवा बने पाती संसारा हो ।
ब्रह्मा वेद सही किया शिव योग पसारा हो ॥
विष्णुमाया उतपति किया उरलाव्यौहारा हो ।
तीन लोक दशहु दिशा रोकै यमद्वारा हो ॥
ज्योतिस्वरूपी हाकिमा जिन अमल पसाराहो ।
अमल मिटावो ताहिको पठावोभवपारा हो ॥
कहै कबीर तिहि अमर करो निज होय हमारा हो ।

चौपाई ।

यजुर्वेद भाषै भल ढंगा । जिमि आतम परमात्मा बिहंगा ॥
बहुरि यका दश गीता कहई । जैसे फांस जीव गल गहई ॥
कामिक जीव बँधा बहु बन्धन । फँसा आश तृष्णाके धंदन ॥

साखी—माया मुई न मन मुवा, मरि मरि गई शरीर ।
आशातृष्णा ना मुई, यौं कथित कहै कबीर ।

इति शरीरवृक्षवर्णन ।

अथ संप्रदाय धर्म वर्णन—चौपाई ।

वेदमें दोय संप्रदा जानी । यक श्री यक शंकरी बखानी ॥
श्री सम्प्रदा विष्णुकी होई । शिव संप्रदा शंकरी सोई ॥
दोहुमें चार चार विधि भाखो । न्यारो न्यारो नाम सो राखो ॥
प्रथमें विष्णु संप्रदा कहिये । चार भाग पुनि तामें लहिये ॥
प्रथमें श्री संप्रदा बखानो । रामानुज आचारय मानों ॥
द्वितिये शिव संप्रदा प्रचारी । विष्णु श्याम ताके आचारी ॥
तृतिये ब्रह्म संप्रदा साका । माधवानंद अचारय जाका ॥
सनकादिक संप्रदा चतुर्थे । निंबादित्य अचारय पुष्टे ॥
प्रथम कहो श्रीसत अर्थाई । रामानुजकी कथा सुनाई ॥

इति ।

अथ रामनुजजीकी कथा–चौपाई।

होन लगी जब धर्मकी हानी। शेषते तब कह शारंग पानी॥
धरणी जाय धरो औतारा। करो तहां श्रुति धर्म प्रचारा॥
भगवतकी जब आज्ञा पाये। तब धरणीधर धरणी आये॥
केशव यज्ज्वा विप्र कहाऊ। कांति मती माताको नाऊ॥
ताके गृहमें सो तनधारी। धरम धुरंधर परम अचारी॥
आठ सौ वर्षके ऊपर होने। कांचिपुरीके उत्तर कोने॥
देश उडीसे के दिश दछिन। भूत नगरी औतार धरे तिन॥
जक्त माह आचार चलाये। पुनि पुरुषोत्तम पुरमें आये॥
तहां जाय निज मनहि बिचारा। जगन्नाथ में चलै अचारा॥
जगन्नाथ नहिं मान्यौ सोई। मेरे पुर आचार न होई॥
तब हरि ऐसी कीन उपाई। रामानुज कह लियौ उठाई॥
निज पुरते रात्रीके माही। धर दियो रंग पुरीमें ताही॥
रामानुज को निजु अस्थाना। तोतादरी दक्षिणमें जाना॥
एकसौ बीस वर्षलों जीये। गुरपीढी इमि वर्णन कीये॥

इति।

अथ रामानुजजीकी गुरुपीढी वणन।

दोहा–प्रथमें नारायण कहो, द्वितिये लक्ष्मी जान।
विष्वसेन तृतीय कहो, पुनि सठकोप बखान॥
पंचम श्रीनाथो कहो, पुंडरीकाक्ष है षष्ट।
राममिश्र सतयें कहे, यमुना चारय अष्ट॥
नौमें पूर्णा चार्य है, रामानुज है तासु।
ग्यारहे देवाचार्य है, हरियानंद है जासु॥
तासु राघवानंदजी, ताके रामा नंद।
पन्द्रहें रामा नंदके, शिष्य अनंता नंद॥

बहुरि अनंतानंदके, कृष्णदास जी शिष्य ।
बहुरि कील्जी तासुके, गलता गद्दी दिख्य ॥
कीलते पुनि पंद्रह गनो, गलता जयपुर माहि ।
हरिप्रसादलों लेखिये, चौदह पीढी ताहि ॥
उन्नीस सौ तेरह सँवत लों, लेखा कीजै तास ।
ईश्वर जक्तसे भिन्न है, द्वैत धर्म परकाश ॥

इति ।

अथ त्रिदंडीको वर्णन—चौपाई ।

श्री संप्रदाके जो संन्यासी । गृह तजिके जब होहि उदासी ॥
दंड हाथमें धारै सोई । सो यक ढाककी लकरी होई ॥
तीन शाख तिहि लकुटी माहीं । नाम त्रिदंडी तासु कहाहीं ॥
जो कोई सो दंड गहाये । नाम त्रिदंडी तासु कहाये ॥
वस्त्र श्वेतके सिंगरफ रंगा । भगवा आदिक धारे अङ्गा ॥

इति त्रिदंड ।

अथ रामानन्दजीकी कथा—चौपाई ।

रामानंद विप्र औतारा । मथुरा नग्रमें सो तन धारा ॥
धन विद्याते पूरन रहेऊ । सब लुटाय संन्यासी भयऊ ॥
यक औसर गुरु रामानंदा । बिचरत मिले राघवानंदा ॥
ताहि राघवानंद बताई । काल तुमारा पहुँचा आई ॥
मृत्यु सुनत रामानन्द डरेऊ । राघवानन्दसे बिनती करेऊ ॥
मैं विद्यामें जन्म गँवायौ । भजन विहीन मृत्यु नियरायो ॥
मोपर दया करो गोसांई । काल फंदते लेहु छोडाई ॥
राघवानंद कृपा तब कीने । ताहि आपनी दीक्षा दीने ॥
ऐसी युक्ति बहुरि सो करेऊ । तासु प्राण ब्रह्मांडमें धरेऊ ॥
मृत्यु काल बीता जब सारा । तब ब्रह्मांडसे प्राण उतारा ॥

अधिक कृपा गुरु तापर कीनो। रामानन्दको यह बर दीनो॥
आयू साढे सात सौ वर्षा। बकसिदीन गुरुको हिय हर्षा॥
गुरु सेवा चिरकाल बिताये। पुनि रामानन्द काशी आये॥
रामानुज की सम्प्रदा माही। अधिक अचार देखिये ताही॥
कछुक खेदको कारण पाई। रामानन्द अचार भुलाई॥
आचारिनमें जब पग दीने। पगसे तब तिहि बाहर कीने॥

दोहा—बहुरि राघवानन्दजी, रामानन्दसे भाष।
अब न्यारी निज संप्रदा, कीजै मन अभिलाष॥

चौपाई।

रामानन्द संप्रदा न्यारी। तादिनसे मैं अलग अचारी॥
रामानंदको घना पसारा। धर्म आपनो जग विस्तारा॥
रामानंदके शिष्य घनेरे। सिद्ध प्रसिद्ध भे जक्त बडेरे॥
अनंता अरु सत्य कबीरा। सुरसरा सुखानन्द मतिधीरा॥
भावानन्द पीपा रविदासा। धनाआदि गुनगन परकाशा॥
केते सिद्ध साधु गुनधारी। रामानंद पसारा भारी॥
बावन द्वारा जाको भाषा। रामानन्दको बहु शिष साषा॥

इति।

अथ श्रीसंप्रदायको धामक्षेत्र वर्णन—वार्ता।

अयोध्या धर्मशाला चित्रकूट सुखबिलास गोदावरी प्रदक्षिणा-क्षेत्र धनुषतीर्थ रामनाथ धाम अच्युतगोत्र शुक्लवर्ण सीता इष्ट जानकी मन्त्र राम उपासना मंत्र राघवानंदमहाप्रसाद अनन्त शाखा सामीप्य मुक्ति श्रीनद्वार लक्ष्मी आचार्यविश्वामित्र ऋषि योगवाशिष्ठ मुनि हनूमान देवता हनूमान मन्त्र राम गायत्री ऋग्वेद हरिनाम अहार विष्वसेन पार्षद रामानुज वैष्णव।

अथ शिवसंप्रदाय वर्णन–चौपाई ।

विष्णुकांचि दक्षिणके माहीं । विर्दराजको मन्दिर ताहीं ॥
तहँवा परमानन्द मुनीशा । भजन ध्यान धारे जगदीशा ॥
तापर शिवजी कीनी दाया । हरि उपासना भेद बताया ॥
शिवजी मुख्य अचारज पाका । ताते चली सम्प्रदा शाका ॥
विष्णु श्याम सम्प्रदामें येही । अधिक प्रसिद्ध भयो मति जेही ॥
भई प्रसिद्ध ताहिके नामा । विष्णु श्याम आचारय यामा ॥
धर्म तासु अद्वैतक होई । ईश्वर जक्त भेद नहिं कोई ॥
जबहि बल्लभा चारय भयऊ । कछु उपासना भिन्न सो कियऊ ॥
गोकुल ग्रामहि सो पग दीने । वृन्दाबनमें बासा कीने ॥
यह सम्प्रदा चाल यह धरही । बालकृष्ण की सेवा करही ॥
भिन्न २ गद्दी तहां अहई । नारि पुरुष हरिसेवा गहई ॥
नन्द यशोदा आपको जानी । पुत्र सो प्रिय हरि सेवा ठानी ॥

इति ।

अथ विष्णु श्यामजीकी कथा और गुरुपीढीवर्णन–चौपाई ।

विष्णु श्याम द्विजकुल औतारा । दाक्षिण देशमाह पगु धारा ॥
गुरु पीढी ताकी इमि कहिये । शिवके परमानन्दको लहिये ॥
ताके पुनि आनन्द मुनीशा । पुनि प्रकाशमुनि श्रीकृष्णदीशा ॥
नारायणमुनि जैमुनि श्रीमुनि । इमि उनचास पीढी बीतीगुनि ॥
उनचासवीं पीढी जब आई । विष्णु श्याम तबही प्रकटाई ॥
ताके शिष्य लक्ष्मण भट भैऊ । तासु बल्लभा चारय कहेऊ ॥
ताके विट्ठलनाथ प्रसंशा । ऐसे प्रकटे पन्द्रह वंशा ॥
पन्द्रहवीं पीढी जब आई । मनसा राम तबै प्रकटाई ॥
विष्णुश्यामसे ये पन्द्रह भो । संवत् उन्नीससौ तेरहलो ॥

इति ।

अथ शिवसंप्रदायको धामक्षेत्र वर्णन ।

विष्णुकांची धर्मशाला मार्कंडेयक्षेत्र इंद्रधन सुखविलास पुरुषोत्तम धाम लक्ष्मी इष्ट जगन्नाथ उपासी तुलसी मंत्र त्रिपुरारि शाखा वामदेव आचार्य सायुज्य मुक्ती नेत्रद्वारा हरिनाम अहार यजुर्वेद अच्युत गोत्र शुक्लवर्ण बट कृष्ण परिक्रमा जलबिंदु ऋषि नारद देवता विष्णुश्याम वैष्णव ।

इति ।

अथ ब्रह्मसंप्रदायवर्णन—चौपाई ।

कहु अब तृतीय संप्रदा सोई । ब्रह्मा आदि अचारय होई ॥
आदि काल नारायण देवा । ब्रह्मासे भाषे यह सेवा ॥
यहि संप्रदा अचार्य सयाना । भये माधवानंद प्रधाना ॥
भै संप्रदा विदित तिहि नाऊ । माधवाचार्य गहे भल भाऊ ॥
कांचि पुरीके पश्चिम दक्षिण । द्विज कुलमें औतार गहे तिन ॥
द्वैता द्वैत धर्म जिन केरे । ईश्वर निज मायाको प्रेरे ॥
तब यहि जगकी रचना होई । ईश्वर भिन्न मिला पुनि सोई ॥
गुरु पीढी अब कहो बखानी । आदि अचारय सारंगपानी ॥
द्वितिये ब्रह्मा तृतिये नारद । चौथे व्यास जो बुद्धि विशारद ॥
सुबुधा चार्य नरहरा चारय । सप्तम कहे साधवा चारय ॥
माधवाचारजते लेख उचारा । पूर्नानन्द लो वंश अठारा ॥

इति ।

अथ ब्रह्मसंप्रदायके धाम क्षेत्र वणन—वार्ता ।

अवंतिका पुरी धर्मशाला बद्रिकाश्रम धामा नैमिषारण्य सुख विलास अंगपात्रक्षेत्र सावित्री इष्ट ब्रह्मोपासी विष्णु हंस मंत्र हंस देवता सालोक मुक्ति मोक्षद्वारा स्त्री कालाचार्य अद्वैत शाखा

अच्युत गोत्र शुक्ला वर्ण हरिनाम अहार परमहंस ऋषि नारायण पार्षद अथर्वण वेद माधवाचार्य वैष्णव ।

इति ।

अथ सनकादि संप्रदायवर्णन–चौपाई ।

चौथी संप्रदाय सनकादिक । निंबादित आचार्य मरयादिक ॥
अरुण ऋषीश्वर द्विजकुल टेरा । निकट गोदावरि नग्र मुंगेरा ॥
धर्म वशिष्ठ द्वैत सो धारा । अहि कुंडल नहिं अहिते न्यारा॥
जग ईश्वर नहिं भिन्न रहाई । सदा काल दोहुकी यकताई ॥
गुरुपीढी यहि भांति बतायन । प्रथम हंस औतार नरायन ॥
पुनि सनकादिक नारद कहिये । चौथे निम्बादित को लहिय ॥
निम्बादितसे लेखा ठनिये । पैंतिस पिढि हरिव्यासलोमनिये ॥
भये प्रतापमान हरिव्यासा । ताते भल यह धर्मप्रकासा ॥
जो हरिव्यासके शाखा भेऊ । नाम तासु हरिव्यासी कहेऊ ॥
सो भूराम हरि व्यासके अंशा । ताहूको गुन अधिक प्रसंशा ॥
पुनि हरिव्यासते लेख लगाई । संवत उन्नीस सौ तेरह ताईं ॥
बारह पीढी गई सिराई । माखन दास देह तब पाई ॥

इति ।

अथ सनकादिक संप्रदायके धाम क्षेत्र–वार्ता ।

मथुरा धर्मशाला क्षेत्र गोमती वृन्दावन सुख विलास गोवर्धन परिक्रमा द्वारावती धाम रुक्मिणी इष्ट गोपाल उपासी वंस गोपाल मंत्र गोपालगायत्री हंस शाखा सारूप्य मुक्ति नाशिका द्वारा सनकादिक आचार्य नारद मुनि दुर्वासाऋषि गरुड देवता सामवेद श्रीभद्रमहाप्रसाद अच्युत गोत्र शुक्लवर्ण हरिनाम अहार निंबादित वैष्णव ।

अथ चारों भाईका धाम क्षेत्र वर्णन वार्ता ।

माता वरुणावती पिता अगस्त्य मुनि गुरु धर्मऋषि स्वर्ग नगरी अच्युत गोत्र शुक्ल वर्णन अनंत शाखा सामवेद ॥ निष्काम भिक्षा धाम रंगनाथ सुख बिलास कोटपाट हरिनाम आहार परम बद्रिकाश्रम क्षेत्र मठ वैकुंठलक्ष्मीदेवी नारायण ॥ देवता पूजा अक्षय बटकी श्रीरंग संप्रदाय ऊख खाडा शून्य स्थान सुमेर परिक्रमा बीजमंत्र ।

इति ।

अथ चारों संप्रदायके तिलक स्वरूप–चौपाई ।

श्री संप्रदाके जो आचारी । चरणचिह्न प्रभु तिलकसँवारी ॥
दोय लकीर ऊर्ध गत हरे । श्रीअरु नारिबिच तिहि केरे ॥
हेठ तिलक हरिको सिंहासन । जोरी बनावै निजुलीलारन ॥
मध्यमें लाल वरन श्रीकरही । दीपाशिखाजिहिबिधि लखिपरही ॥
एता पीत वरन श्री होई । रामानंद संप्रदा सोई ॥
द्वितिये विष्णुश्यामविधि जोहे । दोय लकीर लिलारमें सोहे ॥
हेठ सिंहासन शून्य है बीचे । जाति बरनते चित नहिं खींचे ॥
साधू होहि बिरक्त न होही । कह मरयाद पालना होही ॥
तृतिये माधो संप्रदा कहिये । दोय लकीर ऊर्ध्वगत कहिये ॥
हेठ सिंहासन ताहि बनाई । चरण चिह्न प्रभु माथ सोहाई ॥
चौथे निम्बादित्य जो साजे । दोय लकीर लिलार विराजे ॥
हेट सिंहासन बिन्दु विचाला । ऊर्ध्वपुंड्र अरु वैष्णव चाला ॥

इति ।

अथ वैष्णवके द्वादश तिलक वर्णन ।

दोहा–ऊर्ध्व पुंड्र मस्तक प्रथम, ब्रह्मरंध्र पुनि जोय ।

---

१ तिलकोंका चित्र देखो 'कबीर भान प्रकाश' में ।

तृतिय नेत्र दोउ कंठपुनि, उर नाभी फिरहोय ॥
उरदोहु दिश भुज दोयपुनि, तथा पृष्ट परमान ।
बरन बइष्णवके यही, द्वादश तिलक बखान ॥

इति द्वादश तिलक ।

अथ वैष्णवके दशचिह्न वर्णन ।

दोहा-भद्र भेषतशोचकर, पुनि तुलसी गल माथ ।
रामकृष्णको मंत्र गह, गोपी मृतिका साथ ॥
शिखा सूत्र करमण्डलो, धौत वस्त्र गुरुवाक ।
चिह्न वैष्णवके दशो, चार संप्रदा साक ॥

इति ।

अथ बावनद्वारेके नाम ।

दोहा--प्रथम अनंता जी कहे, साहिब सत्य कबीर ।
पुनि सुरेश्वरानंद जी, सुखानन्द मति धीर ॥
अनभय नन्द मुरारजी, अग्रदासजी, कील ॥
दीपाजी रवि दासजी, नामदेव दृढशील ॥
खोजी जंग दिवाकर, वीरम त्यागी जान ।
परशराम नाभा टिला, भोला नैन बखान ॥
पूरन बैराटी कहे, बहुरि घमण्डी देव ।
ज्ञानिकुबा हरि बंशजी, राघवा वल्लभ येव ॥
गोकुल बिट्ठल करम चँद, जोगानंदी जोय ।
धरनीदास मलूकजी, अलख देवनी होय ॥
माधौ कानी रामरावल, आत्माराम प्रकाश ।
लाल तरंगी देव भडंग, भगवान तुलसीदास ॥
हठी नरायण राम रँगी, चतुरा नागा होय ।
नित्यानन्दी राम कबीर, श्यामानन्दो सोय ॥

हनूमान दास कमालजी, चेतन स्वामी नाम ।
दास चतुर्भुज राम जपु, मन पुनि कह दुंदूराम ॥

इति बावनद्वार ।

अथ सातअखाडनके नाम ।

दोहा–टाटंबी निरालंबी कह, संतोषी विख्यात ।
निर्वानी दीगम्बरी, षाकी निरमोहि सात ॥

इति सात अखाडन ।

अथ तेरह परमभागवतकेनाम–चौपाई ।

नारद पुंडरीक प्रहलादा । व्यास वाशिष्ठ पराशर वादा ॥
भीषम रुक्मांगद विभीषनौ । अर्जुन अम्बरीष शुक सेनौ ॥

इति ।

अथ रामानंदजी और सत्यकबीरकी कथा--चौपाई ।

सत्यकबीर मनुष तन लीने । जोलहाके घर बासा कीने ॥
अगम ज्ञान कथ साधुन पाही । सुनि आश्चर्य करे मनमाही ॥
निजु निजु मनमें करे बिचारा । बालक नहीं सिद्ध औतारा ॥

सत्यकबीर वचन शब्द ।

साखी–तब हम साध सिद्धते, कथे गुष्टि घन ज्ञान ।
सिद्ध साध मिलि मोकह, पूछै गुरुको नाम ॥

चौपाई ।

गुरुनहिं नाम कहौ क्यों ओही । तब वे दोष देहि सब मोही ॥
साकठ होय कथ्यौ बहु ज्ञाना । गुरुविन मुक्ति न होय निदाना ॥
तब अपने मन कीन बिचारा । तब गुरु उठो द्वंद संसारा ॥
हम गुरुमुक्ति दृढावन आये । गुरुमारग जिवलोक पठाये ॥
गुरु धारनको मनहि बिचारा । रामानंदसे बचन उचारा ॥
रामानंद गुरु दीक्षा दीजै । गुरुपूजा कछु हमसे लीजै ॥

तब रामानंद बचन सुनाई । शूद्रके कान न लागौ भाई ॥
रामानंद न दीक्षा दीने । तब कबीर अस उद्यम कीने ॥
बीच पंथमें पौढे जाई । जिहि मारग रामानंद आई ॥
पिछला पहर राति जब आवै । रामानंद असनानको जावै ॥
चले जात मारगमें जबहीं । लगा खराऊं ठोकर तबहीं ॥
तब पुकारिके रोवनलागे । रामानंद खडे भे आगे ॥
बालक देखि दया उर आई । रामानंद कहे समुझाई ॥
मति रोवो मति करो पुकारा । राम नाम किन कहु मेरे बारा ॥
तब कबीर सो शिक्षा पाई । गुरु शिष्यको भाव बनाई ॥
रामराम धुनि रटनि लगाया । रामानंदसे बचन सुनाया ॥

सत्यकबीर–वचन ।

गुरुजी समुझि गहो मोरे बाहीं । औरनसो चेला हम नाहीं ॥
जो बालक घुनघुनवा खेलैसो बालक हम नाहीं ।
चौदह सौ चौरासी चेले तिनमध्ये हम नाहीं ॥
हम तो लेतेसत्तको सौदापाखंड पूजवै हम नाहीं ।
बांह गहो तो गहिके पकरो फेर छूटि ना जाहीं ॥
हाड चाम मेरे नाहिं कोई जुलहा जाति हमनाहीं ॥
तुमरी नावमें केवट नाही लहरि उठै बिकरारा ।
गुरु समेत शिष्य जब बूडे कौन उतारो पारा ॥
जौं तुमरे कछु उद्यम नाहीं भीखमांगिकिनखाहू ।
मूरि सजीवन जानत नाहीं भूलि न बांधो काहू ॥
सूखे काठमें ज्यों घुन लागे लोहे लागी काई ।
विन परतीत गुरू जो कीजैं तो काल घसीटेजाई ॥
कहै कबीर सुनो रामानंद यह सिखलेवहमारी ।
निरखि परखिके चेला कीजैतागुरुकी बलिहारी ॥

चौपाई।

रामानन्द गये असनाना। तब कबीर गृह कियो पयाना॥
भोरहि कण्ठी तिलक लगाये। नग्रलोग सब देखन आये॥
पूछे किमि यह भेष बनाये। तब कबीर यह उत्तर सुनाये॥
रामानन्दको गुरु हम धारा। ताते ऐसे भेष सँवारा॥
रामानन्द खबर जब पाई। तब कबीरको टेरि बोलाई॥
रामानन्द गुरु परदा धारा। सत्य कबीर से वचन उजारा॥
रे जोलहा ते कहसि न मोही। कब मैं दीक्षा दीनों तोही॥
गुरूजी राम कृष्ण तुम मेरे। रैन पन्थ प्रकटै क्यों तोरे॥
तुम तब रामनाम मोहि दीना। मैं निज जन्मसुफलकरि लीना॥
कहै गुरू यक बालक रहेऊ। ठोकर लगा राम तिहि कहेऊ॥
गुरूजी हमही रहै सो बाला। राम नाम सुन भये निहाला॥
कह गुरू तू वैश्य कि शूद्रा। वह तो हता बाल बुधिभोरा॥
तिहि छिन बालरूपदिखलायो। तब गुरु रामानंद पतियायो॥
पै जोलहा ब्रह्मवादि कराही। अन्तर ओट सो दियो बहाई॥
कहै साधु गुरुसे समुझाई। कबीरहि जुलहान कहियेगुसांई॥
अनंतानंद कहै परचाये। कबीर सो ब्रह्मरूप धरि आये॥
दीजै दरशन इनको स्वामी। ये आहि ब्रह्मसो अन्तरयामी॥
तबहु न दर्शन दीन गुसांई। तब मह सन्मुख ठाढ भे जाई॥

साखी—गुफामाह गोपहुँचहो, पूछे को तुम आहु।
मैं कबीर सेवक अहो, अजहू नाहिं पतियाहु॥

चौपाई।

रामानंद कहाव गुरु मेरा। सत्त कबीर मैं सेवक तोरा॥
गुरु सोई जो शिष्य चितावै। शिष्य सोई गुरुसेवा लावै॥
कहो गुरू गुरुज्ञान विचारी। कोहै पुरुष कौन है नारी॥

कौन पुरुषको सुमिरो नामा । कहौ कहां अबिचल निजुधामा ॥
कहो ध्यान कीजै किहि केरा । तन छूटे कह होय बसेरा ॥
रामानंद कहै सुनु पूता । गुरुमुख ज्ञान रहो संयुक्ता ॥
आपै पुरुष आप है नारी । कहो ज्ञान चित राख संभारी ॥
सुमिरहु दशरथ सुत श्रीरामा । अवधपुरीअविचलनिज धामा ॥
श्याम स्वरूप ध्यान मन धारो । तन छूटै वैकुण्ठ सिधारो ॥
कहै कबीर सुनो गुरुदेवा । यह समुझाय कहो मोहि भेवा ॥
रामचंद्र त्रेतामें भयऊ । काहुदुखाय काहु सुख दयऊ ॥
लोभमोह जुत वन वन डोला । तत्त्वप्रकृत संगतितिहि बोला ॥
जौन बाटते रघुपति आये । सुत कौसल्याको कहलाये ॥
जब त्रेता तब राम भुवारा । कौन पुरुषको सकलपसारा ॥

साखी–अहो गुरू समुझाइये, कोहै सिरजन हार ।
रामचंद्र गुरु बंदेऊ, कौन नाम आधार ॥

चौपाई ।

कहत निगम अस करे बिचारा । पूर्व अवर्न जन्म सो न्यारा ॥
तात मात बंधु सो नहिं ताही । ना वह आवै ना वह जाही ॥
श्याम श्वेत नहिं कहिये ताही । इन्द्रासन वैकुण्ठ न जाही ॥
तीन लोक सब परलय होई । निजु धाम कहो कहांहै सोई ॥
स्वर्ग लोक तुम राखी आशा । फिरि फिरि होय गर्भमें वासा ॥

साखी–स्वर्गनरक न्यारा, सो मोहि देहु चिह्नाय ।
कह बाते जीव आयेऊ, कहोगुरू समुझाय ॥

चौपाई ।

सुनहु कबीर कहो सो गहहू । करिये योग अमर है रहहू ॥
आसन साधहु बांधहु मूला । अष्ट कमलदल निरखहु फूला ॥

चन्द सूर गहि कीजै मेला । मन पौना शुभ निधर खेला ॥
चढि आकाश अमृत रस पीवो । तबकबीर तुम युग युग जीवो ॥
साखी–स्वर्ग नरकते न्यारा, ज्योतिपुरुष निर्वान ।
तहवाँसे जिव आइया, कहो गुरू सहिदान ॥

चौपाई ।

कहे कबीर सुनो हो स्वामी । तुम हो सतगुरू अंतरजामी ॥
योगके किये अमर जो होई । तौ पुनि योगी मरे न कोई ॥
का भो साधे आसन मूला । जौं नहिं मेटे संशय शूला ॥
का भो अष्टकमलके पेखे । जौं नहिं आप रूप निजु देखे ॥
का भो चन्प सूरके मेला । जौं नहिं शब्दसुरति गहि खेला ॥
का भो सुष्मुनि जाय समाये । जौं नाहीं अक्षर लखि पाये ॥
क्याअकाश चढि अमृत पीये । जौंनहि नामअमी चित दीये ॥
ज्योति स्वरूपी पुरुष बतायहु । ज्योति काल तीनों पुरुषायहु ॥
यहिजिव नाहिं ज्योतिसे आवा । परम ज्योतिसे अंश उपावा ॥
जोजिव ज्योति पुरुषते होई । नो काहे जि जाय बिगोई ॥
ज्योति निरंजन काल अन्याई । सिद्धि तपी सबधीर धरि खाई ॥
साखी–ब्रह्मा विष्णु महेश्वर, सुर नर मुनिसब झार ।
ज्योति निरंजन सब कहे, खायौ बारंबार ॥

चौपाई ।

जाहि कहतहो पुरुष निर्वाना । वही आहि तो काल देवाना ॥
साखी–योग यज्ञ जपतीरथ, यह सब यमके जाल ।
कहै कबीरसतनामबिन; कबहुन छोडै काल ॥
पांच तीन जहवां नहिं, नहीं प्रकृत प्रवेश ।
रविशशिपानीपौननहिं, तहँको कहो सँदेश ॥

चौपाई ।

कहै गुरु तुम शिष भये मोरे । यह सब बुद्धिको दीनेहु तेरे ॥
कहै कबीरं सब तुम परतापा । हमरे तुमहि माय अरु बापा ॥
तब गुरु हमपर भये दयाला । निजकरादियो सुमिरिनीमाला ॥
कहै गुरु सुन साधु कबीरा । तुम तो सेवकहो मतिधीरा ॥
सर्वानंद विप्र यक आये । तिनपुनि गुरु ते गोष्टि कराये ॥
ताहि जीत गुरु शिष्य करावा । तब गुरु हम कह तिलककरावा ॥
सब पर श्रेष्ठ हमें गुरु कीना । हम पुनि सबते रहे अधीना ॥

साखी-गुरुके सब शिष्य मोहिको, बोलैं गुरूसमान ।
हम गुरु साधु अधीन हैं, भाषै निर्भय ज्ञान ॥

शब्द ।

लखै कोई बिरलापद निर्वान । बिन रसना सूर धरै ध्यान ॥
तामें दरशे पुरुष पुरान । कर्म छोडि सब भर्म नसान ॥
दुरमति छोडि कमल धरु ध्यान । तीन लोकमें काल समान ॥
चौथे लोकमें नाम निसान । राम नन्द गुरु करै बखान ॥
दास कबीरको निरमल ज्ञान ।

इति ।

मेरो नाम कबीरा हो जगत गुरु जाहिरा ।
तीन लोकमें मागा मेरा त्रिकुटी है अस्थान ॥
पानीपौन समेरसमाना इस विधि रच्यो जहाना ।
गगन मन्दिरमें बासा मेरा मंजनि है अस्थाना ॥
ब्रह्मबीज हमहीसे आया हमरै सकल जहाना ।
अनहद लहर गगन गढ उपजै बाजै सोहं तारा ॥
गुप्त भेद वाहीसे कहिये जो निज होय हमारा ।
भवबंधनसे लेहु छोडाई निरमल करो शरीरा ॥

सुर नर मुनि कोई भेद न पावै पावै संतगंभीरा ॥
वेद कदापि पार नहिं पावै ऐसे मतिके धीरा ।
कहैं कबीर सुनो रामानन्द दोनों दीनके पीरा ॥

चौपाई ।

रामानन्द कबीर कहानी । जक्तमाह बहु विधि बिहरानी ॥
कछु मैं सूक्षम लिख्यौ बनाई । कीरति जासु जक्तमें छाई ॥
सत्त कबीरको चरित अनेका । सो कछु इहां लिखौ नहिं एका ॥
केते परचा गुरुहि देखाई । तब ताके हिय निश्चय आई ॥
मैं घनघोर गुष्टि गुरु पाही । अगम ज्ञान सुनि बोले ताही ॥

रामानंद वचन ।

दोहा--मैं जाना तुम जोलहा, मोहि पडा बड धोष ।
मूल दिक्षा मोहि देव कबीर, जीवत आवे संतोष ॥
करता तुम हो साधु हो, सत्य कबीर है देव ।
तन मन तुमको अर्पिहों, कल्ह दीक्षा मोहि देव ॥

सत्य कबीर–वचन ।

साखी–काल करन्ते आज कर, आज करंते अब ।
औसर बीता जात है, व्यौहार करोगे कब ॥
काल करंते काल है, मोहि भरोसा नाहिं ।
यह तन काचा कुम्भहै, विनशि जाय छनमाहिं ॥
घडी पलकको सुधि नहीं, करो कालको साज ।
काल अचानक मार है; ज्यों तीतरको बाज ॥

चौपाई ।

योगी गोरख नाथ प्रतापी । तासुतेज पृथ्वी पर व्यापी ॥
काशी नग्रमें सो पग धरही । रामानंदसे चर्चा करही ॥
चरचामें गोरख जय पावै । कण्ठी तोरे तिलक छुडावै ॥

सत्य कबीर शिष्य जब भयऊ। यह वृत्तांत तब सो सुनिलयऊ ॥
गोरखनाथ के डरके मारे। बैरागी नहिं वेष सँवारे ॥
तब कबीर आज्ञा अनुसारा। वैष्णव सकल स्वरूप सँवारा ॥
सो सुधि गोरखनाथ जो पायौ। काशीनग्र शीघ्र चलि आयौ ॥
रामानंदको खबरि पठाई। चर्चा करो मेरे सँग आई ॥
रामानंदकी पहिली पौरी। सत्य कबीर बैठ तिहि ठौरी ॥
कह कबीर सुन गोरखनाथा। चर्चा करो हमारे साथा ॥
प्रथम करो चर्चा संग मेरे। पीछे मेरे गुरुको टेरे ॥
बालक रूप कबीर निहारी। तब गोरख ताहि बचन उचारी ॥

सत्यकबीर वचन--शब्द।

कबके भये बैरागी कबीरजी कबके भये वैरागी ॥
नाथजी हम जबसे भये वैरागी मेरी आदि अंत सुधिलागी ॥
धुधूकार आदिको मेला नहीं गुरू नहीं चेला ॥
जबका तो हम योग उपासा तबका फिरों अकेला ॥
धरती नहीं जदकी टोपी दीना ब्रह्मा नहीं जदका टीका ॥
शिवशंकरसो योगी नाहीं जदका झोली शिक्का ॥
द्वापरकी हम करी फावडी त्रेताको हम दंडा।
सतयुग मेरी फिरी दुहाई कलियुग फिरौ नौखंडा ॥
गुरुके वचन साधुकी संगत अजर अमरघरपाया।
कहैं कबीर सुनोहो गोरख जब हमतत्त्व लखाया ॥
जो बूझे सो बावरा क्या उमर हमारी।
असंख युग परलय गई तबके ब्रह्मचारी ॥
कोटि निरंजन हो गये परलोक सिधारी।
हमतो सदा महबूब हैं सोहं ब्रह्मचारी ॥
दश कोटि ब्रह्मा भये नौ कोटि कन्हैया।

सात कोटि शंभू भये मोरी एक पलैया ॥
कोटिन नारद होगये महम्मदसे चारी।
देवतनकी गिनती नहीं है क्या सृष्टि विचारी ॥
नाहिं बूढा नाहिं बालक नहीं भाट भिखारी।
कहै कबीर सुन गोरख यह उमर हमारी ॥
अबिधूअबिगतसे चलिआये कोई भेदमरमनहिंपाया।
नामेरोजन्मनगर्भबसेराबालक ह्वै देखलाया ॥
काशीनग्रजङ्गल बिचडेरा तहां जोलाहेपाया ॥
मात पिता मोरे कछु नाहीं ना मेरो गृहदासी।
जुलाहाको सुतआनिकहायाजगत करतहैहांसी।
धडनहिंमेरे गगन कछुनाहींसूझैअगम अपारा ॥
सत्य स्वरूपी नाम साहेबको सोहै नाम हमारा।
अधरद्वीपनहिं गगनगुफामेंतहँनिजुवस्तुहमारा ॥
ज्योतिषरूपीअलखनिरञ्जनसोजपैनामहमारा ॥
हाड चाम लोहू नहिं मोरे हों सतनाम उपासी ॥
तारन तरन अभै पददाता कहै कबीर अविनासी।

गोरख वचन।

कौन छुरा कौनपानी गुरू मूँडे कौन बानी ॥

सत्यकबीर वचन।

शब्द छुरा निरञ्जन पानी गुरुमूँडै निरबानबानी ॥

गोरख वचन।

कौन दर कौन दरवेश कौन गुरूने मूँडै केश ॥
कौनपुरुषकोसुमिरोनांवमांगोभिक्षाभांडोगांम ॥

सत्यकबीर वचन।

मन दर मौन दरवेश गुरू गोविंदने मूडे केश ॥

अलखपुरुषकोसुमिरोनांवमांगो भिक्षातारोगांव ॥

गोरख वचन—चौपाई ।

कौन तुमारी उतपाति कीनी । किसने तुमको माला दीनी ॥
कौन गुरू दीनो उपदेश । उतारो माला करो आदेश ॥

कबीर वचन ।

आदि पुरुषने उतपाति कीनी । सिरजन हारने माला दीनी ॥
गुरूगोबिंद दीनो उपदेश । न उतारो माला नाकरों आदेश ॥

गोरख वचन ।

क्या लै उठो क्या लै बैठो रहो कौनकी छाया ॥
कौनमाह निरञ्जन पेखे कैसे त्यागी माया ॥

कबीर वचन ।

एकले उठ एकले बैठे रहै एककी छाया ॥
एकैमाह निरञ्जन पेखा सहजे त्यागी माया ॥

गोरख वचन ।

कौन तुमारी डिब्बी बोलिये कौन तुमारा चावल ॥
कौनसो तुममें सिद्धबोलिये कौनसो तुमरोरावल ॥

कबीर वचन ।

काया हमारी डिब्बी बोलिये कर्महमारेचावल ॥
एक हमसे सिद्ध बोलिये और सकलहै रावल ॥

गोरख वचन ।

कौन तुमारी गुदरी बोलिये कौनतुमारा धागा ॥
कौन तुमारी टोपी बोलिये काहेते मन लागा ॥

कबीर वचन ।

काया हमारी गुदरी बोलिये पौन हमारा धागा ॥
गगन हमारी टोपी बोलिये अलख पुरुष मनलागा ॥

गोरखवचन ।

कौन तुमारी तिलक बोलिये कौन तुमाराछापा ॥
कौन तुमारी जाति बोलिये कहा तुमारी आसा ॥

कबीरवचन ।

तत्त्व हमारी तिलक बोलिये राम नाम है छापा ॥
वैष्णव हमारी जाति बोलिये शब्द मंडलमें बासा ॥

गोरखवचन ।

शब्द कहांसे आया कहो शब्दको बिचार ॥
नहीं तो तिलक माला धरो उतार ॥

कबीरवचन ।

शब्दै धरती शब्द अकाश । शब्दै पांच तत्त्वके बाश ॥
कहैं कबीर हम शब्द सनेही । शब्द न बिनसै बिनसै देही ॥

गोरखवचन ।

अंडान मंडान चार खुरो द्वै कान ॥
जान तोजान नातो झोली मालाउरे आन ॥

कबीरवचन ।

अंडानधरती मंडानअकाश चारों खूट चारोंखूरी चंदसूरय-
द्वै कान। ना जानो मात्रा तो गुरु रामानंदकी आन ॥
शेली सिंगी और खटपटी । फिर बोलो तोरों कनपटी ॥

गोरखवचन ।

आसन बांधो बासन बांधो अरु बांधो नौद्वारा ।
तोहि बांधों तेरे गुरुको बांधों निकसे कौनेद्वारा ॥

कबीरवचन ।

आसन मुक्ता बासन मुक्ता मुक्ताहै नौ द्वारा ॥
मैं मुक्ता मेरो गुरुभी मुक्ता निकसै दसमें द्वारा ॥

चौपाई ।

गोरखनाथ कबीर समाजा । विविध ज्ञान विज्ञान विराजा ॥
चर्चा पर्चा बहुविधि ठानो । विदित जक्तमें लोगन जानो ॥
इहांसो कथा लिखो नहिं कोई । अन्त बाद जिहि औसर होई ॥
गोरख नर्म भये तिहि बारा । विनय सहित निज बचनउचारा ॥

गोरखवचन ।

नवो नाथ चौरासी सिद्ध, इनको अनहद ज्ञान ।
अविचल घर कबीरको, यह गति बिरलाजान ॥
झोरी झंडा कूबरी, शेली टोपी साथ ।
दाया भई कबीरकी, चढाई गोरखनाथ ॥

धर्मदास वचन ।

दोहा–बाजा बाजा रहितका, परा नगरमें शोर ।
सतगुरु खसम कबीरहै, नजर न आवै ओर ॥

नानकशाहवचन ।

शब्द–वाह वाह कबीर गुरु पूरा है ।
पूरे गुरुनकी मैं बलिजैहों जाको सकल जहूराहै ॥
अधर दुलैच परे है गुरुनके शिव ब्रह्मा जह झूलाहै ॥
श्वेत ध्वजा फहरात गुरुनके बाजत अनहद तूराहै ॥
पूर्ण कबीर सकल घट दरशै हरदम हाल हजूराहै ॥
नाम कबीर जपै बडभागो नानक चरनको धूराहै ॥

सत्यकबीरवचननानकशाहप्रति ।

शब्द–वाह वाह लडके जीतारहु ।
मंडुयेकी रोटी बथुयेकी भाजी ठंडा पानी पीतारहु ॥
प्रेमकि सुई सुरतिको धागा ज्ञानगूदरी सीतारहु ॥

यहि लडकेकी बड बड अँखियां नितप्रति दरशन करतारहु ॥
कहैं कबीर सुनो भाई लडके रामरासिक रस पीतारहु ॥

मलूकदासवचन ।

शब्द--जपो रे भाई साहिब नाम कबीर ।
एक समय गुरु वंशी बजाई कालिंदीके तीर ।
सुरनरमुनि सब चकित भयेहैंअरुयमुनाजीकोनीर ॥
काशी तजि गुरु मगहर आये दोऊ दीनके पीर ॥
कोइ गाडै कोइ अग्नि जलावै नेकन धरते धीर ॥
चार दागते सतगुरु न्यारा अजर अमरो शरीर ॥
जगन्नाथकोमंदिर थापे हटि गये सायरनीर ॥
आसा रोपि समुद्र हटाये ऐसे गुरू गँभीर ॥
दास मलूक श्लोक कहतहैं खोजहु खसमकबीर ॥

दादूराम वचन ।

साखी--अधर चाल कबीरकी, मोसे कही न जाय ।
दादू कूदै मिरग ज्यौं, पर धरनि पर आय ॥
हिन्दूको सतगुरु सही, मुसलमान को पीर ।
दादू दोनों दीनमें, अदली नाम कबीर ॥
हिन्दू अपनी हद चलै, मुसलमान हद माह ।
दादू चाल कबीरकी, दोऊ दीनमें नाह ॥
दादू बैठे जहाजपर, जो दरिया के तीर ।
जलकी जेती माछरी, रटै कबीर कबीर ॥

नाभाजू वचन ।

दोहा--बानी अरबो खरबो, ग्रन्था कोटि हजार ।
करता पुरुष कबीर, रहै नाभे विचार ॥

गरीबदास वचन ।

साखी--गरीबपंजा दस्त, कबीरकासिरपर धारो हंस ।
जम किंकर चपै नहीं, ऊधर जात है वंस ॥

श्रीमहादेव उवाच ।

श्लोकः--यः सुखसागरो दाता बीजज्ञानं तथैवच ॥
आद्यन्तरहितो लोके यः कबीर इहोच्यते ।
कलांशेनगतो भूम्यां विलासा सत्य संज्ञकः ॥
दीनोद्धारेतिदक्षः कबीरसंज्ञः इहोच्यते ।
कर्ता कोन्यायकारी च व्यक्ताव्यक्तःसनातनः ।
रमते सत्यलोके यः स कबीर इहोच्यते ।

पारवतीजीने पूछा कि कबीर किसको कहते हैं उसके उत्तरमें शिवजीने कबीर साहिबकी स्तुतिमें सौ एक श्लोक कहे हैं उस ग्रन्थको कबीर एकोत्तर कहतेहैं जो सामवेद और पाताल खण्डमें हैं उसमेंसे यह तीन श्लोक लिखे हैं ।

इति ।

अथ वैष्णव आचार वर्णन--चौपाई ।

सहित बिचार आचार घनेरे । उज्वल क्रिया तासुकी हेरे ॥
नित दातन मज्जन तन करही । शौचाक्रिया भलीभांतिसेधरही ॥
मांस मद्य आदिक हैं जेते । जानि अभक्ष न संग्रह तेते ॥
जप तप ध्यान धुन्धते धारे । ठाकुरकी पूजा विस्तारे ॥
मूरति होय कि मानस ध्यानो । उभय भांति हरि सेवा ठाना ॥

अथ मूर्तिपूजा आठप्रकार वर्णन ।

दोहा--मनोमयीपरतक्षं कही, चित्र बखानो काठ ।
माटी धात ध्यानमय, प्रतिमा पूजा आठ ॥

चौपाई।

प्रथमहि पानी विद्या जानो। बिन विद्या किमिहरिपहिचानौ ॥
द्वितिये पुष्पको अर्थ कहीजै। एक देवकी टेक गहीजै ॥
तृतिये चावल अर्थ सुनाओ। भोगअशुचिपरधान्य न खाओ ॥
चौथे चन्दनते इमि जानी। काम क्रोधकी कीजै हानी ॥
कीना डाह द्वेष सब जोई। उरते दूर बहाओ सोई ॥
पंचम धूप अर्थ इमि कहिये। प्रीत देव गरमीते गहिये ॥
छठये दीपको अर्थ बताओ। बुद्धिदीप निज हृदय जगाओ ॥

अथ मुक्तिस्वरूप वर्णन चौपाई।

जीवते ब्रह्म होय जो कोई। मुक्तनाम भाषे श्रुति सोई ॥
चार भांतिकी मुक्ति प्रमाना। सालोको सामीप बखाना ॥
सारूपो सायुज्य कहीजै। ऐसो तिनको अर्थ गहीजै ॥
सालोकहिं प्रभु लोक निवासा। सामीपा हरिके ढिग वासा ॥
सारूपा प्रभु रूप हो भासा। सायुज्यौ हरिमें मिल दासा ॥
जस वासना दास उर होई। तैसी मुक्ती पावै सोई ॥
जब उपासना पूरण भेऊ। जीवनमुक्त ताहि तब कहेऊ ॥
परम धामको जब सो जावै। हरिपारषद तासु ढिग आवै ॥
जब हरिधामको चालन लागे। थूल देहको तब सो त्यागे ॥
लिंगदेह तब धारन करई। पांचों तत्त्व देह परिहरई ॥
जब भूलोकते आगे चाला। पृथ्वी तत्त्व देह तब डाला ॥
बहुरि देह पानी की धारा। तब जलतत्त्व लंघिहो पारा ॥
बहुरि अग्निदेही गह सोई। पार अग्नि घेरा तब होई ॥
फेर वायुकी देहको धारी। पौन घेर बाहर पग धारी ॥
इमि तन त्यागत गहत नवीना। सकल घेर बाहर पग दीना ॥
चलि ब्रह्मांड पार जब कीता। मायापार भो त्रिगुणातीता ॥

पुनि परमातम प्रकाश बखाना । तामें जाय करे असनाना ॥
करि असनान लिंगतन छोडा । दिव्य देह अविकारी जोडा ॥
ज्ञानानंद ब्रह्म तन पाई । निज स्वामी के द्वारे जाई ॥
आदर युत प्रभुके ढिग आवै । हरिगुन विविधि भांतिसे गावै ॥
प्रभु दाया माया ते छूटा । कठिन दुःखते प्रभुपद जूटा ॥
ब्रह्मानंद मगन मन होई । यद्यपि ऐसो समरथ सोई ॥
रचे अमित ब्रह्मांड जो चाहे । पाळपोषिके पुनि तिहि ढाहे ॥
तदपि ब्रह्म सुख ऐसो लहई । और दिशा नाहिं ता चित वहई ॥
याहूमें ब्यौरा बहु तेरा । कथा कछुकलिखिये तिनकेरा ॥
ब्यौरा वेद कहे यहि भाये । जो कोई मुक्त स्वरूपसमाये ॥
सागरमें जस बुंद समाना । पै वह बुंद आपको जाना ॥
बहुरि कहै श्रुति ऐसो लेखो । ऐसी मुक्ति जीवकी देखो ॥
पुष्पमाल जैसे हरि केरो । अथवा जैसे भूषन हेरो ॥
यहि विधि जिव हरि अंगमेंजूटा । जिहि औसर मायाते छूटा ॥

इतिमुक्त ।

अथ परलोकमें पुण्यात्मा और परमात्माको वरणन ।

दोहा--कथा कहौ परलोककी, जब जिव त्यागे प्रान ।
मुरछा मृतके गत भये, पुनि तिहि जक्त फुरान ॥

चौपाई ।

जीवकी जब मुरछा गत होई । इंद्रिन सहित आप तन जोई ॥
पिछली स्मृतिहि दियो बिसराई । जन्म धरंत आपको पाई ॥
बाळ युवा वृद्धादिक माना । जाति पांति कुलमें लपटाना ॥
भ्रम करिके जित जगको देखा । जैसे कछु स्वपनेको लेखा ॥
जाग्रत स्वप्न भेद नाहिं कोई । स्वप्नेहुमें स्वपनांतर होई ॥
भ्रमही करि पितु माता जाना । मिथ्या भास गहे अज्ञाना ॥

मृतक होय जीव जिहि बारा । देह अंत बाहक तब धारा ॥
बहुरि बासना प्रेरि ले आवै । अधि भौतिक देही दिखलावै ॥
अधि भौतिक देही जब पाया । दुःख सुखको कारन यह आया ॥
हृदय कमल अंगुष्ट प्रमाना । जीव अकाश जो नाम बखाना ॥
ताही कमलमें भर्मत रहई । लोक अनंत दृष्टिमें गहई ॥
तहँ कोटिन ब्रह्मांड निहारी । हृदय कमल निज माह विचारी ॥
तीन प्रकार पुण्य जन राशी । मूरख पुनि धार्नां अभ्यासी ॥
तृतिये सर्व शिरो मुनि ज्ञानी । भिन्न २ गति निर्णय ठानी ॥
धार्नां भ्यासीकी यह बाता । तन तजि इष्ट देव ढिग जाता ॥
अपने इष्ट देव पुर जाई । नाना विधि सुख भोग कराई ॥
नहिं मूरख नाहिं ज्ञानी जोई । सुखसे निज तन त्यागे सोई ॥
बहुरि जन्म जगमें सो पाई । पुनि सो आतम लाभ लहाई ॥
अब ज्ञानीकी कथा बखानी । तजत देह सब सुखकी खानी ॥
मुक्ति विदेह तासुको ठीका । जिनके हृदय ज्ञानको टीका ॥
पापीको अब मरण बतावो । महा दुःख ताके उर छावो ॥
जिनको अज्ञानिनको संगा । उत्तम बुद्धि होय जिहि भंगा ॥
पापी चार कर्म जो करही । श्रुति बिरुद्ध मग माह बिचरही ॥
तजै देह जब ऐसे लोगा । तिनको घेर शूल सौ सोगा ॥
विषय न बुद्धि जासु लपटानी । दुसह दुःख पावै सो प्रानी ॥
हो पदार्थसे तिनाहि वियोगा । रुंधित कंठ स्मृत सुखभोगा ॥
नैन तासु दोउ तब फटि जाही । कांति विरूप अंग हो ताही ॥
अङ्ग उपांग टुटै तिहि बारी । प्रान निकसगहि मारग नारी ॥
होय पदार्थ बियोग दुखारी । अस अनुमान करे दुःख भारी ॥
अग्नि कुंडमें डारे जैसे । दुसह पावै जिव जैसे ॥
सर्व द्रव्यातिहि भ्रमयुत भासा । नभ पृथ्वी पृथ्वी अकाशा ॥

परम कष्ट पावै तिहि काला । नभते जनु कोइ महिमें डाला ॥
पाथरमें धरि मनहु पिसाना । जिमि तृन भोडरमें भरमाना ॥
अंध कूपमें जैसे गेरा । मानहु कोल्हूमें धरि पेरा ॥
रथते गिरे जीव जिमि नीचे । रस्सी ज्यों गळडारिके खींचे ॥
दुःख अनँत परकार बखानो । कहलो ताकी निर्णय ठानो ॥
मूर्छित होय गहै जडताई । ताके कर्म जुरहि सब आई ॥
जिमि किशान बीजनको बोवे । समय पाय ताको फल होवे ॥
प्रान अपान कला दोउ टूटे । विषय बियोग महा दुःख जूटे ॥
मृत्यु समय जब जिव मुरछाना । गगन लीन हो पौन अरु प्राना ॥
ताहि प्रानमें चेतन ताई । चेतनता बासना गहाई ॥
सहित बासना चेतन प्राना । गगन रूप ह्वै गगन समाना ॥
यथा गंधको पौन गहाई । ताहि सहित नभ स्थितकराई ॥
तिमि चेतन बासना सहीते । जाय अकाश माह सो थीते ॥
तिहि अनुसार बहुरि जगफुरता । दर्ब कालते सो तिहि जुरता ॥
दोय प्रकारके जीव बखानी । पापी अरु पुण्यातम प्रानी ॥
पुनि तिनमें कर तीन बिधाना । एक महा पापी करि जाना ॥
द्वितिय मध्य तृतिये लघु होई । तीन प्रकार पुण्य जन सोई ॥
एक महा पुण्यातम लोई । पुनि मध्यम लघुको गतिजोई ॥
प्रथम महा पापी दुःख हेरे । घन पखान सो ताको टेरे ॥
जड समान मुरछामें रहई । वर्ष सहस्र न चेत न गहई ॥
ताहू मुरछामें दुःख भूरी । बहुरि ताहि चेतनता फूरी ॥
जब ताके तनमें सुधि आवै । आपको देह सहित लखिपावै ॥
तब सो जायके नरकमें परता । अमित काळ तामें दुःखभरता ॥
नाना भांति परम दुःख पाई । बहुरि नरकते बाहर आई ॥
देह अनंत धरे पशु केरा । बहुरि सो मानुष को तन हेरा ॥

जब धारे सो मानुष देहा। महा नीच दारिद्री गेहा॥
सोऊ तन धरि दुःख बहु भोगा। कबहु न सुख पावै सो लोगा॥
अब मध्यमपापी गति वरणो। जाहि समय हो ताको मरणो॥
जडीभूत हो वृक्ष समाना। उर अंतर दुःख दौंदह काना॥
कछुक काल पछि सुधि आवै। अर्क माह निजु वासा पावै॥
नर्क भोगि पुनि पशुतन धारी। फिर नरदेह केरि अधिकारी॥
अब सुन लघु पापीकी बाता। मूर्छित हो पुनि चेतन गाता॥
नर्क भोगि पुनि पशु कलेवर। ताहि भोगि फिर मानुष तनधर॥
अब पुण्यातमको कह मर्मा। जिनके जक्त माह भल कर्मा॥
महा पुण्यजन जब मरिजावै। स्वर्गसे तब बिमान चलि आवै॥
तिहि बिमानपर ताहि चढाई। आदर सहित वाहि लेजाई॥
जाहि देवताको सो ध्यावै। तासु लोक निजु भौन बनावै॥
अपने इष्टदेव ढिग जाई। सबहि भांति तिहि सुख सरसाई॥
भोगि स्वर्ग आवै नर देशा। काहू फलमें करै प्रवेशा॥
तिहि फलको पुरुष जोखाई। बीज द्वारा तिहि उदर समाई॥
जननी जठरते बाहर होई। उत्तम कुल धनवंता सोई॥
जौं बासना रहित हो येही। तौ सौं धरे संत ग्रह देही॥
सहित बासना सुख सरसाया। रहित बासना भक्ति अमाया॥
अब मध्यम धर्मी गति सुनिये। प्रेरित पुण्य स्वर्ग ग्रह गुनिये॥
अब लघु पुन्यातम गति कहइ। मृत्यु पीछे अस चेतन गहई॥
संगे बंधु मम क्रिया कराही। ताते पितर लोक हम जाही॥
पितरलोक सुख लहि महि आवै। जैसो कर्म देह तस पावै॥
पापी मुये दुःख चहुँ पासा। महा कठिन मारग तिहि भासा॥
जिहि मारग ताको लेजाही। कंटक लगे चरन में ताही॥
तपै तेज रवि तापै भारी। ताते ताको तन जर छारी॥

जो कोई पुण्यातम लोई । छायाको अनुभव तिहि होई ॥
सुन्दर सर बापी विधि नाना । चहुँदिश बने सोहावन थाना ॥
सुखद पंथसे तेहि लेजाही । पापीको सब दुःख दूरशाही ॥
धर्मरायके ढिग जब जावै । चित्रगुप्त तब लेख लगावै ॥
चित्रगुप्त क्रम कागज खोले । सबके पुण्य पापको बोले ॥
चित्रगुप्त जस न्याव चुकावै । तैसे जीव दुःख सुख पावै ॥
बडे पुण्यते स्वर्ग बसेरा । जगमें सब सुकर्म जिनकेरा ॥
जहां तहां शोभित बन बागा । भांति भांतिके द्रुम तहँ लागा ॥
इन्द्रके नंदन बनकी शोभा । जाहि देखि मुनिवर मनलोभा ॥
देव अंगना केर छबि भारी । महा मोहनी रूप सँवारी ॥
स्वर्गके गुन सुख कथे बहूता । लहे जीव निज पुण्य प्रसूता ॥

दोहा—जैसे स्वर्गमें सुख घने, तिमि दुःख नर्क अनंत ।
होय जहां यमयातना, बहुविधि वेद वदंत ॥

इति ।

अथ प्रलयवर्णन--चौपाई ।

तैंतालिस लख बीस हजारा । चहुँ युग आयु यकठै धारा ॥
ताको सहस गुना पुनि करिये । एक द्यौस ब्रह्माको धरिये ॥
जैसी दिन तैसी है राती । जागे ब्रह्मा रैन सिराती ॥
दिनमें करे जगतको काजा । रैनमें निद्राको सुख साजा ॥
रैनमें सबही जगत नशाना । चंद्र सूर्य लग्यादिक नाना ॥
केते ऋषि मुनि सहितबिधाता । जीये और सकल विनशाता ॥
बहुरि वेद ऐसो अनुमाना । ब्रह्मा सहित सकल बिनशाना ॥
दूजा ब्रह्मा पुनि तन धारी । कारय सकल करे संसारी ॥
जक्तको सूतक बहु नहिं टूटै । एक मरे दूजा पुनि जूटै ॥
न्यायशास्त्र अरु सांख्य बखाना । सकल कृतम तिहिकाल सिराना ॥

पुनि वेदांत सो मता गहीते । कृतम जाल कबहूँ नहिं बीते ॥
एक मरे दूजा पुनि होई । कारय जक्त सनातन सोई ॥
दोय प्रकारकि परलय होई । खण्ड प्रलय महा पर्लय सोई ॥
खण्डप्रलय पुनि द्वैविधिकीनो । ऐसो ताको लेखा चीन्हो ॥
नाम चतुरमुख कल्प कहीजे । चौदह मन्वंतर तामें कीजै ॥
एक मन्वंतर जब वित जावै । तब जगमें जल परलय आवै ॥
पृथ्वी जड चेतन संहारा । सकल नसाहिताहि जल धारा ॥
एक मन्वंतरकी थित भाखा । तीस करोर पचासी लाखा ॥
मध्यमें दोय मन्वंतर केरे । संधी नाम तासु को टेरे ॥
सत्रह लक्ष सहस्र अठाइस । ता सन्धीको लेख लगाइस ॥
इतने काल जक्त नहिं रहई । बरते शून्य वेद अस कहई ॥
बाल भोग लघु परलय जाना । महा प्रलय निशि भोजन माना ॥
जब जो महाप्रलय तिहि आवै । मरा जो निश्चय देह सो पावै ॥
होय सकल जब धर्मकि हानी । पाप पयोधि बुडै नर प्रानी ॥
कतहु न दीख अचार बिचारा । मन मत पन्थ जक्त जिव धारा ॥

छंदतोटक ।

सुत मानत मातु न तात जही । गुरु सेवन देवन दान कही ॥
कलि कौतुक घोरकठोर महा । सुखदुःखितको हरिनाम कहा ॥
कपटी लपटी नर नारि गना । नहि मानत सन्त महन्त जना ॥
तपसी लपसी गज खात फिरे । मुंडिका धनिका बनिकार भिरे ॥
द्विज चीन्ह जनेउन वेद क्रिया । भगवा यक भेष अलेख प्रिया ॥
बहु यंत्रन मंत्रन दर्ब हरी । बिनराम रमे किमि काम सरी ॥
बिरती बिन सिद्ध जती फिरते । नहि ज्ञानहै चित्त बिना थिरते ॥
कलिकाल कराल दुकाल मरी । नर पीडक सो दुःख द्वंद भरी ॥
तजि रूपवती युवती भरता । नहि गारि लहो परनारि रता ॥

तिय सुन्दर पीय बिहायगता । अरधंगन सङ्ग अनंग मता ॥
कर पाप अनंत भनंत कहा । परिताप सतापन लोग दहा ॥
श्रुतिपन्थ बिहाय कुपंथ चले । तजि अम्मृत छाकसोखाकडले ॥
गृह संपति दंपति हीन भये । दरवेख अलेखको भेष लये ॥
नाहि साध बिषय क्रमसाधतये । बिन सार लखे यमद्वार गये ॥
मदनातुर युत्य फिरै युवती । किमि भोग नरा नरही कुवती ॥
तिय ठाट भये जब घाट नरा । न अधार कहू विभिचार भरा ॥
उठिगे श्रुति धर्मनके बकता । मनमानत जो जेहि सो छकता ॥
बरणाश्रम धर्मके मर्म नहीं । सब शंकर भे न सुकर्म कहीं ॥
समता बिगता ममता गरको । जिव रोग वो शोकनमें ढरको ॥
अघ औगुन सौगुन जीव लदा । मन बांछित बोध न वेद बदा ॥

चौपाई ।

यहि विधि जक्त धर्म बिनसावै । तब हयग्रीव प्रकट हो आवै ॥
शिर तुरंग देही नर जाको । धावै सकल धरा परि पाको ॥
पौन प्रसङ्ग अङ्ग तिहि पाई । जीवकि बुद्धि शुद्ध है जाई ॥
लघु परलय जब धर्मकि हानी । महाप्रलय अबकहो बखानी ॥
चीन्ह अनेक भयावन होई । औबा मरी भरी दुःखजोई ॥
पश्चिम दिशते रवि उगि आवै । द्वितिया दक्षिणमें प्रकटावै ॥
उत्तर पूरब सूरय देखे । दशहु दिशा दश रवि यह लेख ॥
एक सूर्य प्रथमै ते रहऊ । बडवा अग्निते सोई कहेऊ ॥
बडवानल अरु ग्यारह सूरा । द्वादश सूर्य तेजते पूरा ॥
शिव पुनि तीसर नैन उघारा । शेषके मुखते अग्नि प्रचारा ॥
महा तेज पृथ्वीमें भरेऊ । थावर जङ्गम सब कछु जरेऊ ॥
पौन प्रचंड अण्ड भारि पेखे । परवत उडाहि तूलके लेखे ॥
गिरि सुमेरु आदिक गिरनाना । सूखे पत्र सो गगन उडाना ॥

सात सिंधु तिहि काल छुभाई । जलकी वृद्धि एक ह्वै जाही ॥
पुष्कर मेघ कीन पुनि कोपा । जलसे सकल भूमिको तोपा ॥
मुसल धार पानी बरसाई । मोट धार पुनि वृक्ष कि नाई ॥
बहुरि नदीकी धारा जैसे । नभसे पानी वरषै ऐसे ॥
ये तो जल दिश उर्ध चढंता । पहूँचे ब्रह्मलोक पर जंता ॥
इंद्र कुबेर आदिक दिगपाला । भोगिके ब्रह्म लोकको चाला ॥
यहि बिधि सकल जलामय होई । जीव जंतु कहुँ रहै न कोई ॥
पृथ्वी गालि जलमें मिलि जाई । तिहि औसर भैरों प्रकटाई ॥
पृथ्वीते आकाश लों देही । महा भयानक रुद्र है येही ॥
तिहु दृग मानहु सूर्य है तीनी । ऐसो तेज मयी कहि दीनी ॥
तिहि भैरोंकी श्वासा चाले । पानीके ऊपर सो डाले ॥
पौन प्रचंड नासिका बाटा । ताते होय बारिको घाटा ॥
ताकी श्वासा जल जब सोखे । रहे रुद्र पुनि आपैं चोखे ॥
दशहु दिशा शून्य है जाई । रवि शशि अग्न्यादिक बिनशाई ॥
गुन अरुतत्त्व न कबहु प्रकाशा । सर्व शून्य वर्ते चहुँ पासा ॥
भैरों तनते निजु तन धारी । प्रकटै महा भैरवी नारी ॥
महा भयावन मूरत जाकी । सप्त सिन्धुकर कंगन ताकी ॥
मानुष छाया देखो जैसे । भैरों तनते प्रकटै जैसे ॥
इंद्र कुबेर वरुण यम काला । तिनके मुंडको पहिरे माला ॥
नृत्त करे सो तहँ तिहि बारा । अट्ट अट्ट कारि शब्द उचारा ॥
भैरों और भैरवी दोई । नृत्त करै तब शून्यमें सोई ॥
बहुरि भैरवी लय है जाई । भैरोंके तन माह समाई ॥
अब कछु शेष रहा नहिं खेला । तब भैरों रहि गयो अकेला ॥

दोहा—धरतीसे आकाशलैं, भैरोंकी जो देह ।
सर्वशून्य करि दशदिशा, घटन लगी तब येह ॥

प्रथमें पर्वत सम भई, बहुरि वृक्षके भाय ।
पुनि अंगुष्ठ पुनि रैनसम, पुनि सो गई लो पाय ॥
सर्व शून्य दशहू दिशा , पिसा सकल संसार ।
दृश्य कतहुँ कछु ना लहा, रहा अलख करतार ॥
ब्रह्माते ले जीव सब, जहँ लगि कीट पतंग ।
मुक्ति विदेह महा प्रलय, पावै वेद प्रसंग ॥
सब जिव मुक्ति विदेह लह,रचना जब पुनि होय ।
आतम सत्ता ब्रह्मने, जक्त फुरै पुनि सोय ॥

इति श्री वेदव धर्म ।

अथ न्यायधर्म वर्णन ।

दोहा-कर्त्ता पुरुष है देव जहँ, गुरु संन्यासी जान ।
न्याय शास्त्र सब मर्म कथ, धर्म ग्रंथ परमान ॥

अथ उत्पात्ति कथा वर्णन ।

सोरठा-न्याय शास्त्र परमान, नित्या नित्यको बादबहु ।
जग सबही प्रकटान; सूक्ष्म तत्त्वसे जानिये ॥
प्रलय बहुरि जब होय, सूक्षम परमाणू रहै ।
ताते थूल गहोय, दूनो तिगुनो चौगुण ॥
परमेश्वर करतार, आदि अंत नहिं तासुको ।
गहे आप औतार, देत सोई चहुँ वेदको ॥
नर्क स्वर्ग आनित , जीवको सो शुभ ज्ञान ।
सो प्रभु सबको हितकहे,तासुगुन आठ बिधि ॥

चौपाई ।

प्रथमहि ज्ञान प्रयत्न है दूजे । तीजे इच्छा संख्या चौथे ॥
पंचम पुनि परमान गनीजै । परथक्त्वा षष्टमें भनीजे ॥
पुनि संयोग विभाग कहाये । ये ईश्वर गुन आठ गनाये ॥

जेती वस्तु जगमें उपजाया । सोलह पदारथते सबकी काया ॥
तिनको भेदजो भलिविधि जाना । सोई पावै पद निर्वाना ॥
तीनों गुण ईश्वर के अंशा । तिनको ताही रूप प्रशंसा ॥

इति ।

अथ आदि संन्यासी दत्तात्रेयजीकी कथा—चौपाई ।

अत्री मुनि अनसूया नारी । नारि पुरुष कीनो तप भारी ॥
तीन देव तब हरषित भैऊ । ब्रह्मा विष्णु शम्भु जिहि कहेऊ ॥
ताकै भौन गौन तिहि कीने । आदर मान तिन्हैं ऋषि दीने ॥
अनसुइया पुनि कीन रसोई । तीनो देव जिवावत होई ॥
भे प्रसन्न तब तीनों देवा । मांगो बर पूरन तब सेवा ॥
तब अनसुइया बचन उचारे । तुम समान हो पुत्र हमारे ॥
दीन सोई बर माँग्यो जोई । पुनि मारग निज लीनो ओई ॥
अनसुइया जैसो वर पाया । तीन पुत्र भे ताके जाया ॥
तिहुते तीन अंश परकाशा । दत्त चन्द्रमा अरु दुर्वासा ॥
दत्त विष्णु औतार कहाये । ब्रह्मा अंशते चन्द्र उपाये ॥
शिव औतार कहे दुर्वासा । धर्म चला जग तिनकी आशा ॥
दत्तसे दीगांबर संन्यासी । अब धुता मारग जो भासी ॥
ब्रह्मा अंशते चन्द्र उपाये । सो निज भौन अकाश बनाये ॥
दुरवासा ते दंडी भैऊ । दंडी आदि ताहिको कहेऊ ॥
दत्तात्रेय के चौबिस चेले । धर्म कर्म संन्यास गहेले ॥

इति ।

अथ द्वितीय संन्यासी शंकराचार्यकी कथा—चौपाई ।

बरने भव्य व्यास वर बानी । जब कलि होय वेद मतहानी ॥
जैन बुध मत अधिक पसारा । वेद धर्म निंदहि निरधारा ॥
जैन बुद्ध विधि गह नर लोई । वेद धर्म मानै नाहिं कोई ॥

तिहि औसर शिव परम सनेही । वेद धर्म थापै कारि देही ॥
जैसो आगम व्यास बखाने । जैन बुद्ध मत महि अधिकाने ॥
वेद धर्म तब भयो मलीना । बिरला कोई आदर दीना ॥
विक्रमादितके समयमें कहेऊ । शकर शंकराचार्य भैऊ ॥
दाक्षिणदेश द्विज कुल औतारा । वेद धर्मको पालन हारा ॥
चहुँदिश जाय विजय दिग कीना । कथिनिजज्ञाननीतिजगलीना ॥
वेद धर्म मरयाद धराया । बादी सन्मुख तासु पराया ॥
स्मृती धर्मकीन परचारा । धर्म स्मार्त नामसो धारा ॥
जैन बोधको जीत्यौ सोई । राजा शंकरकी वश होई ॥
तिहि औसार भूपाल छुभाया । केते जैनी सरित डुबाया ॥
मंडन मिश्र ब्रह्मा औतारा । धर्म मिमांसा जग बिस्तारा ॥
शंकर जब तापर जय पाई । ताकी नारि ताहि समुहाई ॥
मंडन मिश्र गये जब हारी । कामशास्त्र कथ ताकी नारी ॥
शंकराचार्य बाल ब्रह्मचारी । काम शास्त्र विद्या नाहिं धारी ॥
तिहि औसर असकारण भयऊ । नृप अमरूक देह तजि गैऊ ॥
योगके बलते शंकराचार्य । नृपतनप्रवेश कियोनिजुकारय ॥
काम कला सीखे षट् मासा । नृपतनमें कर भोग विलासा ॥
काम शास्त्रको ग्रन्थ बनाई । सो अमरूकशतक कहलाई ॥
नृप तन तजि मंडन पहँआये । तासु नारि पर तब जय पाये ॥
मंडनमिश्र भे शंकर चेला । ताको धर्म गह्यौ तिहि बेला ॥

इति ।

अथ पूर्व आचार्यनके नाम–चौपाई ।

जहां तो आदि संप्रदा चाली । पीढी पीढी कथौ निराली ॥
प्रथम विष्णु दूजे शिव होई । पुनि तृतीय वसिष्ठ मुनि जोई ॥

पुनि संगत वशिष्ठ सुत भैऊ। ताके बहुरि पराशर कहेऊ ॥
छठयें व्यासदेव गुनखानी। सतयें मुनि सुखदेव बखानी ॥
अष्टम गोडाचार्य कहोई। पुनि गोविंद पुनि शंकर होई ॥

इति।

अथ शंकराचार्यजीके शिष्यनके नाम।

दोहा-प्रथमस्वरूपाचार्यकहा, पृथ्वीधराचारय टेर।
पद्माचारय तीसरे, तोटकाचारय फेर ॥

इति।

अथ दशनामसंन्यासीको वर्णन।

दोहा-स्वरूपाचार्यके शिष्य है, तीरथ आश्रम जान।
पद्माचारयके दोय पुनि, वन आरण्य बखान ॥
तोटकाचारयके पर्वतो, सागर गिरिशिष्यतीन।
पृथुधराचार्यके सरस्वती, भारति पुरी प्रवीन ॥

इति।

अथ शंकरी अथवास्मार्त्तसंप्रदायवर्णन-चौपाई।

अब शंकरी संप्रदा भाखों। चार भेद पुनि तामें राखों ॥
पूरब पश्चिम उत्तर दक्षिण। चारों दिशा चार मठकोगिन ॥

अथ पूर्वदिशा वार्त्ता।

गोबर्धन मठ भोगबार संप्रदा वन अरण्य पद गुरुषोत्तम ॥
क्षेत्र जगन्नाथ देवता पद्माचार्य चैतन्य ब्रह्मचारी तीर्थ महोदधि ॥
विमला देवी एेतरेय ब्राह्मण ऋगवेद कठ केन उपनिषद अकार ॥
मात्रा प्रज्ञान ब्रह्म महावाक्य।

इति।

अथ पश्चिमदिशा वार्त्ता।

पश्चिम दिशा शारदा मठ कीटबार संप्रदातीर्थ द्वारिका क्षेत्र

सिद्धेश्वर देवता भद्रकाली देवी स्वरूपार्य नन्दा ब्रह्मचारी तीर्थ गोमती सामवेद उपनिषद् ब्राह्मण केन तत्त्वमासि महावाक्य ओंकार मात्रा तीर्थ आश्रम द्वै पद।

इति।

अथ उत्तरदिशा वार्त्ता।

उत्तर दिशा जोशीमठ आनंदबार संप्रदा पद तीन गिर पर्वत सागर क्षेत्र बद्रिकाश्रम नारायण देवतापुण्यागिरी देवी त्रोटकाचार्ज नंदा ब्रह्मचारी तीर्थ अलकनंदा ब्राह्मण ब्रह्म अथर्वण वेद मांडूक्य उपनिषद् आ मात्रा अहं आत्मा ब्रह्म महावाक्य।

इति।

अथ दक्षिणदिशा वार्त्ता।

दक्षिण दिशा शृंगेरी मठ भूरीबार संप्रदा सरस्वती भारती पुरी पदानि क्षेत्र रामेश्वर आदि वाराह देवता कामाक्षी देवी शृंगीऋषि पृथ्वीधराचार्य तुंगभद्रा तीर्थ यजुर्वेद बृहदारण्य उपनिषद ब्राह्मण इच्छावश है अहं ब्रह्मास्मि महावाक्य अर्धमात्रा।

इति।

अथ संन्यासआचार वर्णन।

दोहा–सकल कर्मको छोडिके, जो लेवै संन्यास।
स्वर्ग आदिक सब सुख घने, रहै न कोई आस॥

चौपाई।

सुत बित नारि ईषणा तीनी। ताजि संन्यास धर्म जिन लीनी॥
यज्ञहु वेदपाठ नहिं भाषा। संग्रह सदा उपनिषद् राखा॥
करहि कमंडल हाथमें दंडा। फिरै स्वच्छंद पृथ्वी नौ खंडा॥
कछु मुख साजन यकठे धरहीं। काहूसे बिवाद नहिं करहीं॥

सदा शौच असनान जो कीना। संध्या बदले आत्म लौलीना॥
जब कबहूँ चित चंचल होई। पढै उपनिपद्को तब सोई॥
औषद सम भोजनको भोगा। चाहै नहिं कछु सुख संयोगा॥
शत्रु मित्र जगमें नहिं कोई। सदा सैन पृथ्वीपर होई॥
धरतीपर धरि भोजन करही। चार मास वर्षा न बिचरही॥
फिरै अकेले संग न कोई। भिक्षा भोजन गहै न ओई॥
सोलह ग्रास अहार प्रमाना। लेय हाथपर भिक्षा दाना॥
जाके घर भिक्षाको जाही। मुखसे तहँ कछु माँगै नाहीं॥
जेती बारमें गऊ दुहाई। गृही द्वार तबलों ठहराई॥
जहँ माँगन को कारण पावै। तहां प्रणवको शब्द उठावै॥
तीन बार कर शब्द उठाना। जाते गृही सुनै निज काना॥
तीन भौन कै पांच कि साता। येते घरलों भीखको जाता॥
जौ भिक्षा संयोग न लहई। तौ संन्यासी भूखा रहई॥
भिक्षा ले पुनि बनहि सिधारे। मता श्रेष्ठ संन्यास उचारे॥
पहिले वेदपाठ करिलीजे। तब पीछे संन्यास कहीजे॥
वेदकि बिधिते बोध न जबलौं। धर्म मर्म जानै कह तबलौं॥
ऐसी बिधिते भोजन करही। मोट देहि जिहि नजर न परही॥
सदा काल आतम लौलीना। सकल भर्मभय तजि तिनदीना॥
प्रथमें सब सुख भोग भरीजै। सब इंद्रिनको तृप्त करीजै॥
तब पीछे लीजै संन्यासा। रहै न काहू वस्तुकि आसा॥
शीतकालको गुदरी एका। राखे सो निज सहित बिवेका॥
यह मध्यम संन्यास प्रमाना। अब उत्तमको करों बखाना॥
नग्न दिगम्बर बाना होई। शीत उष्ण दुख सुख सह सोई॥
सहदुःखसुखदुःखसुखनहिंमाना। ऐसे निज मनमें अनुमाना॥
ज्ञान अग्निमें तन हम दाहा। अब याकी कछु रही न चाहा॥

यह विचार निज मनमें धारे । मृतक संन्यासीको नाहिं जारे ॥
जीतेही निज तन जिन दाही । मुये दग्ध पुनि उचित न वाही ॥

दोहा-जो मध्यम संन्यासते; उत्तम विधि गहि लेय ।
परम हँस ताको कहै, नग्न दिगंबर तेय ॥
काहूको परनामसो, करै न शीश झुकाय ।
सेवासे नाहिं कछु सुखी, निरादरतेनहिं दुख पाय ॥
मधूमास भोजन दोउ, तजि दीजै निरधार ।
धातु बस्तु मुद्रादि सब, नाहिं कर परसनहार ॥

चौपाई ।

भोजन पाकते राखै काजू । तजे इतर सुख स्वाद समाजू ॥
पक भोजनतजि और न लेही । गृही जो पाक भोग नहिं देही ॥
ताहि गृहीको पापी जाना । दत नहीं जा भोजन दाना ॥
संन्यासीको तप बड याही । कछु काहूसे मांग जो नाही ॥
दण्डी संन्यासी जो होई । दँड हाथमें धारे सोई ॥
दँड बाँसकी लकडी भाषा । सात गाठि पुनि तामें राखा ॥
सरस्वति आश्रम तीरथ तीनी । दँड ग्रहण अधिकारी कीनी ॥
ब्राह्मण बिना न दंडी होई । द्विज गृहते अहार गह सोई ॥
चारों मठक जो ब्रह्मचारी । सोऊ विप्र कुलते तनुधारी ॥
उत्तम मध्य कनिष्ठ संन्यासा । भिन्न २ करि वेद प्रकाशा ॥
शिव अरु विष्णु भावनहि दूजे । पंचम देव संन्यासी पूजे ॥
शिव नरसिंहगण गति रवि देवी । इन पांचों की सूरत देवी ॥
सिंहासन धरि पूजा करही । इष्ट आपनो बीचमें धरही ॥
अधिक नेम जिहि देवसे लावै । बीच सिंहासन तिहि बैठावै ॥

चौपाई ।

शिव शक्तीको धर्म जो धरही । चन्द्राकारातिलकालिलारमेंकरही ॥

योगी संन्यासी ब्रह्मचारी । भगवाँ भेष तिलक सो धारी ॥

अथ मीमांसाधर्म वर्णन ।

दोहा–देव अलख करतार जहँ, गुरु दरवेप कहाय ।
शास्त्र मीमांसा धर्म कह, कर्मफलनजिव पाय ॥

चौपाई ।

व्यासशिष्यजैमिनिऋषिराया । धर्म मिमांसा सो ठहराया ॥
ताके शिष्य न करी सहाई । धर्म मीमांसा जग फैलाई ॥
शिष्यनको अस नाम उचारी । भट्ट कुमार अरु मिश्र मुरारी ॥
बहुरि प्रभाकर कुरकहि टेरे । भे प्रसिद्ध जगमाह बडेरे ॥
जैमिनि शिष्य बुद्धिगुणधारा । भली भांति निजु धर्म प्रचारा ॥
धर्म मिमांसा जो कोइ गहई । ताको नाम मिमांसक अहई ॥
ऐसो धर्म सो कौन उचारा । ईश्वर नाहिं जग सिरजनहारा ॥
जो कुछदुःख सुख जगमें होई । जीव कर्मको कारण सोई ॥
जैसो कर्म करे जो कोई । तैसो उदय ताहि को होई ॥
ईश्वर नहि कछु करै करावै । नर स्वच्छंद जस कर तस पावै ॥
सृष्टिअनादिनिधन करि जानो । सदा स्वभाविक ऐसे हि मानो ॥
परमाणुनते जग उतपाता । ज्ञान कर्म दोउ मुक्तिको दाता ॥
वेदांती जस करे बखाना । तीन वेद ईश्वर गुन माना ॥
मीमांसक नाहिं माने सोई । तीन देव मानुष तन होई ॥
कर्म सुकर्म करे जो कोइ नर । होय सो ब्रह्मा विष्णु महेश्वर ॥
कर्मते जिव सब पद पावै । कर्महि ऊँच नीच गति जावै ॥
जेतो देखो कर्म पसारा । कर्मको खेल खिला जग सारा ॥
ब्रह्मन कर्म कराहि बिधि नाना । देव अराधन मुख व्रत दाना ॥
होम यज्ञ तिनके बहुतेरे । साधन करि करि देवन टेरे ॥

इति मीमांसाधर्म ।

अथ शिवधर्म वर्णन ।

दोहा–देव रुद्र योगी गुरू, योग मुक्ति चित धार ।
पातांजल यह शास्त्रहै, कथै धर्मव्यौहार ॥

इति ।

अथ शेष अवतार कथा वणन–चौपाई ।

करे एक ऋषि संध्या तरपन । ताके अंजुल प्रकटै धरि तन ॥
अंजुलते कढि बाहर परेऊ । नाम तासु पातांजल धरेऊ ॥
पातांजल है शेष औतारा । सो जग मल शोधन हितकारा ॥
शास्त्र चिकित्सा कीन प्रकाशा । देह रोग मल ताते नाशा ॥
शब्द अशुद्ध उचारा मल हंता । पाणिनिकरनिकाभाष्य करंता ॥
तिमि विक्षिप्त अंतह मल शोधू । योग सूत्र करि जीव प्रबोधू ॥
प्रथमहि चित्तकि वृत्तिनिरोधन । कथे समाधि अरु ताको साधन ॥
वैराग आदिक विधि बिधाना । कथे तहां साधन विधि नाना ॥
तैसे चित्त विक्षिप्त जो साधी । नाहित कीनो योग समाधी ॥
यम नियमों आसन प्रतिहारा । प्राणा याम धारण धारा ॥
ध्यान समाधि आठ यह भाषी । द्वितिये पदमें सबसों राषी ॥
तृतिये पदमें योग विभूती । वरनो सकल जो सिद्ध प्रसूती ॥
बहुरि चतुर्थहि चरणके माही । मोक्ष योग फल बनैं ताही ॥

इति ।

अथ नव नाथके नाम ।

दोहा–गोरख नाथ मछंदरो, सुरतिनाथ मङ्गल नाथ ।
चरपट चम्बा प्राणनाथ , घच्यू गोपीनाथ ॥

इति ।

अथ गोरखनाथजीकी कथा चौपाई ।

नवो नाथ सिद्धौ चौरासी । गोरख श्रेष्ठ सर्व गुण राशी ॥

मुद्रा सकल ताहिने कीनो। ऐसो योग माहि चित दीनो ॥
दोहा-मुद्रा सन्मुख खेचरी, भूचरि चाचरि जान।
शामभवी उन्मीलनी, पुनि अगोचरी मान ॥
आत्म भावनी बहुरि कह, पूर्ण बोधिन गाय।
सर्व साक्षिनी आदि दै, मुद्रातें जित लाय ॥

चौपाई।

ऐसो योगी भया समाधी। आठों भांति योग भलसाधी ॥
राजयोग हठ योग बखानो। त्राहठ अरु कुण्डली प्रमानो ॥
योग लंबिका तारक साधा। योग मर्मांसक सांख्यसमाधा ॥
आठों योग भली विधि कीना। ऐसो योगी परम प्रवीना ॥
वज्र कीन पुनि अपनी अङ्गा। करि चौरासी कल्प सुढङ्गा ॥
ऐसी वज्र शरीर बनाई। कबहूँ मरे न जरै न जाई ॥
सारी मांस देह गलि गिरेऊ। हाड गूद जमि एकैं भयऊ ॥
हाड गूद जब एकमें पागा। हीरा सम तनु चमकन लागा ॥
योगको रस भल गोरख लीना। सत्य कबीर प्रशंसा कीना ॥
केते गोरखनाथ के चेले। सिद्ध भये गहि ज्ञान दुहेले ॥
गोरख यती जक्त गुन गाये। योग युक्ति जगमें फैलाये ॥
शिवजी आदि अचारय येहा। योग समाधि आदि गुन गेहा ॥
पुनि नौनाथ सिद्ध चौरासी। योग धर्म जग माह प्रकासी ॥
शिव गोरख सम औरन योगी। ब्रह्मानन्द योग रस भोगी ॥

अथ चौरासी सिद्धनके नाम।

दोहा-भङ्गर सङ्गर संघरो, जङ्गर ऊरम होय।
दूरम कनी फाहनीफा, लहु रूपा सङ्ग रोय ॥
लङ्गर हनी रतन कह, पूरन बिवालक बर्न।
जलका खिंघडसुरतिसिंघ, निरतिसिधकेवलकर्न ॥

समरथ असरन गौन गुल, चतुर बैन राय ऐन ।
केवल करन औघड परवत, ईश्वरभरथरी भूतबैन ॥
कनका शंसू अक्षर दैन, पलका निधि शिवराम ।
पपलका गिरधर सालस, कसक गैलस नाम ॥
मगनधार मुक्तीसरो, चलन नाचत सूरएन ।
गिरवर जोति लगन कहो, जोति मनसिध सैन ॥
विमलजोतिशीतल जलो, अघडधान्य पतिप्रान ।
तोल संयोग अकाल निर, बहुरि भोलसर जान ॥
रामकुमार बखानिये, विष्णुपति कृष्णकुमार ।
शंकर योग ब्रह्म योग है, मीरहुशेन बिचार ॥
मीर जंजलीक धारिजो, पुनि कालिन्दर नैन ।
फिर नालिन्दर नैन है, सरस्वती गुरुधन सैन ॥
गुफाबासी कल नाशै, कलके संगी होय ।
यक रंगी केवल क्रमी, पुनि क्रम नासी जोय ॥
कलक विनाशी मूल मंत्री, योग तंत्री परमान ।
जंग गहिर दीपक रंगी, आपो रूपी जान ॥
फिर अकलेस प्रतापी, बीरम योगी नाम ।
खल समोगल भोगी कहो, इन्द्रयोगी गुण ग्राम ॥
पुनि केदार योगी गनो, कीन धर्मकी वृद्ध ।
मुनि विचित्र रहमी योगी, ये चौरासी सिद्ध ॥

अथ षट् यतियोंके नाम ।

दोहा—गोरख नाथो दत्तजी, पुनि लक्ष्मण हनुमन्त ।
भैरों भीषम जानिय, ये षट् यती वदन्त ॥

इति ।

अथ बारह पंथ वर्णन।

दोहा-आइ कुनकाई प्रथम, तुसलाई कपिलान।
तृतीये सतनाथपंथहै, चौथधर्म नाथ जान॥
वैराग्य नाथके भरथरी, षष्ठम गङ्गा नाथ॥
रामचन्द्र सतम कहै, अष्टमलक्ष्मण नाथ॥
फिर नटेश्वरी नवम है, पिंगल दशम कहाय।
पुनि धजपंथ इग्यारहे, बारहे कानी फाय॥

इति।

अथ अष्टांगयोगवर्णन।

दोहा-जमनियमोआसनकहो, प्राणायाम अगाध।
प्रत्याहारो ध्यान कह, पुनि धारणसमाध॥

अथ यमकी दश शाखा वर्णन।

दोहा-युक्ति सहितसबकर्मकर, ताको यमबतलाय।
जातेसाधनसुगमहो, सकल कलुषताजाय॥

चौपाई।

प्रथम अहिंसा जीव बताई। नर पशु आदि एक समताई॥
मनसा बाचा कर्म या तीनो। काहूको कछु दुःख नहिं दीनो॥
द्वितीय बोलै साची बानी। मिथ्यावाक्यते धर्मकी हानी॥
तृतिये पर धनको मति हरना। चौथे परतिय संग न करना॥
पंचम दाया हृदय महाई। दुखी दरिद्री करो सहाई॥
छठये अर्चा ताहि बखानी। बुधिते धर्म कीजिये प्रानी॥
अहंकार मद मान न धरीये। औरहि कबहु तुच्छमति करिये॥
सतम क्षमा ताहि को जाना। लाभालाभ न सुखदुःख माना॥
अष्टम धौत धर्म भल साजी। जो कछु लाभ ताहिमें राजी॥
नवमे अल्प अहार करीजै। दशमें शोच भली विधि कीजै॥

इति।

अथ नियमकी दश शाखा वर्णन–चौपाई ।

प्रथमे तप द्वितिये संतोख्या । तृतिये कोकह नाम असंख्या ॥
श्रुति ईश्वर हिय निश्चय जाना । चौथे धनते दीजे दाना ॥
पंचम करता पुरुषको पूजा । ताहि छोडि ध्यावो मतिदूजा ॥
पुनि सिद्धांत श्रवण है छठये । विद्वत जनकी संगत गठये ॥
श्रुति पुरान विद्या आध्ययना । सब शुभकर्मनमें चित देना ॥
सतम औ इन्द्री धिक्कारे । जब अछु अनुचित कर्म निहारे ॥
अष्टम सत्य जाहिको कहते । भले कर्मकी इच्छा कहते ॥
नवमे जब हरि चर्चा कहिये । इंद्रिन सहित चित्तको धरिये ॥
दशमें होम अर्थ अस कहिये । तन मन धन इन्द्री जो गहिये ॥
प्रभुकी हेतु सकल सुख त्यागे । ज्ञान कृशानु विषय बन दागे ॥

इति ।

अथ चौदह आसन वर्णन–चौपाई ।

पद्मो वीरभद्र सूं सगकरी । पुनि दंदास वृश्चिक सूँबासरी ॥
बकरी मोर सिंह जसको अस । समानअन्तरशुद्धपुनि बैठकजस ॥

अथ त्रिविधि प्राणायाम वर्णन ।

दोहा–प्रथम सहज मध्यम बहुरि, कठिन तीसरो आहि ।
प्राणायाम त्रिविधि कहो, साधे योगी जाहि ॥

चौपाई ।

प्रथम सहज कहिये द्वै शाखा । श्वासा परश्वासा मय भाषा ॥
पूरक कुम्भक रेचक माही । तरहु जान नाकाम है ताही ॥
द्वितीये पूरक इडाहै नारी । बाम नाक नथुन थित धारी ॥
बाहरकी वायू लेजाई । भरे इडा नाडीमें लाई ॥
कुम्भकको अस कारय कथना । बंध करे दोउ नाकके नथुना ॥
थित प्रयंत रोके रह पौना । रेचक कर्म कहौ अब तौना ॥

शनः २ पुनि पौन निकारे । पिंगला रग मारगको धारे ॥
बाहर पौन करो सो जबलों । नथुना नाम बंद रख तबलों ॥
तृतिये तहँ करम आरंभन । बाहर मात्रालों कर थंभन ॥
मात्रा ताहि कालको नाऊ । नाम उचार शुद्ध करि पाऊ ॥
नहिं विलम्ब नहिं शीघ्र विवेका । शब्द शुद्ध सो मात्रा एका ॥
चौथे जत्र यह युक्ति संभाला । राखे थित तामें कछु काला ॥
फिरद्विगुणा फिर तिगुनाकरिये । तिगुणतेअधिकमेंजब चितधरिये॥
एकबावर ऐसी विधि ठाना । कुंभकमें यह युक्ति प्रमाना ॥
इडाको पलटि पिंगला करना । पुनि पिंगला इडाकरि धरना ॥
पंचम ऐसी युक्ति विलोको । वायूको निज चालते रोको ॥
छठे जो पूरक रेचक भासा । आपते हो श्वासा पर श्वासा ॥
इक्कीस सहस अरु षट् सठथापू । चलै श्वास सो अजपा जापू ॥
तापर ध्यान करै जो कोऊ । ताको जाप रैन दिन होऊ ॥
सप्तम वृद्ध होय वय ताही । वय प्रमान श्वासाते आही ॥
द्वितिये मध्यम यहिविधि भाला । प्रथम प्राण वायू कर चाला ॥
बारह अंगुल बाहर आवै । पुनि अपान वायू ले जावै ॥
प्राण कि ठौर अपान ले जाई । पूरकमें यह युक्ति कराई ॥
द्वितिये कुम्भकमें यह डौरा । प्राण अपान करो इक ठौरा ॥
लेकर बंद करो यहि उक्ती । बरतै अंत रेचक द्वै युक्ती ॥
पहिले सदाके ढंग न रहई । फेर इडा वायू जो कहई ॥
जोर कियेते बाहर आई । पहुँच न बाहर अंगुल ताई ॥
तृतिये अष्ट कर्म कहि दीनी । पूरक तीन अरु कुम्भक तीनी ॥
दो रेचक भे आठो कर्मा । अब चौथेको भाखो मर्मा ॥
खेंचन थंभन त्यागन प्राना । पूरक गह रेचक नहिं ठाना ॥

पुनि ऊपरको पौन चढाई। द्वितिये भेदन करे उपाई ॥
जो अधार चक्करके ऊपर। स्वाधिष्ठान चक्र है दूसर ॥
लिंग भूमिका पर सों अहई। षट्दल कमल तासुको कहई ॥
पौनके बल गुदाचक्र बँधाई। स्वाधिष्ठान चक्रपर जाई ॥
स्वाधिष्ठानके भेदन काजा। द्वादश अंगुलको गज साजा ॥
सो गज लिंगमें देत चलाई। लिंगद्वार तिहि शुद्ध कराई ॥
यह गज करत क्रिया कहँ लावै। बहुरि लिंगते दूध पिलावै ॥
लिंगते सहतको खैंचै जबहीं। गजकी क्रिया पूर्ण हो तबहीं ॥
पौन खैंच पुनि लिंगके द्वारा। स्वाधिष्ठान बेधि चल पारा ॥
बहुरि अपान समान मिलाई। धोती क्रियामें तब मन लाई ॥
मणि पूरक चक्कर जो कहई। नाभी द्वारेमें सो अहई ॥
दश दल कमल तासु परमाना। ताके भेदनको मन ठाना ॥
दो अंगुल पट चौडा लीजै। अरु नौ हाथको लामा लीजै ॥
लीलै ताहि वस्त्रको सारा। बहुरि काढि तिहि मैलनिकारा॥
तीन बार ऐसी विधि सारा। बहुरि काढि तिहि मैलनिकारा॥
तीन बार ऐसी विधि कीजै। धोती क्रिया सो पूर्ण कहीजै ॥
नाभिते बहुरि पौन उलटाई। मणि पूरक चक्कर भेदाई ॥
फेरि अपान प्रान जो दोई। मेले प्रान माह तब सोई ॥
अनहद चक्र भेद तब जाई। हृदय स्थान माह जो पाई ॥
बारह पखुरी ताकी होई। हृदये मध्य कमल सो जोई ॥
ताकी सिद्ध हेत जो दीशा। कुंजर क्रिया करे योगीशा ॥
तीन बार भल पानी पीजै। पुनि पुनि सो उलटीकर दीजै ॥
सवा हाथकी दातन लेना। भीतर नाड चलायसो दीना ॥
बार बार पानीको पीना। दातन डारि छोड पुनिदीना ॥
ताकी सिद्धि पूर्ण जब लहिये। कुंजर क्रिया नामसो कहिये ॥

बहुरि पौनको लेहु उठाई। अनहद चक्र भेदिके जाई॥
प्रान अपान समाना तीनों। कण्ठमे तिनहि मेलि तब दीनो॥
चक्र विशुद्ध कण्ठके माही। षोडश दलहै कमल तहाही॥
योग लंबिका ताहित करना। दूध अधार ते काया धरना॥
सूक्ष्म बोलते कारय कीजै। पुनि तब ऐसी जुक्ति गहीजै॥
जीभके हेठकी नस जो सगरो। मस्का सेंधो लोन से रगरो॥
जीभदुहनपुनि प्रातहि काला। या बिधि रसनाकरो विशाला॥
ऐसी अपनी जीभ बढावै। ऊर्द्ध द्वारमें ताहि लगावै॥
जरमें अमृत चूवै जोई। ताको पान करे तब सोई॥
पीअत अमृत जागी देहा। योग लंबिका सिद्धभो येहा॥
बहुरि विसुद्ध चक्रको भाना। आगेको तब करे पयाना॥
अग्नि चक्र है त्रिकुटी थाना। द्वै दल कमल तासु परमाना॥
ताहि तनेती क्रिया कराई। बत्ती निज नासिका चलाई॥
नाक शुद्ध करि बत्ती कीता। मूर्द्धा शुद्ध भो ज्ञान गहीता॥
पुनि उद्यान महा सुख पावै। बहुरि कण्ठते पौन उठावै॥
चक्र विशुद्ध भेद जब लावै। अग्नि चक्रमें वायू लावै॥
तिहि औसर जिह्वा लेजाई। ऊरध द्वारे माह लगाई॥
बन्द करे तब ऊरध द्वारा। अग्नी चक्र भेदि हो पारा॥
चलि ब्रह्मांड श्वास लय होई। कुंभक कारिके तनु शिथलोई॥
काम अरु क्रोध लोभ मोहानी। तब इन सबकी सेन परानी॥
कर ब्रह्मांडमें योगी वासा। जबहिं चढायो गगनमें श्वासा॥
जहँ नहिं द्यौस नहीं जहँ राती। नहि सूरज शशि उडुगणपाती॥
तहँ सुषुमना बेधि ब्रह्मांडा। गडा जाय योगीके झण्डा॥
जब ब्रह्मांडमें माह रम जाई। सङ्गी साथी सकल पराई॥
सङ्गी साथी जब रहि गयऊ। निर्विकल्प योगी तब भयऊ॥

अथ दोयप्रकारकी समाधिवर्णन–चौपाई ।

दोय प्रकार समाधि कहीजै । सविकल्पो निर्विकल्प गनीजै ॥
जो सविकल्प समाधि कहावै । ज्ञाता ज्ञान ज्ञेययुत ध्यावै ॥
त्रिपुटी भान सहित जब सोई । ब्रह्म बीचि वृत्ती लय होई ॥
सो सविकल्प समाधि कहावे । निर्विकल्पको अब कहिगावे ॥
त्रिपुटी भानु रहित वृत्ती जब । ब्रह्मानन्द हो निर्विकल्प तब ॥
जो सब कल्पको साधन जाने । निर्विकल्प फल तासु बखाने ॥
निर्विकल्प सूखो पति दोई । यतनो भेद दोहूमें होई ॥
निर्विकल्प में ब्रह्मा नन्दा । सुषुपतिमें अज्ञान को फंदा ॥
निर्विकल्पमें चार हैं बाधक । तिहि सचेत रह चातुर साधक ॥
प्रथमे लय विक्षेप बहोरी । पुनिकर अरशा स्वाद कहोरी ॥
आलस निद्रा जब सरसाना । वृत्ती होय सुषुप्ति समाना ॥
ब्रह्मानन्द भोग नहिं भोगी । सजग होहि तिहि औसर योगी ॥
आलस निद्रा दूर हटाई । फेरि वृत्ति निज लेहि जगाई ॥
द्वितिये पुनि विक्षेप बताई । वृत्ती जबै बाहिर है जाई ॥
कछु पदार्थको कारण जोई । अन्तर वृत्ति बहिर्मुख होई ॥
हो सचेत योगी तिहि काला । वृत्ती बहिरंतर मुख वाला ॥
तृतिये राग द्वेष जो होई । नाम कषाय कहां लै सोई ॥
राग द्वेष विधि कहो बखानी । यक बाहर यक अन्तर जानी ॥
बाहर धन दारादिक शोचा । अन्तरकी चिंता मन पोचा ॥
भूत भव्य चिंता मन आई । योगीकी समाधि बिनशाई ॥
चौथे रसास्वाद अब भाषो । ऐसे अर्थ तासुको राखो ॥
ब्रह्मानन्दते सुख अनुभव कर । दुख निवृत्तसे हृदये सुख भर ॥
यहू योगमें बिघ्न बताई । जबलों नहिं निज प्रीतम पाई ॥
चितकी पंच भूमिका आही । प्रथमै ज्ञेय नाम कह ताही ॥

द्वितिये मूढता नाश कहावै। तृतिये को विक्षेप बतावै ॥
चौथै पुनि एकाग्रता होई। पंचम भूमि निरोधक होई ॥
अर्थ तासु यहि भाँति जाचना। लोक बासना देव बासना ॥
शास्त्र बासना आदिक जोई। क्षेप नाम ताहीको होई ॥
निद्रा आसना तुम गुन घेरे। नाम मूढता ताको टेरे ॥
बाहर सुखवृत्ती जब होई। नाम विक्षेप कहावै सोई ॥
चित्त एकाग्र होय जेहि बारा। एकाग्रता नाम सो धारा ॥
ब्रह्माकार जबै ह्वै जाई। ताको नाम निरोध बताई ॥
जो योगी निज बिघ्न हटावै। ब्रह्मानंद सोई सुख पावै ॥
योगीको सब सुख सरसावै। ज्ञान बिना पै मुक्ति न पावै ॥
केवल ज्ञान उगै जिहि वारा। तब योगी ह्वो ब्रह्माकारा ॥
अष्ट सिद्धि नौ निद्धि विराजा। योगी संग सकल सुख साजा ॥

इति समाधि।

अथ ॐ कार जापको वर्णन—चौपाई।

ॐ कार जप सबको सारा। जिहि योगी पर धाम पधारा ॥
ऋद्धि सिद्धि गुण ज्ञान कहाये। ॐकार भव पार कराये ॥
जो कोई शुद्धजाप मन लावै। सकल पदारथ ताते पावै ॥
जाप अशुद्ध करे जो कोई। वृथा परिश्रम ताको होई ॥
पुत्र जनै जिहि औसर बाला। होय टेढ शिशु जो तिहिं काला ॥
जौं बालक सीधे नहिं आवै। तौनिज मात प्राण बिनशावै ॥
ॐकार जप ऐसो जानी। शुद्ध जाप बिन जिवकी हानी ॥
जब इंद्रिनको वशकरि लीजै। ताको कल्प समाधि कहीजै ॥
मन इंद्रिनको भूत कहावै। मनको बहुरि अकाश बतावै ॥
पुनि आकाश तीन विधिभाषा। चिदाकाश प्रथमै कहि राखा ॥
मनको चिदाकाश कहि गाये। नभ समान चहुँ दिशरह छाये ॥

जैसो नभको अन्त न कोई । तैसे मन अनंत है सोई ॥
द्वितिये मनाकाश कहि टेरे । ब्रह्माकाश नाम तिहि केरे ॥
ब्रह्माकाश कहै इमि तेही । ब्रह्म सो व्यापकहै मन येही ॥
सर्वमयी जिमि ब्रह्म विराजै । तैसे यह मन सबमें गाजै ॥
तृतिये भूताकाश बखाना । मन अरु ब्रह्मते करे मिलाना ॥
मनाकाश अरु भूताकाशा । ताते ब्रह्म होय परकाशा ॥
ब्रह्म दोउते पार बहूता । थूल देह बासनाके सूता ॥
त्रिविध वासना कहो बखानी । सत रज तम गुन ताको जानी ॥
जब रजगुन तम गुण चलिजाई । सूक्ष्म देह जीव तब पाई ॥

दोहा—यहि विधि सूक्ष्मता लहै, तन थूलता नशाय ।
जिहि औसर यहि गुन गहै, जीवन मुक्त कहाय ॥
दोय प्रकार समाधि कह, यक चेतन जड एक ।
योगी भवसागर तरे, निज बल बुद्धि विवेक ॥

इति ।

अथ अथर्वण वेद योगतत्त्व उपनिषद—चौपाई ।

सबते श्रेष्ठ विष्णु कहलावै । सोऊ योग समाधि लगावै ॥
सदा योग मारग आचरही । परम पुरुष ध्यान सो करही ॥
सो प्रकाश सब घट घट माहीं । तिहि चितवनी करें नरनाहीं ॥
भूलिविषय रति प्रभुहि बिसारी । यही अचंभौ मो मन भारी ॥
वस्तु अनित्य जासु मन भावै । महा मूढ सो जीव कहावै ॥
पुत्र हो दूध जाहि थन पीये । तरुण सुखी तिहि करगहिलीये ॥
यद्यपि जान भिन्न तिय देही । तद्यपि जान पयोधर येही ॥
जाहि द्वारते बाहर आवत । ऐसो दुख सदा नर पावत ॥
तामें पुनि पैठत सुख माना । कैसे भूले नर बिन ज्ञाना ॥
जाहि रूपको जननी कहते । सोई निज दारा करि गहते ॥

कबहुँ जिहि निजपिता पुकारी । साई रूप निज भरता भारी ॥
निजु मन माइ बिचारके देखो । पिता सोइ प्रकटा सुद लेखो ॥
रहटा कूप डोलची जैसे । आवै जाय जक्त यह तैसे ॥
यक भरि आवै दूजा रीते । ऐसी भूल माह जग बीते ॥
मुक्तिके मारगको नहिं ढूँढा । चर्खा माह परा जग मूँढा ॥
ओंशब्द हरि भजनके काजा । तामें अक्षर तीन विराजा ॥
तिहि अक्षर तिहुँ लोक बखानो । तीनों वेद त्रिदेव हि मानो ॥
अर्ध रेफ अनुनासिक होई । सबसे सार जानिये सोई ॥
तनमें प्राण परवानमें सोना । तिलमें तेल घृत दूधसे होना ॥
फूलमें यथा सुगन्ध समाई । तैसे सार ताहि बतलाई ॥
ॐ कारके अक्षर चारी । ताको कहिये अर्थ विचारी ॥
प्रथम अकार हि ब्रह्मा जानो । द्वितियेओंकार विष्णुपहिचानो ॥
रुद्रहि जान मकार स्वरूपा । ना निर्वचनसो ज्योति स्वरूपा ॥
बहुरि अकार वेद ऋग अहई । यजुर्वेद ओंकारहि कहई ॥
कामवेद कह जान मकारो । अनिर्वचन नन्ना चित धारो ॥
तृतिये जाग्रत जान अकारा । स्वप्न अवस्था भाष ओंकारा ॥
फेरि मकार सुषुप्ती गाई । नन्ना रूप जान तुरियाई ॥
चौथे पुनि अकार मृत लोका । मध्य लोक ओकार बिलोका ॥
स्वर्गको लोक मकार प्रमाना । तिहूँते परे नकार बखाना ॥
पँचये मन कहँ जान अकारा । ओ चितना बुद्ध माहंकारा ॥
पुनि छठयें ब्रह्मचर्य अकारा । ओ गृहस्थको नाम पुकारा ॥
मम्मा वानप्रस्थ प्रकाशा । नन्ना जानि लेहु संन्यासा ॥
सतयें अकारहि रज गुन भनिये । ओ सतमाको तम गुन गनिये ॥
अठयें अकार ज्ञान थीरता । तीनि ओकार मकार वीरता ॥
नन्ना न्याय कियो परमाना । नवम अकार कर्म कारि माना ॥

पुनि कह ओ उपासना सारा । मम्मा ज्ञान नन्ना सब पारा ॥
ॐ कारको अर्थ अनंतो । वर्णन कौन सकै करि संतो ॥
प्रणव आदि सबहीको भाषा । ताते और अनेकन शाखा ॥
मन स्वरूप अस जो उरबासी । अधरकमल समताहि प्रकाशी ॥
कमल नाल ऊपरको राखा । हेठको ताके मुखको भाषा ॥
ताके बीच माह मन रहई । पावन होय प्रणव जब कहई ॥
प्रथम हि अक्षरके उच्चारे । मनकी उज्ज्वलता जिव धारे ॥
द्वितिये अक्षरते दिल खिलता । अनहद शब्द गगनसुनिमिलता ॥
चौथे अर्ध बिंदु बतलाई । ताते ज्योति माह मिलजाई ॥
जब यह मन मलते बिलगाना । होय शुद्ध बिल्लौर समाना ॥
सूरते अधिक नूर जग मगई । परम प्रकाशमान तब लगई ॥

दोहा-क्रोध आलस निद्रा बहुत, बहु भोजन बहु जाग ॥
फाका करनो कर्म षट्, योगी दीजै त्याग ॥

चौपाई ।

यहि बिधि तीन मासजब साधे । अंतर परे न मनको बांधे ॥
तृतिये मास हो सह गति वाकी । देव दृष्टि सब आवै ताकी ॥
मास पांचमें यह गुन पावै । देव स्वरूप आप है जावै ॥
छठयें मास मिले हरि माही । प्रणव साधना सदा कराही ॥

अथ अथर्वण वेद योगसुखा उपनिषद-चौपाई ।

प्रथम हि पद्म आसनको मारे । बैठि एकांत ध्यानसो धारे ॥
द्वितिये नासा आगे देखे । टरै न दृष्टि ध्यान करि लेखे ॥
तृतिये दोउ कर पग कह जोरी । चौथे मनको लेहु बटोरी ॥
बिषय बिकल्पअरु संशय कोई । मनके निकट न आवै सोई ॥
पंचम पावन प्रणव को ध्याई । छठयें नामी सुरति लगाई ॥
सप्तम निज मन माह बिचारी । अशुचि बस्तु मानुष तनधारी ॥

तीन देह तू भौन बनाये । तामें थम्भा चार लगाये ॥
यक बड तीन थंभ लघु साजे । पांच देवता नौ दरवाजे ॥
पृष्ठ आस्थि बड थम्भ पुकारी । ताके निकट सुषुम्ना नारी ॥
लघु थम्भा जो तीन कहाये । सो सत रजतम गुन बतलाये ॥
पंच प्रणव सुर पांच उचारी । तेहि देह जिव गेह सवारी ॥
मनके रंध्र माह चित धारो । सूर्य मंडला कार निहारो ॥
तेहि रविमंडल प्रणव निरेखो । प्रणवमें द्वीप शिखा पुनि देखो ॥
दीप शिखा ऊरध दिश जानी । ज्योति स्वरूप ताहि अनुमानी ॥
ताहीमें निज ध्यान दृढाई । इमि योगी तन तजि तहँ जाई ॥
रवि मण्डल भनि सूक्ष्मनि नारी । गेह पन्थ ब्रह्म रंध्रको फारी ॥
तन तजिके योगी इमि जाही । परम पुरुषके रूप समाही ॥
ऐसी युक्ति गहे सुख पागी । आलस निद्रा वश दुर्भागी ॥
छन छन ऐसी युक्तिको गहिये । यही उपनिषद देखत रहिये ॥
जो यह युक्ति न हरदम होई । निश्चय तीन काल कर सोई ॥
भोर मध्य दिन सायंकाला । नित प्रति गहिलीजै यह चाला ॥

इति ।

अथ अष्टसिद्धियोंके नाम—चौपाई ।

प्रथमै अणिमा नाम कहावे । तहि लहे लघु देह बनावे ॥
द्वितिये महिमा कहो बखानी । निज तनकी दीरघता ठानी ॥
तृतिये लघिमा जो लहिपावै । सो अपनो तन हरू बनावै ॥
चौथे गरिमा नाम भनीजै । जो लहि निज तन भारी कीजै ॥
पंचम प्राप्ती नाम बतावो । सो लहि जहँ चाहो चलिजावो ॥
पुनि प्रकामिका छठयें अहई । जाते निज मनोर्थ सब लहई ॥
सतयें ईशता नामक होई । जापर चहै आप बड होई ॥

अठयें वशियौ नाम कहाई । जेहि चाहे तिहि देत भ्रमाई ॥
आठों सिद्धिमें भेद अनेका । जानहिं योगी सहित विवेका ॥

इति ।

अथ नवनिधियोंके नाम ।

दोहा–महापद्म अरु पद्म कह, कच्छप मकर मुकुंद ।
खर्ब शंख अरु नील कह, नवम कहावे कुंद ॥

इति ।

अथ योगीका भेष वर्णन–चौपाई ।

झोली सिंगी मुद्रा काना । भगवाँ वस्त्र विभूतहै बाना ॥
योग युक्ति साधन भल राखा । अजपा जाप जपे गति भाषा ॥

क० भा० प्रकाशसे ।

इति श्री आगमनिगमबोध समाप्त ।

सुमिरन बोध प्रारम्भः ।
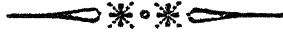
भारतपथिक कबीरपंथी-

स्वामी श्रीयुगलानन्दद्वारा संग्रहीत ।

उसीको,

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदासने

अपने "लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" छापेखानेमें

छापकर प्रसिद्ध किया ।

संवत् १९८३, शके १८४८.

कल्याण-मुंबई.

सत्यसुकृत, आदिअदली, अजर, अचिन्त, पुरुष मुनीन्द्र, करुणामय, कबीर, सुरति, योग, सन्तान, धनी धर्मदास, चुरामणिनाम, सुदर्शन, नाम, कुलपति नाम, प्रमोध गुरुवालापीर, केवल नाम, अमोल नाम, सुरतिसनेही नाम, हक्क नाम, पाकनाम, प्रगट नाम, धीरज नाम, उग्र, नाम, दया नाम, की दया वंश-ब्यालीसकी दया।

अथ श्रीबोधसागरे

चतुस्त्रिंशतिस्तरङ्गः।

सुमिरन बोध छोटा।

प्रथम बोध।

(नित्य कर्म षट्कर्म विधि वर्णन) सुमिरन आदि गायत्री।

आदिगायत्री सुमिरण सार। सुमिरत हंस उतारे पार।

कोटि अठासी घाट हैं, यम बैठे तहँ रोक।
आदि गायत्री सुमिरिके, हंसा होय निशोक॥

घाटी नाकहि आगे तब जाई । सकल दूत रहे पछताई ॥
आगे मकरतार है डोरी । जहँ यम रहे मुख मोरी ॥

ओहं सोहं नामके, आगे करै पयान ।
अजर लोक बासा करे, जगमग दीप स्थान ॥
सुखसागर स्नान करी, होय हंसका रूप ।
जाय पुरुष दर्शन करै, जिस दिन परम आनन्द ॥
आदि गायत्री सुमिरिके, आवा गमन नसाय ।
सत्य लोक बासा करे, कहैं कबीर समझाय ॥

सुमिरन प्रभात गायत्री ।

आदिगायत्री अम्मर अस्थान । सोहंतत्त्व ले हंसालोक समान ॥
सत गायत्री अजपा जाप । कहै कबीर अमर घर बास ॥
सत्य है अमर सत्य है शून्य । सत्याहिमें कछु पाप न पुण्य ॥
कहै कबीर सुनो धर्मदास । यह गायत्री करो प्रकाश ॥

सुमिरण मध्याह्न गायत्री ।

आचिंत पुरुष हिरम्ब छाया । नाद बिन्द होय कर्ता आया ॥
यमसो जीता लोक पठाया । सुरति स्नेही हंस कहाया ॥

अचिन्त पुरुषकी गायत्री; दीन्ह कबीर बताय ।
निशिदिनसुमिरणजो करै, करम भरम मिटि जाय ॥

सुमिरण सन्ध्या गायत्री ।

बारह जोजन कोट, यन्त्र चहुँ पलमें छूटे ।
यहि विधि संध्या जपे, भर्मको आगम टूटे ॥
गायत्री ब्रह्मा जपे, जपे देव महेश ।
गायत्री गोविन्द पढे, सतगुरुके उपदेश ॥
ताको काल न खाय, जो यह संज्ञा चीन्हे ।
घटमें रही अलोप, काढि हम बाहरकीन्हे ॥

इन पर लै सिद्धौ भनी, देव पूजा गो शरीर ।
ब्रह्मा बाचा पुत्र दासा चपलान उग्र हंसनी शरीर ॥
शब्द पाय हिरदय धरैं, अस कथिकहैं कबीर ॥

सुमिरनमध्याह्न गायत्री ।

कहैं कबीर अजपा घटे सूझे। निगम नाम मोहि जो बूझे ॥
तन मन धनहिं निछावर करै। सार नाम गहि भौ जल तरै ॥
अष्ट सिद्धि नौनिद्धि मांगेसोदेऊँ। खुरासान खुरवेदमुख गंगाप्रवाहु ॥
रिप सिप मार गैर तराई। नौगुन घरजा सुरति प्रकटहोवसूझै
खोजो सुरति कमलके तीर। सतगुरु मिलगये सत्यकबीर ॥

सुमिरन सोनेका ।

संयम नाम सदा चितलाई। जासों काल दगा मिटि जाई ॥
काल दगा धरि आवे भेखा। जीव चूके धरतीकी रेखा ॥
सोवत समय जो मारे तारी। सत सुकृत करै रखवारी ॥
कहै कबीर बंकेज बुझाई। सोवत जीव नष्ट नहिं जाई ॥
अमर पिछौरी ओढिकै, सुख मण्डलमें सोय ।
कबीर ऐसे गुरु पाइके, कहा मुक्तिको रोय ॥
उत्तर करो सिराना, पश्चिम कीजै पीठ ।
कहैं कबीर धर्म्मदाससों, यमकी लगैनदीठ ॥

सुमिरनप्रातः उठनेका ।

जो स्वर चले प्रात संचारी। सोय पग धरि उठो संभारी ॥
दिवस समस्त हर्ष सो बीते। जहां जाय सो कारय जीते ॥
पुहुमीमें पग दीजिये, सुनो सन्त मति धीर ।
कर जोरे बिन्ती करो, दर्शन देहु कबीर ॥

सुमिरन दिशा जानेका ।

अन्न सकल तन पोख, शब्द सुरति सो पेख ॥
सूक्ष्म लगन उतारो, काया निर्मलहोयहमार ॥

कहैं कबीर यही तत्सार । चौरासी सो जीव उबार ॥

सुमिरन मलद्वार धोनेका ।

सुरति संतोष सूमस जब भया उतार । बांयेकर परसै जलढार ॥
सतगुरु शब्द गहोमति धीर । कहै कबीर होय पाक शरीर ॥

सुमिरनजलपात्रका ।

धर्मदास मैं तुम्हैं बुझाऊँ । जल पात्रका भेद बताऊँ ॥
जल पात्रको गहिके, उत्तम करो बनाय ।
कहैं कबीर निर्मल भये, संशय भ्रम मिटिजाय ॥

सुमिरन तूंबा प्रछालनेका ।

तत्ततत्तका तूँबा, शब्दे लियो समोय ।
कहैं कबीर धर्मदाससों, तूँबा निरमल होय ॥

सुमिरन हाथ मटिआवनेका ।

माटी खाक माटी पाक । माटी म माटी गर्पाक ॥
कहैं कबीर हम शब्द सनेही । सत्त शब्दसों पाक होय देही ॥
मृत्तिका लेव हाथ लगाई । अजर नाम सुमिरो चितलाई ॥
मृत्तिकालीन्होंहाथमें, निर्मल भया शरीर ।
कर्म भ्रम सब मेटिके, सुमिरो सत्य कबीर ॥

सुमिरन दातौन तोरनको ।

धन्य वृक्ष जिन दातौन दीन्हा । साधु सतपर दाया कीन्हा ॥
दाया कीन्ह भया प्रकाश । रक्षा करें कबीर धर्म्मदास ॥

सुमिरन दातौन करनेका ।

सत्तकी दतौन संतोषकी झारी । सत्त नामले घसो विचारी ॥
किया दतौन भया प्रकाश । अजर नाम गहो विश्वास ॥
अमी नामते पहुँच आय । कहै कबीर सतलोक सिधाय ॥

सुमिरन दातौन फारनेका ।

फटी दतौन भया प्रकाश। अजर अमर कबीर धर्म्मदास ॥

सुमिरन मुख धोनेका ।

मुख परसे मुक्तायनि वासा । जिनके परसत लोक निवासा ॥
लें जल मुख माहि चढावे। अम्बुन नाम हिरदे लौलावे ॥
कहैं कबीर सुनो धर्मदास। सो हंसा सतलोक निवास ॥

सुमिरन अमरि उतारनेका ।

अमरी अमर लोक सो आई। तीन लोकमें निर्भय भई ॥
तन सोधो मन राखो धीर। अमरी उतारो खारी नीर ॥
कहैं कबीर अमर भई काया। निज शब्द अमीका आया ॥

सुमिरन जलमें पैठनेका ।

जो साहब दाया कर पाऊँ। कर बन्दी जल मांझ समाऊँ ॥
पान निहपान सतगुरु शब्द प्रमान ॥

सुमिरन स्नान करनेका ।

अमी सरोवर ज्ञान जल, हंसा पैठ नहाय ।
काया कंचन मन गमन, कर्म भर्म मिटि जाय ॥

पिंडे सो ब्रह्मंडे जान। मान सरोवर कर स्नान ॥
सोहं हंसा ताको जाप। कहै कबीर पुन्य नहिं पाप ॥
ऐसी विधि करे स्नान। सो हंसा सतलोक समान ॥

सुमिरन स्नान करके बन्दगीको ।

नहाय खोरके शीश नवाई। अलख पुरुषके दर्शन पाई ॥
अमी शब्दको कीजे जाप। कहैं कबीर अमरघर बास ॥

सुमिरन कोपीन पहिरनेका ।

पारा राखे गुरु हमारा ।
बारह बरष की कन्या आई। उलटा पारा रह्यो समाई ॥

ऊपर बन्दी छोर विराजे । पारा खसे तो सतगुरु लाजे ॥
सत्तकी कोपीन अजका धागा । गुरु प्रतापसो बन्धन लागा ॥
कहैं कबीर तजो अभिमान । पारा खसेतो सतगुरुकी आन ॥

सुमिरन जल भरनेका

जीव जन्तु सब दूर पराऊ, भरिहौं निर्मल नीर ।
हत्या पाप लागे नहीं, रक्षा करैं कबीर ॥

सुमिरन जल छाननेका ।

अमृत जल निर्मल कर छाना । सतगुरु साहबके मन माना ॥
कहैं कबीर भरम सब भागा । टूटयो जबै पुरानो धागा ॥

सुमिरन तिलक करनेका ।

तत्त्व तिलक तिहुँ लोकमें, सत्त नाम निज सार ।
जन कबीर मस्तक दिये, शोभा अगम अपार ॥
पार कोई विरले पावै । पार पावै सो संत कहावै ॥
योनी संकट बहुरि न आवै । कहैं कबीर सत लोक सिधावै ॥

सुमिरन दर्पण देखनेका ।

दर्पणमें मुख देखिये, कबहीं न होय चित्तभंग ।
गुरुको बचन संतकी सेवा, चढे सवाया रंग ॥

सुमिरन चरणामृत महाप्रसाद पानेका ।

चरणामृत महाप्रसाद जो लीन्हाँ। सत्य शब्दका सुमिरन कीन्हाँ ॥
अर्ध उर्ध मध्य धर ध्याना । कहैं कबीर सो संत सुजाना ॥

सुमिरन चरणामृत देनेका ।

हो साहेब मैं बिन्ती लाऊँ । कौन नामते पग पखराऊँ ॥
दहिने पग प्रथम ही जलनावे । बल हमार सो पग पखरावे ॥
शब्द सार निर्मोलिक सारा । पग पखराओ हंस हमारा ॥
यहि विधि पग पखराओं भाई । दगा धोख सब दूर पराई ॥

साखी-अजर नामको सुमिरन, चीन्हे हंस हमार।
कहैं कबीर धर्मदास सो, शीश न आवे भार॥

सुमिरन महाप्रसाद देनेका।

एक अन्नको आसन कीजै। पाँच तत्वको भोजन दीजै॥
जबे जीव मांगे प्रसाद। अजर नामको कीजे याद॥
एक रवा हाथमें लेवे। महाप्रसाद दासको देवे॥
महाप्रसाद एक धनीको, जाको सब बिस्तार।
मूरख लेख न पावै, कहैं कबीर बिचार॥

सुमिरन महाप्रसाद पानेका।

एक रवा हाथमें लीन्हा। उग्रनामका सुमिरन कीन्हा॥
महाप्रसाद ऐसी बिधि पावै। यमकीदसी निकट नहिं आवै॥
उग्र नाम हृदय लौलाई। ऐसी विधि प्रसाद जो पाई॥
साखी-कहैं कबीर धर्मदाससो, महाप्रसाद जो लेय।
काल दसी सब टूटे, यमहि चुनौटी देय॥

सुमिरन चरणामृत पानेका।

चरणामृत शिष्य जो लेई। अम्बुज नाम हृदय चितदेई॥
लागे नहीं कालकी छाहीं। चरणोदक जो होय सहाई॥
ऐसी बिधि चरणोदक लेई। यमहिं चुनौटी निशिदिन देई॥
ले चरणोदक माथ नवावे। तीन दण्डवत तब पहुँचावे॥
साखी-कहैं कबीर धर्मदाससो, यह शिष्यको व्यवहार॥
दगा धोख सब मेटो, हँस उतारो पार॥

सुमिरन जल पीनेका।

उत्तम शीतल निर्मल नीर। अमृत पिय तिरषा गई दूर॥
सत्यगुरु मिल गये सत्यकबीर। भागो काल विषमके तीर॥

सुमिरन घर बुहारनेका।

सुमति बुहारी कर गहिलीना। कचरा कुमति दूर कर दीना॥
बावन लाख दगा मिटि जाई। साहब कबीरकी फिरी दुहाई॥

सुमिरन घर पोतनेका।

हरियर गोबर निर्मल पानी। चौका पोते सुकृत ज्ञानी॥
सवा लाख चूक बकसाये। चौका पोत जेवनार चढाये॥
कहै कबीर सुनो धर्मदास। हँसा पहुँचे पुरुषके पास॥

सुमिरन चूल्हामें अग्नि बारनेका।

चूल्हा हमारे चौहटे, सब घर तपे रसोइ।
सत सुकृत भोजन करे, हमको छूत न होइ॥

सुमिरन रसोई बनानेका।

सत सुकृत कीन्हा जेवनारा। ताते करत न लागे बारा॥
सतघरी दो पहारे या सांझा। लक्ष्मी बैठी रसोई मांझा॥
सत्त पकवान लक्ष्मी करे। तीनलोक का उदर भरे॥
कहैं कबीर लक्ष्मी समुझाय। संत सुहेला बैठे आय॥

सुमिरन थारी परोसनेका।

चंदन चौका कंचन थारी। हीरालाल पदुमकी झारी॥
बहुत भांति जेवनार बनाये। प्रेमप्रीति सो पारस कराये॥
संत सुहेला भोजन पाई। सत्तसुकृत सतनाम गुसाई॥

सुमिरन प्रसाद अर्पणेका।

संत समाज धरती स्थूला। प्रसाद चढावें धर्म निर्मूला॥
ओढे साल क्षमाके दीन्हा। सोई शब्द जो पावे चीन्हा॥
नीर निरंतर अन्तर नेह। शब्द अगाध जो लागे देह॥
कहैं कबीर चित जित जनि डरो। नाम सुमिरि नल अर्पणकरो॥

सुमिरन अचवन करनेका ।

कारि प्रसाद जल अचवन कीन्हा । अचवन करिके खर्चा लीन्हा ॥
दूत भूत सब गये पराय । जब टेके सतगुरुके पाय ॥

सुमिरन पाकर बन्दगी करनेका ।

वारी तेरी बलगई, पलमें सौ सौ बार ।
सद्गुरु मोपर दाया करो, साहब कबीर सिरजनहार ॥

सुमिरन सुपारी मोरनेका ।

सेत सुपारी मोरके, अमी अंक लौलाय ।
कहैं कबीर धर्म्मदाससे, हंस लोकको जाय ॥

सुमिरन पान पानेका ।

गुरु कबीरने बीरा दीन्हाँ । हंस बचाय कालसो कीन्हाँ ॥
सत्य लोकमें बैठे जाई । सत्त सुकृत जहँ पाप रहाई ॥
कहैं कबीर जे हंस उबारे । जरा मरण भव कष्ट निवारे ॥

सुमिरन टोपी लगानेका ।

तरे धरती ऊपर अकाश । चांद सूर्य दोउ पाट ॥
तीतिस कोट आगे पार । सोई जानो सतगुरुकी हाट ॥
नौनाथ चौरासी सिद्धजीत औघट बाँघ ।
धर्मदासके मस्तकदीन्हा, कबीर विराजे साथ ॥
बादशाह एक खूँटका, अखंड द्वीपके भूत ।
दुवेश भूत ब्रह्माण्डके, सोई साधु गुरुरूप ॥

सुमिरन दीपक बारनेका ।

आदि अन्न एक ज्योति है, स्थिरस्थीर है नीर ॥
आवे सत्य कबीर के शब्दकी छुरी । यम जालिम की काटे गुरी॥
धर्मदास कबीरके.लागे लागे पाई । बावन लाख दगा मिटि जाई॥

सुमिरन आसन करनेका ।

सत्त पुरुषको सुमिरिके, आसन करे बनाय ।
तापर हंसा पोढई, कबीर धर्म्मदास सहाय ॥

सुमिरन कमर कसनेका ।

धर्मदास कसना कसे, नाम पान लियहाथ ।
सत्यकबीर पहुँचावहीं, सकलसन्त लिय साथ ॥

सुमिरन रस्ता चलनेका ।

शिरपर साहब राखिके, चलिये आज्ञा माँहि ।
आगेसाहेबकबीर हांकदेतहैं, तीनलोक डरनाहिं ॥
कागकागरे विकार कूकरामंजार । नाग नाहर दूत भूत बट पार ॥
सबको बांधि कबीर आन घाट ले डार ।
घाट बाट बन औघट मोहि खसमकी आस ॥
मते चले कबीरके कबहू न होय निवास ॥

सुमिरन सात शिकारीका ।

अमीनाम, उर्द्ध नाम, परिमल नाम, दयावन्त, बालदीप, सहज मूल, अग्रमुनि सत्तनाम, साहबके अमीनाम, पुष्प सुगंध कंठकी सिला निर्गम्य सुगंध योगजीत निहं गमित ।

इति श्री षट्कर्म विधि नित्यकर्म सुमिरन ।
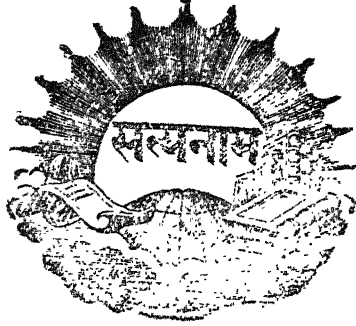
सत्यसुकृत, आहिअदली, अजर अचिन्त, पुरुष,
मुनीन्द्र, करुणामय, कबीर, सुरति योग संतायन,
धनी धर्मदास, चुरमाणिनाम, सुदर्शन नाम, कु-
लपति नाम, प्रमोधगुरुवालापीर, केवल नाम,
अमोल नाम, सुरतिसनेही नाम, हक्क नाम,
पाकनाम, प्रकट नाम, धीरज नाम, उग्र
नाम, कदयानकी, दया बंश-
व्यालीसकी दया।

अथ श्रीबोधसागरे

पञ्चत्रिंशतिस्तरंगः।

अथ सुमिरनबोध।

द्वितीय बोध

(गुरुआई विधिके सुमिरन)—सुमिरन चौकाके अजर गायत्री।

अजर गायत्री अजपान। अजर चौका अजर नाम॥
अजर सिंहासन है परवान।
अजर थार भराये तहाँ। अजर पुरुष गवन किये जहाँ॥

अज्र नारियर सनमुख धरिया । सुर्त सुपारी आगे विस्तरिया ॥
लौंग इलायची जहवां फरी । लौकी लौंग सोध बिस्तरी ॥
ज्ञान ध्यानकी केशर गारी ।
अग्र विचार परममत दिया । अमी अंक तामें कर लिया ॥
अज्र अमर पाटंबर ताना । अग्र सुगन्ध महाँ परवाना ॥
अजर पुरुष बैठे सिंहासन सम्हारी । संग हंस शोभा अधिकारी ॥
अजर आरती बहुबिधि साजी । नानारंग तरंग विराजी ॥
उमगे प्रेम ज्ञान तह छाया । हंस सोहंगम चौर दुराया ॥
उठे तरंग बहुत बिधि बानी । अमी अमृत काल शाहि समानी
दुबिधा दुरमत दूर बढाई । प्रीति मिठाई थार भराई ॥
जग मग ज्योति रही ठहराई । परमल हंसा रहो समाई ॥
झमके तहवां नूर अपारा । गरज शब्द चहुँ ओरे धारा ॥
चन्द सूर जहँ गम नहिं पावा । सकल हंस वसन सुख आवा ॥
कहैं कबीर सुनो धर्मदासा । यह छबि देखत जगत हो उदासा
हिम्मत प्रीतिसों आरती साजो । इत उत चित नेक नाहिं राजो ॥

अज्र गायत्री नामकी, येही मुक्तिको मूल ।
धर्मदास दृढके गहो, जहाँ अज्र अस्थूल ॥
राजद्वारे जिन कहो, पण्डित सुन करे वाद ॥
सो हंसा सतलोकके, लेहि शब्द पहिचान ॥

अज्र गायत्री तुमको दीन्हीं । एती दया हम तुमपर कीन्हीं ॥
नाहीं सुमिरन जिह्वा आवा । अधर निरंतर ध्यान लगावा ॥
गायत्री भेद जानै कडिहारा । चौका निर्णय करै विचारा ॥
कहैं कबीर गायत्री कलसान । अजर अमर धर मूल टिकान ॥

सुमिरन अंशनके नाम बैठक पूजा ।

प्रथम कूर्म पीठ पर चौका ।
सहज अंशकी बैठक मूल करी । पूजा खडी सों चौका पोते ॥

सुजन जन अंशकी बैठक अग्रदीप, पूजा चन्दनको छरका ॥
भृङ्गमुनि अंशकी बैठक मंजुल करी, पूजा गादी चँदेवा ॥
अंश पक्षपालनकी बैठक पोहप दीप, पूजा फूलमाला अँगोछा ॥
अंश श्रवण लीलकी बैठक जगमगदीप, पूजा चोला धोती ॥
अंश सर्वांग सुर्तकी बैठक अचिन्तदीप, पूजा थारी कटोरी ॥
भावनाम अंशकी बैठक उदै दीप, पूजा दाख सहत ॥
सुर्त सुभाव अंशकी बैठक ज्ञानदीप, पूजा बदाम मरिच अबीर ॥
अक्षर सुभाव अंशकी बैठक पालंग दीप, पूजा केरा फूल ॥
सन्तोष सुजान अंशकी बैठक अक्षय दीप, पूजा मिश्रि अष्टमेवा ॥
कदल ब्रह्मकी बैठक सुखसागर दीप, पूजा सुपारी छोहारी ॥
दयापाल अंशकी बैठक आदि दीप, पूजा झारी अष्ट सुगन्ध ॥
जलरंग अंशकी बैठक पताल पाँजी, पूजा पान खरचा माला ॥
प्रेम अंशकी बैठक झँझरी दीप, पूजा घृत कपूर ॥
अष्टांगी अंशकी बैठक मानसरोवर, पूजारिष्ट भोग विलास ॥
प्रथम चार चौका ताके मध्य सिंहासन ॥
पान मिष्टान्न नारियर पुरुषको भोग घृत पकवान ॥
उत्तर दिशा जम्बूद्वीप गुरुधर्म दासगोसाई आरती ज्योति प्रकाश ॥
पूर्व दिशा गुरुराय बंकेज गोसाँई कलश पांचौ वाती प्रकाश ॥
दक्षिण दिशागुरु चतुर्भुजगोसांई दलकीझारी पांचपानखरचासाथ ॥
पश्चिम दिशा गुरु सहेते जी गोसांई पासान बंशगादी ॥
इतनी विस्तार पुरुष सों ज्ञानी लगि।
अपने अपने स्थान बैठाये। सब अंशनकी लाग चुकाये ॥
धर्मदास को संधि बताये। धर्मदास को नाम चुकाये ॥
षोडश अंश पान पर लीन्हें। मुक्तामन सुरती की दीन्हें ॥
कहे कबीर सुनो धर्मदास। यहभेदकडिहारसोंकहोप्रकाश ॥

इतना भेद कडिहार जो पावै । आप चले औ जीव बचावै ॥
धर्मराय है चोका माहीं । वह देखे सबके चतुराई ॥
सुनो धर्मदास चार चौका गुप्तहैं । ताकी सन्ध्य प्रकट है ॥
चार गुरुकी बैठक पूजा न्यारी न्यारी है ।
चार दिशा कायामें हेली । चार दिशा बाहरेली ॥
एक एक गुरुके आठ आठपूजाहैं । चार गुरूके बतीस साज ॥
एक एकगुरूकेसंग चारचारअंशहैं । चार गुरूके सोरह अंश ॥

साखी–इतना भेद जो जाने, सो साचों कडिहार ।
इतना भेद नहिं पावै, तेहि छलै काल बटमार ॥
साखी–चौका बैठा फूलके, गाफिल भया निशंक ।
बिनाभेद जो नारियर, मोरे ना शिर चढै कलंक ॥
झूलों काल हिडोरना, नहिं जाने शब्दका तोल ।
कहै कबीर धर्मदाससो; मम खाली परै न बोल ॥

सुमिरन बडी इकोत्तरी ।

अजरअचिन्त्यअकहअविनाशी । आदि ब्रह्म अमरपुर वासी ॥
अदली अमी अनेहअजावनसोई । आदि नाम सत्य सुकृतै होई ॥
परमानन्द है अखिल सनेही । सत्य नाम तत्पुर्ष विदेही ॥
निः कामी निर अक्षर सांचा । अजरअविगतसबहिनमो राचा ॥
अमर अपार अनन्त अभेदा । अचल अचिन्तन जाने भेदा ॥
अक्षय अगुण अगोचर कहिये । अगमअलेखगहिसतचित रहिये ॥
अभय औगाह अकथ बखाना । अम्बुज चरण औ पुरुष पुराना ॥
दीनबन्धु करुणामय सागर । दयासिंधु हंसन पति आगर ॥
दीनदयाल सो अधम उधारन । हिरण्मय भवसागर तारन ॥
अरूप अथाह अनाहद राता । योग जीत सबहिन के दाता ॥
करुणा मय संतन सुखदाई । अभय अचिन्त्य नाम गुणगाई ॥

सच्चिदानन्द सो सदा उजागर। योग संतायन पति सुखसागर ॥
सुर्त नामसों जपिये ज्ञानी। अमी अंकूर बीज सहिदानी ॥
प्रथम पुरुष सबहीके मूला। अमीदीप नाम है अस्थूला ॥
आलख नाम पुरुषोत्तम गाऊँ। नाम मुनींद्र सदा गोहराऊँ ॥
सर्व मई साधनपति सोई। भक्तराज बूझो नर लोई ॥
सत संतोष सो सदा सनेही। शब्दसरूपी अविचल देही ॥
प्राण नाक पिब अमृत बानी। सत्यलोकपति नाम बखानी ॥
सद्गुरु जन्म निवारक जानौ। बन्दीछोर निश्चय कै मानौ ॥
आवागमनके दुःख मिटावो। चौरासी लक्ष बन्द मुक्तावो ॥
शील रूप संतोष पियारा। धर्मराय शिर मर्दन हारा ॥
मुक्तिदाता शीतल उजियारा। नाम परायण प्राण पियारा ॥
अस्थिर नाम अभय पद दाता। अक्षयराज नायक विख्याता ॥
सत्यसाहेब कहो बहोर बहोरी। अक्षय बृक्ष हिरामय डोरी ॥
पुहुपदीप मण्डप गुरु सांचा। हँस सोहँग नाम बिच राजा ॥
सोहँ शब्द नाम है सारा। सत्यवचन बोले कडिहारा ॥
इच्छा रूप संत जन गावै। ज्ञानहि बीज अमोल कहावै ॥
अबोल अशोच असंशय धीर। नाम एकोत्तर कहैं कबीर ॥
एकोत्तर नाम सुमिरे जो कोई। ताको आवागमन न होई ॥
नाम एकोत्तर सुमिरे जबही। सद्गुरु बैठे सिंहासन तबही ॥
आरती नाम एकोत्तर चहिये। एकोत्तर बिना न नरियर गहिये ॥
आरती नाम एकोत्तरि धारा। एकोत्तरी बिना कैसो कडिहारा॥
बिना एकोत्तर नाहिं निस्तारा। कैसेहु जिन मानो कडिहारा ॥
एकोत्तर नाम जानै विस्तारा। सो जानो सांचो कडिहारा ॥
पांच नाम इनहीमों भाषा। सहज पक्ष पालन है साषा ॥
सुर्तसहजपालजरंगश्रवण है भाई। हँसनतिलकएकोत्तरि लेहो जाई॥

बायेंश्रवण लीला सुर्त है भाई । सुर्त डोर कहों समुझाई ॥
एकोत्तर नहिं जाने विस्तारा । सो जनि जानहु है काडिहारा ॥
जो नहिं जाने एकोत्तर विस्तारा । मिथ्या सो जानो काडिहारा ॥
नहिं तो पूत आहै काडिहारा । लै जीवनको करै अहारा ॥

नाम एकोत्तर जानै नहीं, औ धरे सिंहासन पाँव ।
कहैं कबीर तेहि शीसपर, कोटि वज्रको घाव ॥
धर्मदास हँसन तिलक, एकोत्तरि लेहो जान ।
अंश सुजन जन मुक्तपद, सत्यशब्द परवान ॥
पिंड ब्रह्मण्ड खोजके, राखो शब्दकी आश ।
तिलभर काया मूलकमलमें, जहां पुरुष रहिवास ॥
कहै कबीर जो पाइहैं, एकटक सुमिरे ध्यान ।
तिलभर काया सहज कमलमें, जहां पुरुषको स्थान ॥
सहजनाम युग बांधिया, बावन नामकी नेह ।
दीप अजय की ध्यानमें, भई सुर्तकी देह ॥
देह भई तब जानिये, गगनध्यान लौ लीन ।
सुर्त सोहँगम शब्दहै एकटक सुमिरो संतों जब यम होय बलछीन ॥
सोहँ शब्द निज सांचहै, जपौ अजपा जाप ।
कहैं कबीर धर्मदाससों, देखो अगम अगाध ॥
सोहँ शब्द निज सांचहै, गहि राखो तुम पास ।
सोहँ शब्दमें मुक्तमें, सत्य मानो धर्मदास ॥
सुमिरण सार एकोत्तरी, चन्द्र सूर घइसार ।
कहैं कबीर धर्मदाससों, तासु नाम काडिहार ॥

ज्ञान गम्य जाने जो पावै । भवसागरमें धन्य गुरू कहावै ॥

इति एकोत्तर नाम सिंहासन ध्यान नरियर अङ्ग प्रथम स्मरण चौका अङ्ग सत्य कबीर धर्मदास को दीन्ह । अविचल

पुरुष नाम अबोल अडोल नाम। अजावन राय रनछोर नाम॥
शम्भु संतोष नाम। उदैचन्द अक्षैराज नाम॥
एते नाम रहै लौ लाय। यमराजा तिहि देखि डेराय॥
अम्बू अपावन नाम। अम्बू शम्भू नाम। एत सत्यकाया प्रकाश॥
अजरनाम नरियर सचार।

अम्बू नाम वे पुरुष कहावा। सोहं हंस तहां बिलमावा॥
सोतो धर्मदास बैठहैं पुरुषपुरान। सोहं सुर्त तुम मोर सुजान॥
बेहंग नाम तुम जगमें देहो। हंस छोडाय काल सो लेहो॥
एही नाम जीव जो पावै। बोधे हंस लोकमें आवै॥
मैंकबीरदरवानीदरबाजेहौंठाढ। आवतजातसुखउपजैहंसनकोनहिंगाढ
एकोतरी नाम सुमिरे चितलाई। आवागमन रहित घर पाई॥

स्मरण हस्तक्रिया।

सुनो धर्मदास हस्तक्रिया सही। महापुरुष मुख अपने कही॥
नरियर अंकुरमों जीव रहाई। तहां सुर्त राखो ठहराई॥
नरियर उठाय हाथ के लेहू। नरियर मस्तिक हाथ जो देहू॥
सुर्त समाय जीवमो गयेऊ। नरियर अमर लोक ले राखेऊ॥
महा पुरुषके दर्शन कियेऊ। चरण बन्दिके शीश नवायेऊ॥
महा पुरुष लै अङ्क लगाये। तब हंसा लिये हर्ष समाये॥
अंकुर अंश बिनवे कर जोरी। महा पुरुष सुनो बिनती मोरी॥
अंकुर अंश नाम लौ लाई। भवसागर ते लेऊ मुक्ताई॥
महा पुरुष सुर्त उतपानी। जाय सुर्त कडिहार समानी॥
कडिहार सुर्त लीन्ह चितलोई। सोई सुर्त हंसा मो आई॥
माथे हाथ जीवके दियेऊ। सुर्त समाय हंस मो गयेऊ॥
गई समाय रही ठहराई। बहुत अनन्द हंस तब पाई॥

जब लग सुर्त रही गहि बांही । कोइकोइ सन्तसो जानत आही ॥
टीका मुदित पूजै जब आई । यह पिण्ड तबही खस जाई ॥
सुर्त हंस ले गये लेवाई । महा पुरुषके दर्शन पाई ॥
महा पुरुषके चरण छुवाई । करै बन्दगी शीश नवाई ॥
महा पुरुष लिये अंक लगाई । सुर्त हंस नाम तिन पाई ॥
अपने समसर लिये लगाई । महा पुरुष सम शोभा पाई ॥
सुर्त हंस बिनवे करजोरी । महा पुरुष सुनो बिनती मोरी ॥
भवसागर कडिहार रहाई । तिनके शब्द मुक्त हम पाई ॥
धन्य शब्द धन्य कडिहारा । तिनके शब्द मो हंस उबारा ॥
महा पुरुष चितवे चितलाई । भवसागर ते लेव मुक्ताई ॥
मुक्त होय सतलोके आवै । छिन छिन गुरुके दरशन पावै ॥
महा पुरुष शब्द उचारा । वै कडिहार हैं सुर्त हमारा ॥
जहां जहां सुर्त चित्त लाई । सोई हंस लोकको आई ॥
भ्रमें जीव होय जसमाही । तिन सनकी गहे जो बाहीं ॥
भमें जीवको नारियर लेई । हस्त क्रिया नारियर को देई ॥
हस्त क्रिया नरियर जब पाई । भमें लोक हंस लै जाई ॥
जाहि खानमें जीव रहाई । जहां जाय सुर्त समाई ॥
गई समाय रही ठहराई । हंस उधार लोक ले जाई ॥
जो कडिहार हस्त क्रिया पावै । महापुरुष के सुरत समावै ॥
हस्त क्रिया गहे चित लाई । कहै कबीर हंस लोक सिधाई ॥

स्मरण सिंहासन बैठनेका ।

अंगन गहे गहनी तहां पुरुष चेतो सन्त बिचार ।
सिंहासन है पुरुष को सुर्तसों रोपो पांव ॥
जीवन पार उतारो तुम्हरे शिर नहिं भार ।
आदि पवन सों बैठो मूलशोध कडिहार ।

कहैं कबीर धर्मदाससों, सत्य पुरुष चितराख।
अमी अंक जो जानै, जासु जहा तत भाष ॥

स्मरण दल अर्पणका।

अर्पों दिल चौकामें उत्तिम दल बनाय।
कहैंकबीर धर्मदास सो सब अवगुण मिटजाय ॥

स्मरण पाषाण रखनेका।

पान पुराण हाथकर लीन्हां। सब साहेबका सुमिरण कीन्हां ॥
सत्य पुरुष बोले परवाना। बैठे पुरुष मध्य जो स्थाना ॥
रेखा लिखो पाषाणमें अचिंत्य नाम घटबोल।
कहैं कबीर धर्मदाससों तब हंसा होय अडोल ॥

स्मरण नरियर रखनेका।

नरियर नरियर नरियर खरी। नरियर मोरे सत्य कबीर।
औरसों नरियल मोर न जाई। पांच शब्द लै नरियर मोरे कबीर धर्मदास आई ॥

स्मरण नरियर मोहनेका।

जलदल लेके नरियर मोरा। सत्य शब्द गहि तिनका तोरा ॥
मोरो नरियर हुकुम कबीर। सत्य नाम गहि लागो तीर ॥
पुरुष नाम है अमी अमोल। नरियर मोरो खसम निहोर ॥

स्मरण नरियर मोडनेका।

अमी शीचके नरियर कन्हिां। सो नरियर धर्मदास को दीन्हां ॥
धर्मदास मृतु मण्डल आये। सकल सन्त मिली मंगलगाये ॥
नरियर मोरके सत्य सुकृतकोशिरनाये। निकुत नामलेहंसबचाये ॥
कहैं कबीर धर्मदास सों। नरियर मोरे वंश तुमार ॥

स्मरणतिनका तोरनेका।

यह विरवा चीन्हे जो कोय। जरा मरण रहित घर होय ॥

कौनविरवा जो बोलतहै ताको चीन्हो । कबीर गोसांईकी आज्ञा सों । जिवसो यमसो तिनका टूट यमके मुखमें थूक ॥

स्मरण ज्योती शीतलकरनेका ।

साखी–आदि अन्त एक ज्योति है, अस्थिर थीरहै नीर ।
सात द्वीप नौ खण्डमें; एकहि सत्य कबीर ॥

स्मरण मिठाई मालुमकरनेका ।

श्वेत मिठाई उत्तम पाना । लौंग लायची श्वेत प्रवाना ॥
केरा कदली और सुगन्धा । तबही हंसा होय अनन्दा ॥
यहविधिकरोमिठाई । कहैकबीर धर्मदाससोतबहमकोभोगलगाई ॥

स्मरण पानप्रसादमालुमकरनेका ।

चौका लेय मिठाई धरी नारियर धोतीपान ।
हंसा बैठे आसन पर पूर्वहि आज्ञामान ॥
पुरुष बैठे आसन हंसहि नाही मार ।
कहै कबीर मिठाईमालुममानसरोवरपार ॥

स्मरण आरती सौंपनेका ।

जोई आरती वारे सोई बुझावै आन ।
जहांज्योतिझिलमिल करै सोईपहिचान ॥
अपनो तन मन खोजो, आपकरोचितएक ।
शीतल करोआरती पुरुषनाम गहिटेक ॥
कहै कबीर यह सुमिरणसन्तोकरोविवेक ।
अबकी वेरा चेतहु, तारों कुटुम समेत ॥

स्मरण आरती प्रकाश करनेका ।

सोहंग नामले आरती वारे आपतरेऔरनको तारे ॥
सोहंग नामनिज सुमिरके, करो आरती प्रकाश ॥
कहै कबीर धर्मदाससों मिट गये यमके त्रास ॥

स्मरण परवाना लिखनेका।

अमी अंककी लिखनी कीन्हा। सोलिखनीधर्मदास को दीन्हा॥
उलटी लिखनी सीयेल द्वार। कटे कर्म भये जर छार॥
खोजतखोजतखोजिया, यहसन्तनको काम।
पुरुष देह धर देखिया, और एकोतर नाम॥

स्मरण परवाना साजनेका।

अहो साहेब कौन अङ्गप्रथान साजो। भाषो लेपा अंगमों ताको॥
अहोधर्मदासमध्यअङ्गस्थानासाजो। अंक चढाय नामयुखभाषो॥
अजावन नाम पानके लीन्हा। सुर्त सम्हार अंक तुम चीन्हा॥
कहैकबीरधर्मदाससोयहबीराअंकनामाबिदेहचढावहूँहंसहोकनिशंक।

स्मरण प्रवाना साजनेका।

अमी अंकका बीरा शब्द, सोहंगम डोर।
कबीर हंस लोकलै राखो, यमसे बन्दी छोर।
सुर्त चढीआकाशको, उनमुनमहल बनाय॥
सोई हंस उजागर जामो अमी समाय॥
पुरुष मोहर अकह कबीर। कालमें सोहं धर्मदास कबीर॥

स्मरण प्रवाना देनेका।

श्वेत पान अम्मर है छाया। सोपान अमोदिक पुरुष पठाया॥
भरमत पवन फिरे संसारा। पवन निर्मल होय असवारा॥
अमी अंक पुरुष लिख दीन्हा, कमल पंखुरी सार॥
कहैं कबीर कछु शंका नाहीं, रहो पुरुषके आधार॥

स्मरण प्रवाना देनेका।

अजरमूलसो बोरी, उत्तारी सुर्त सोहंगम डोर।
एही सुमिरणपायके, हंसा उतर लक्ष करोड॥
एही स्मरण हाथले, काल रहो मुरझाय।
कहैं कबीर धर्मदाससों, हँसलोक पहुँचाय॥

स्मरण कण्ठी बांधनेका ।

कण्ठी कण्ठ विराजै, सतगुरु तिलक कर दीन्ह ।
जगसों तिनुका तोरिके, हंस आपन करि लीन्ह ॥
माला कण्ठी नामकी, सतगुरु शब्द बिचार ।
बादविवाद जो बालकसो करै, ताके मुखपरेछार ॥
कहैकबीर धर्मदाससों, बालक कबहु न होय निनार।

स्मरण पांचनाम ।

आदिनाम अजरनाम अमीनाम । पताले सदा सिंधु नाम ॥
अकाशे अदली निरनाम । एही नाम हँसको काम ॥
खोले कूची खोली कपाट । पांजी चढे मूलके घाट ॥
भर्म भूतको बांधो गोला कहैं कबीर प्रवान ॥
पांच नाले हँसा, सत्यलोक समान ॥

स्मरण दक्षामंत्र ।

सत्यसुकृतकीरहनीरहै, अजरअमरगहैसत्यनाम ।
कहै कबीर मूलदक्षा, सत्य शब्द परवान ॥

स्मरण तिनुका तोरनेका ।

दाहिने छोडो धर्मका स्थाना । बांये चित्रगुप्तको जाना ॥
सन्मुख नासिका देव पयाना । तब यम चले देखके पाना ॥
टूटै घाट अठासी करोरी । हँसा चढे नामकी डोरी ॥
सो जीवत हँसा भये, लिये प्रेमकी डोर ।
सो जिव चले सत्यलोकको, यमसों तिनुकातोर ॥
आसन वासन मन कल्पना, औ सर्वा भूत ।
एको तरसे पुरुष के, तिनुका टूट ॥
कहैं कबीर सद्गुरु मिलै, मिथ्याके मुख चूक ॥

तिनुका तोरनेका।

अनपाप मनसा पाप पाप महापाप पुरविला पाप।
नोग्रह ब्रह्मा जाई। हम सद्गुरुके शरण आई॥
आसन वासन मन कलपना, एतो सर्वाभूत।
कहै कबीर सद्गुरु मिले, मिथ्याके मुख थूक॥

तिनुका तोरनेका।

आसन वासन मन कलपना देवो सर्वाभूत।
यमसों तिनुकाटूट साहब शब्द प्रकटभागे भूत यमदूत॥
ये जीव भये कबीर साहेबके यमसों तिनुका टूट॥
कालके मुख थूक यमसों तिनुका टूट॥
शब्दहि नेह लगावै कहैं कबीर धर्मदाससों कालदगा मिटजाय॥

तिनुका तोरनेका।

आसन बासन मन कलपना, खेदो सर्वाभूत।
कहैं कबीर सतगुरु मिले, मिथ्याके मुख थूक॥

जँजीरातिनुका तोरनेका।

भूतहि बांधों पिशाचहि बांधों बांधों धीमर धोखा।
तीन निरंतर मंतर बांधों मारों नाहर चोखा॥
बोझा बांधों बोझइता बांधों पूजित बांधों पुजेरी बांधों।
मरहिया मनसा बांधों हाटक बांधों फाटक बांधों।
औघट बांधों बाट बांधों नैहर बांधों सासुर बांधों।
अरोसिन बांधों परोसिन बांधों बांधों डंकन डोरी।
कहैं कबीर भर्म सब बांध्ये निर्गुण तिनुका तोरी॥

स्मरण प्रवाना पावनेका।

अजरकी लिखनी हीरा पाना। सत्य सुकृत लिखे परवाना॥
देह पान लेवो कण्ठ लगाई। बालक देहू गर्भ मैं भाई॥

भाषा भाषों अपर्बल परे अजरकी छाय ॥
मुक्तके अक्षर मुक्ता मन होय चुरामनि नाय ॥

स्मरण प्रवाना पावनेका ।

अजर नाम अजर है प्राना । अजर नाम सत्य लोक पयाना ॥
अजर नाम गुरु दिया बताय । कर्म भर्म सर्व दिया बहाय ॥
कहैं कबीर सुनो धर्मदास । अजर नामते लोक निवास ॥

स्मरण माथा पंजा देनेका ।

ठाढे दूत करत हैं गोला । धर्मदास मुख अजरे बोला ॥
धर्मदास मुख बोले बानी । दूत भूत गये कुम्हिलानी ॥
अजर लोक अजर है नाम । अजर पुरुष अजर पुर्षकोनाम ॥
येही नामहृदयमें राखो । जादिनकाल दगापरे तादिनमुख भाषो ॥
उत्तर दिशा जगन्नाथके ठाईं ।
कहैं कबीर धर्मदास सों अजर बोल तुम जीवको सुनावो ॥

स्मरण दल प्रसाद लेनेका ।

अमृतदल अमरापुरी, तिरख नाम निज चीन्ह ।
अजर नाम कबीर का, अमृत दल करि दीन्ह ॥

इति सुमिरन चौकाको गुरुवाई विधि सम्पूर्ण ।

अथ लिख्यते चौकाविस्तार विधि ।

स्मरण चँदोवा ताननेका ।

सत्य सुकृतको समझके, कीजे मनको स्थीर ।
छत्र तनायो प्रेमसो, सद्गुरु कहैं कबीर ॥
पांच सुपारी पांच खूटमें, स्वेत चँदेवा सोय ।
कहैं कबीर धर्मदास सो, आवागमन न होय ॥

स्मरण खडीसो चौका पोतनेका ।

स्वेत मृत्तिका निर्मल पानी । चौका पोते सुकृत ज्ञानी ॥

चौका पोतके चन्दन चढावा। सत्य सुकृत जिनलोक पठावा ॥
कहैं कबीर सुनो धर्मदास। हंसा गये पुरुष के पास ॥

चन्द चौका प तनका।

सिन्धु नीर घट अमी मगावा। सत्य सुकृतको शीश नवावा ॥
सोहं पवन ल कीन्ह पसारा। निकुत नाम लै हंस उबारा ॥
तन मन देके चीन्ह शरीर। अंकनाम कहि दीन्ह कबीर ॥

स्मरण कनिक चौका पोतनेका।

कनक छानक निर्मल कीन्हाँ। सहज नाम हदे चित दीन्हा ॥
चौका पूरे युक्ति बनाई। सतगुरु दीन्हा भेद लखाई ॥
कहैं कबीर चौका है सारा। चौका बैठो सिरजन हारा ॥

स्मरण मानिक बनावनेका।

अग्र आरती कर मन जाना। कौन पवनसो निकसे पाना ॥
शब्द अन्त है ताकर सार। सो जीवनका करै उबार ॥
उबारे हंस करै लोक निवास। बाहरतत्त्व जानेअंश वंशहमार ॥
सत्यनाम मगन जेहि भीतर कहैं कबीर हम प्रकट शरीर ॥

स्मरण थारमें परवाना धरनेका।

थार परवाना कर सम तूला। आदि नाम भाषो मुख मूला ॥
मानिक सवार थारमें धरो। परवाना को सुमिरण करो ॥
कहैं कबीर सत्य है सार। अंश वंश हँस उतारे पार ॥

स्मरण मानिक धरनेका।

स्थिरहि थारमें मानिक धरो। एकनाम सुस्थिर दृढ गहो ॥
कहैं कबीर गहो नाम अधार। निश्चल हँस साधि कडिहार ॥

स्मरण कपूर घृत परसेको।

अग्र कपूर अग्र घृत धाइ। सो कदली है वाहा नेह ॥
शब्द कपूर तहां लै धरो। सतगुरु दयासों निर्भय रहो ॥
कहैं कबीर. सुनो धर्मदास। अग्र वासमें करी निवास ॥

स्मरण पान धोवनेका ।

सुख सागर है मूल स्थान । तहां ऊपजे श्वेतै पान ॥
श्वेत पानकी अंमर छाया । अमी पुरुष संदेश पठाया ॥
कहैं कबीर सुनो संत सुजान । यहिविधि करो पान औ स्नान॥

स्मरण पान चढावनेका ।

श्वेत पान लोकते आया । श्वेत पान पुरुष निर्माया ॥
दिया वंश धर्मदास को । दीन्हों पान चलाय ॥
लेहु पान तुम शीश चढाय । श्वेत पान पावे निज मूल ॥
दृढमनचितकोराखो थीर । कहैंकबीरधर्मदाससोंपहुँचेलोकअस्थूल॥

स्मरण दल बाँटनेका ।

दलनाम दयाका मानाम करि पूर । नौग नाम वे पुरुष हैं । बिन डोढी का फूल । सुर्त लाय दल वाटहू जल दद धरहु सुधार कहैं कबीर धर्मदाससों भव तज लगेन वार ॥

स्मरण दल बनावनेका ।

यो दल सत्तर लोकसों जल आवा । सत्तर लोकसों अमृत लावा । शब्दकी झारी अमृत भरी । तापेसा तोष रिचा धरी । तीन खरचा पहले तोराई । कह कबीर यमदूत पराई ॥

नरियर जटा उतारनेका ।

प्रथम बीज धरतीको दीन्हा । लागे फल नरियर तहँ लीन्हा ॥
सो नरियर सन्त जन पाये । सत्य सुकृतको आनि चढाये ॥
तीन लोक है पिण्ड शरीर । भीतर बाहेर एकहि नीर ॥
कहैं कबीर सुनो धमदास । यहविधि नरियर भयो प्रकाश ॥

स्मरण नरियर स्नानका ।

सुख सागर है मूल अस्थान । तहाँ भये नरियरके स्नान ॥
श्वेत नारियर श्वेतहि छाया । अमी पुरुष सन्ध पठाया ॥

भरमित पवन फिरे संसारा । निर्मल पवन ताहि असवारा ॥
कहैं कबीर सुनों धर्मदास । द्रुम् नरियर ज्ञान प्रकाश ॥

स्मरण कलश धरनेका ।

दो पैसा औ एक सुपारी । कलश धरो उत्तम विस्तारी ॥
सवासेर लै तण्डुल धरौ । धर्मराय देख थरहरौ ॥
पांचो बाती देव लेसाई । तब गादीपर बैठो आई ॥
हृदय चरण वंशके धरो । सत्य कबीर कहि धोक परिहरो ॥

कलश सही करनेका ।

पांचतत्त्व घट भीतरपांचहिनाम । तासों होय जीवको काम ॥
सो लेखा तियवार कहे कबीर सुनो धर्मदास । धर्मरायसो हंस
उबार । जोति अजरलोककी अजरलोक देह पहुँचाय ॥ कहै कबीर
सुनो कडिहार । सारशब्द गहो टकसार ॥

स्मरण फूल चढावनका ।

सुकृत वारिसों फूल मँगाये । सहजकी झारी आनि भराये ॥
सत्य पुरुषको आनि चढाये । धर्मदास उठि बिनती लाये ॥
हीरा मानिक लागे मोती । सत्य पुरुषकी निर्मल जोती ॥

स्मरण गादी बिछावनेका ।

चौका धरो मिठाई आनी । नरियर पान कपूर अघानी ॥
पुरुष बैठ सिंहासन आई । हंसहि नाहीं भार रहाई ॥
मान सरोवर कदली केरा । मेवा अष्ट लाय यह बेरा ॥
लौंग लाइचीसत्यलोककेछोही । भोमे आनि मिठाई होई ॥
कहैं कबीर सुनो धर्मदास । सिंहासन बैठे मम दास ॥

स्मरण फलमाला बांधनेका ।

मन माली तन फूल मँगाये । अमी अंक लै शब्द सुनाये ॥
मनकरवारी तनकर पोष । काया कञ्चन भई निर्दोष ॥
कहैं कबीर निज सुमिरो मोही । मारों यम उबारो तोही ॥

स्मरण आरती धरनेका ।

सत्य जीव आरती है नाम । सतगुरु शब्द सुनो परवान ॥ वोही नाममें बैठके लेहु धनीको पान । अंश वंश गुरु कीजिये देह धरो नहिं आन । धीर गुरुको चीन्हके रहो सत्य मनलाय देखो खसम कबीरको हंस लोकको जाय ।

स्मरण चौका हाथ देनेका ।

करधर चौका विनती कीन्हा । तुम्हरे कहे भार हम लीन्हा ॥ अहो साहेब मोहे नहिं भार । यह चौका विस्तार तुम्हार ॥ तुम जानो ओ शब्द तुम्हारा । समरथ मोहि उतारो पारा ॥

धर्मदास बिनती करें, तुम हो सत्य कबीर ।
शिरके भार उतारहू, गहिके लावौ तीर ॥

इति श्रीस्मरण गुरुवाई भेदादि चौकाविस्तार विधि सम्पूर्ण ।

अथ लिख्यते स्मरण अभेद ।

प्रथम समरथके मुखसो सहज अंश उतपन भये ताको बीज ॥ बुन्द दियो तामें सर्व रचना आई औ सात करी भई ।

करीके नाम ।

प्रथम पोहप करी, दूसरे मूलकरी, तीसरे अम्बुकरी, चौथे सुवर करी, पांचे सुखसागर करी, छठये पंकज करी, साते मंजुल करी दूसरे समरथके नेत्र सो इच्छा सुर्त उतपन भई ॥ ताको जावन बुन्द दियो तासो पांच अंड भये ॥ तीसरे ॥ समरथके श्रवणसो मूल सुर्त उतपन भई ताको अमी बुन्द दियो तासो पांच अंड पोषे तासो पांच ब्रह्म उतपन भये तिनको आज्ञा दिय एक एक ब्रह्म एक एक अण्डमों आये चौथे समरथ की नासिकासे सोहंग सुर्त उतपन भये तासो पांच अण्ड फूटे तासो आठ अण्डभये ।

अंशनके नाम।

प्रथम अचिंत्य, दूसरे जोहंग, तीसरे अकह, चौथे सुकृत, पांचे हिरण्मय, छठे अक्षर, साते योगमाया, आठे निरञ्जन, अचिन्तको चिन्ता नहीं, तेज अण्डके मालक, अण्ड को प्रवान पालंग १२ वंश ॥ ९ ॥ प्रथम माया दूसरे कूर्म, तिसरे अदल अष्ट, चौथे निरञ्जन, पांचे नभ, छठे समीर, साते तेज, आठे नीर, नवे पृथ्वी ॥ ९ ॥ दूसरे जो अङ्ग हंस, तिनको बैठक धीरज अण्ड दिये अण्डको प्रवान पालंग पचीस ॥ २५ ॥ औवंश सोरह ॥ १६ ॥

वंशनके नाम।

प्रथम अजरमुनि, दूसरे अगम मुनि, तीसरे हंसमुनि, चौथे चन्द्र मुनि, पांचे आपमुनि, छठये पुरुषमुनि, सातैं अलंजित मुनि, आठे कलंक मुनि, नवें शीतलमुनि, दशयें श्रीं मुनि, ग्यारहे कण्ठमुनि, बारहें कनक मुनि, तेरहे बेहंग मुनि, चौदहे गंगमुनि, पन्द्रहे सोम मुनि, सोरहे जलरंग ॥ १३ ॥

तीसरेअकहअंश।

तिनको बैठकछिमा अण्डभो दिये; अण्डको प्रवान व्यालिस ॥ ४२ ॥ वंश सताईस ॥ २७ ॥

वंशकेनाम।

प्रथम प्रेम, दूजे हुलास, तिसरे आनन्द, चौथे विशाष, पांच हेत, छठे प्रीति, साते निरख, आठे विवेक, नवें सुमत; दशें क्षमा, ग्यारहे धीरज, बारहें आलहाद, तेरहें शील, चौदहें संतोष, पन्द्रहें सुमन सोरहें बुद्धि, सत्रहें भाव, अठारहें भक्ती, उनीसवें दया, बीसे ज्ञान, एकइसे क्रिया, बाईसे विचार, तेइसे कृपानि, चौबिसे संतोष, पचीसे भेद, छवीसे इच्छा; सताइसे भय, तिनको राज्य क्षमा अण्ड पुरुषके हजूरी ॥

चौथे सुकृत अंश ।

तिनके बैठक सत अण्डमोदियें, अण्डकोप्रमान पालंग बहत्तर ॥ ७२ ॥ तिनके वंश बयालिस ॥ ४२ ॥

वंशनके नाम ।

प्रथम काय सर्वांग रहाई, सर्वांग कायाते बीज बुन्द निरमाई बीजबुन्दते अविगति काया। अविगत कायाके दशो भेदले। कायाके रूपसुर्त निर्माया। रूप सुर्तके सतगुरु सोहंके गुंग पुरुष कहाये। गुंग पुरुषके अचिंत पुरुष कहाये। अचिंत पुरुषकेज्ञानी अंश। ज्ञानी अंशके सुजनजन अंश। सुजन जन अंशके चूरा मणी नाम। चूरा मणि नामके सुदर्शन नाम। दूसरे कुलपति नाम। तीसरे प्रमोदनाम चौथे कवल नाम। पांचे अमोल नाम छठे सुर्त सनेही नाम। साते हक्क नाम। आठे याक नाम नवें प्रकट नाम। दशें धीरज नाम। ग्यारहे उग्र नाम। बारहें दया नाम। तेरहे गध्र नाम। चौदहे प्रकाश नाम। पंद्रहें अदित नाम। सोरहें मुकुन्द मुनि। सत्रहे अधर नाम। अठारहे उर्द्धनाम। उनीसें ज्ञानी नाम।........बाइसें अजर नाम। तेइसे रस नाम। चौविसे गंगमुनि। पचीसे पारस नाम। छवीसे जागृत नाम। सताइसे भृंगमुनि। अठाइसे अखैनाम। उनतीसे कंठ मुनि तीसै संतोष दास। एकतीसे चात्रक मुनि। बत्तीसे अजर नाम। तेतीसवें दुर्गमुनि। चौतीसवें आदि नाम। पैंतिसवें महा मुनि। छतीसवे निज नाम सैंतीसवें साहब दास। अडतीसवेंउर्द्ध दास उनतालीशवें करु। चालीशवें दीर्घमुनि। एकतालीशवें महामुनि।

साखी–वंश ब्यालीसके आगम, चूरामणि सतायन ।
वचन हमारा प्रकटे, निःअक्षर निज नाम ॥
तिनको राज सत अण्डमें, चौकी लोक पांजी ।

पांचै हिरण्मयअंश ।

तिनको बैठक सुमत अण्डमों दिये । अंडको प्रवान पालंग॥ ६४॥ वंश सात ॥ ७ ॥

वंशनके नाम ।

प्रथम वंशपारन, दूसरे स्वांतसनेही, तीसरे भृङ्गसनेही, चौथे ॥ लरासिंध, पांचे दीपकजोत, छठें जलभाव, सातें मलयागिर ॥ ७ ॥ तिनको राजसुमत अंडमें पुरुषके हजूरी ॥

चार गुरुके नाम-लोकके और भवसागरके ।

प्रथमनाम लोकमें जोहंग हंस कहिय और भवसागरमें गुरु चतुर्भुज गोसाई तिनके वंश सोरह ॥ १६ ॥ दक्षिण दिशा सामवेद लपक्षद्वीप दरभंगा शहर तहां प्रगट भये ॥ तिनको मूलज्ञान बानी ताबानीले पंथ चलायो, ब्राह्मण कुल प्रकट भये ॥ १ ॥ दूसरे नाम लोकमें अकह अंश कहिये ॥ २७ ॥ पूर्वदिशा यजुर्वेद कुशद्वीप करनाटक शहर तहां प्रकट भये । तिनको टकसार ज्ञानता वाणीले पंथ चलायो ॥ २ ॥ कायस्थकुल शूद्र, तीसरे नाम लोकमें सुकृत अंश कहिये, और भवसागरमें गुरुधर्मदास गोसांई कहिये तिनके वंश व्यालीस ॥ ४२ ॥ उत्तरदिशा ऋग्वेद जम्बूद्वीप भरतखण्ड बांधो शहर तहां प्रगट भये, तिनके कोट ज्ञान बानी ता बानीले पंथ चलाये ॥ ३ ॥ चौथे नामलोकमें हिरण्मय अंश कहिये । और भवसागरमें गुरुसहतेजी गोसाईं कहिये तिनके वंश सात ॥ ७ ॥ पश्चिम दिशा अथर्वणवेद सिलमिल द्वीप मानिकपुर शहर तहां प्रकट भये । तिनको बीजक ज्ञान बानी ता बानी ले पंथ चलाये क्षत्रियकुल ॥ ४ ॥

दश सोहंगके नाम ।

थम पुरुष सोहं दूसरे सहज सोहंग तीसरे इच्छा सोहंग ॥

चौथे मूल सोहंग पाचे वोहं सोहंग छठे अचिंत सोहंग साते अक्षर सोहंग, आठे निरंजन माया सोहंग, नवें ब्रह्मा विष्णु महादेव सोहंग ॥ १० ॥

नौ सुर्तके नाम ।

प्रथम सहज सुर्त, दूसरे इच्छा सुर्त, तीसरे मूल सुर्त, चौथे सोहं सुर्त, पांचवें अचिंत सुर्त, छठें अक्षर सुर्त, सातें निरंजन सुर्त, आठें सुकृत सुर्त, आठें सुकृत सुर्त, नवें नौतम सुर्त ॥ ९ ॥

दश प्राणके नाम ।

प्रथम अपान, दूसरे समान, तीसरे प्राण चौथे उदान पांचे व्यान, छठें नाग, सातें कूर्म, आठें किलाकिला, नवें देवदत्त, दशमें धनञ्जय ॥ १० ॥

आठ कर्मके नाम ।

प्रथम ज्ञानवंनी, दूसरे रसनावंनी, तीसरे वेदवंनी, चौथे ध्यानवंनी, पांचे अतराय, छठें गोत, सातें प्रमान, आठें आव ॥ ८ ॥

तीन कर्मके नाम ।

प्रथम संचित, दूसरे क्रियामाण, तीसरे प्रारब्ध ॥ ३ ॥

दो कर्मके नाम ।

प्रथम विधि, दूसरे निषेध ॥ २ ॥

चार ज्ञानके नाम ।

ब्रह्मज्ञान अंचितको, अनुभवज्ञान अक्षरको, त्वचाज्ञान निरञ्जनको, क्षुद्रज्ञान माया त्रिदेवाको ॥ ४ ॥

चार ज्ञानीके नाम ।

प्रथम पिशाच ज्ञानी, दूसरे पंडित ज्ञानी, तीसरे उन्मत ज्ञानी, चौथे जडज्ञानी ॥ ४ ॥

चार ध्यानकेनाम ।

प्रथम पंडीसीतध्यान, दूसरे रूप सत्य ध्यान, तीसरे पद सत ध्यान, चौथे रूपातीत ध्यान ॥ ४ ॥

चारपदार्थके नाम ।

प्रथम अर्थ, दूसरे धर्म, तीसरे काम, चौथे मोक्ष ॥ ४ ॥

तीन पदके नाम ।

प्रथम तत्वपद, दूसरे तत् पद, तीसरे असी पद ब्रह्म ॥ ३ ॥

तीनतापके नाम ।

प्रथम अध्यात्म, दूसरे अधिदेव, तीसरे अधिभूत ॥ ३ ॥

तीन जीवके नाम ।

प्रथम मोक्षी । दूसरे विषय । तीसरे पामर ॥

पांच खानके नाम ।

प्रथम मनुष्य खान । दूसरे पिण्डज खान । तीसरे अण्डज खान । चौथे उखमज खान । पांचे अस्थावर खान ॥

पांच वाणीके नाम।

प्रथम सिंगिनी वाणी । दूसरे बिंगिनि वाणी । तीसरे किंगिनि वाणी । चौथे इंगिनि वाणी । पांचे रिंगिनि वाणी ॥

पांच तत्त्वके नाम ।

प्रथम आकाश । दूसरे वायु । तीसरे तेज । चौथे जल । पांचे पृथ्वी ॥

तिनको विभाग ।

मानुष खानमें सिंगिनि वाणी । आकाश, वायु, तेज, नीर, पृथ्वी, ये चार तत्त्व पिंडज खानमें वर्तते हैं । तीसरे अण्डज खानमें किंगिनि वाणी, वायु तेज, जल, ये तीन तत्त्व अंडज

खानमें वर्तते हैं । चौथे उषमज खानमें इंगिनि वाणी, वायु, तेज ये दो तत्त्व उषमज खानमें वर्तते हैं । पांचे अस्थावर खानमें किंगिणि वाणी जल एक तत्त्व वर्त्तते हैं ॥

जो इनको प्रवानजात ।

प्रथम चार लाख खान मानुषको । दूसरे पिण्डज नौलाख जात । तीसरे अण्डज चौदह लाख जात । चौथे श्वेदज उषमज सताइस लाख जात । पांचे अस्थावर तीस लाख जात ॥

अथ पुरुषसम्रथसो अंशभये तिनको नाम ।

प्रथम पुरुषके त्रिकुटी सो अंकुर । पुरुषके नेत्र सो इच्छा । पुरुषको नासिका सोहं पुरुषके मुखसो अचिन्त । तेज अंड पालंग बारह अचिन्त अंश प्रेम सुर्त । धीरज अण्डज पालंग पचीस जोहंग अंश सो सोहं सुर्त । छिमा अंड पालंग व्यालीस अकह अंश मूल सुर्त । सत्त अंगुपालंग बहत्तर सुकृत अंश इच्छा सुर्त । सुमत अण्ड पालंग चौसठ, हिरण्मय अंत अंकुर सुर्त ॥

इति श्री सुमिरणपांजी आदि षट्कर्म विधि, चौका विधि गुरुवाई भेदादि विस्तार विधि संपूर्ण ।

सत्यसुकृत, आदिअदली, अजर, अचिन्त, पुरुष, मुनीन्द्र, करुणामय, कबीर, सुरति, योग, सन्तान, धनी धर्मदास, चुरामणिनाम, सुदर्शन नाम, कुलपति नाम, प्रमोध गुरुवालापीर, केवल नाम, अमोल नाम, सुरतिसनेही नाम, हक्क नाम, पाकनाम, प्रगट नाम, धीरज नाम, उग्र, नाम, दया नाम, की दया वंश-व्यालीसकी दया।

अथ श्रीबोधसागरे

षट्त्रिंशतिस्तरंगः।

सुमिरन बोध।

तृतीय बोध।

अथ गुरु महिमा प्रारम्भः।

गुरु संतनकी आज्ञा पाइ। गुरु महिमा अमृत रसगाई॥
गुरु मिले तो अगम बतावे। यमकी आँच ताहि नहिं आवे॥
जेता नाम रूप जग माहीं। सबहीमें सत गुरुकी छाहीं॥
सतगुरु सकल कलमके साखी। सकल भुवनगुरु तन्मय राखी॥

सतगुरु अजर अमर अविनाशी । सतगुरु परम ज्योति परकाशी ॥
गुरु गोविन्द दोउ एक स्वरूपा । नाम रूप गुण भेद अनूपा ॥
गुरु अविचल पद पूरण धामा । गुरु स्वामी गुरु जग विश्रामा ॥
सतगुरु जनम मरनते न्यारा । सतगुरु सबका सिर्जन हारा ॥
निर्गुण गुरू रूपसे न्यारा । छाइ रह्यो सबही संसारा ॥
है सतगुरु सत पुरुषै आपे । जासो प्रकट ब्रह्म भयो जापे ॥

साखी–गुरु ईश्वर गुरु परब्रह्म, सतगुरु सबका देव ।
गुरु बिन पार न आवई, ताते शरणो लेव ॥

गुरुकी शरणा लीजे भाई । जात जीव नरक नहिं जाई ॥
गुरुकी शरण साधू जानै । गुरुकी शरण मूढ पहिचानै ॥
गुरु शरणा सबहिनसे भारी । समुझि गहो सोई नर नारी ॥
गुरु शरणा सो विघ्न विनाशे । दुरमति भाजे पातक नाशे ॥
गुरु शरणा चौरासी छूटे । आवागमनकी डोरी टूटे ॥
गुरु शरणा यमदण्ड न लागे । ममता मरै भक्तिमें पागे ॥
गुरु शरणासे प्रेम प्रकाशै । पारख पाद मिटै यम आसै ॥
गुरु शरणा परमातम दरशै । त्रय गुण छोडि सतपद परशै ॥
गुरु मुख होय परम पद पावै । चौरासीमें बहुरि न आवै ॥
सत्य कबीर बतायो भेवा । धर्मदास करु गुरुकी सेवा ॥

साखी–गुरुकी सेवा जो करै, हृदया ध्यान लगाय ।
काल जाल सो छूटिके, सत्य धामको जाय ॥

गुरुपद सेवे बिरला कोई । जापर कृपा साहबकी होई ॥
गुरु सेवा जो करै सुभागा । माया मोह सकल भ्रम भागा ॥
नौ नाथ चौरासी सिद्धा । गुरु चरणों सेवे बहु विद्धा ॥
गुरुके सेवे कटे दुख पापा । जनम जनमको मिटे संतापा ॥
गुरुकी सेवा सदा चित दीजे । जीवन जन्म सुफल करिलीजे ॥

चौविस रूपहरि आपुहि धरिया। गुरु सेवा करि सबही बिरिया ॥
शिव विरंचि गुरुसेवा कीन्हा। नारद दीक्षा ध्रुवको दीन्हा ॥
सकल मुनि गुरुसेवा चाही। गुरुसेवा करि पंथ अवगाही ॥
गुरुसेवे सो चतुर सयाना। गुरुपट तर कोइ और न आना॥
गुरुकी सेवा मुक्ति निज पावे। बहुरि न हंसा भवजल आवे ॥

साखी–गुरुकी सेवा कीजिये, तजि मन का अभिमान ॥
गुरु विनु दोसर को नहीं, धर्मनि सतगुरु जान ॥

योग दान जप तीर्थ नहाना। गुरु सेवा विनु निष्फल जाना ॥
गुरु सेवा विनु बहु पछतावे। फिरि फिरि यमके द्वारे जावे ॥
गुरुसेवा बिनु कौन जो तारे। भव सागरसे बाहर डारे ॥
गुरुसेवा विनु जड का करि है। काकी नाव बैठिकर तरि है ॥
गुरुसेवा विनु कछू न सरि है। महां अन्ध कूपे महँ परि है ॥
गुरुसेवा विनु घट अँधियारा। कैसे प्रकटे ज्ञान उजियारा ॥
गुरुसेवा विनु सदा जो धावे। गुरु विनु सांच राह नहिं पावे ॥
गुरुसेवा विनु कान फुंकावे। भवँरि भवँरि भवजलमें आवे ॥
गुरुसेवा विनु द्वन्द अँधेरा। गुरुसेवा विनु कालको चेरा ॥
गुरुसेवा विनु प्रेम विहूना। दिन दिन मोह होय भ्रम दूना ॥

साखी–गुरुसेवा विनु ना छुटे, भवजलको सन्ताप।
गुरुसेवा करि गुरु मुख, काटे सबही पाप ॥

गुरुमुख होई परम पद पावे। चौरासीमें बहुरि न आवे ॥
गुरुकी नाव चढे जो प्रानी। खेद उतारे सतगुरु ज्ञानी ॥
गुरुके चरण सदा चित लाना। क्यों भूले तू चतुर सुजाना ॥
गुरु भगता गुरु आतम सोई। वाहीके मन रहे समोई ॥
गुरुमुख ज्ञान ले चेते सोई। भवमें जनम बहुरि न होई ॥
गुरुमुख प्राणी सदाई जीवे। अमर होई ज्ञान रस पीवे ॥

गुरुसीढी चढि ऊपर जाई । सुख सागरमें रहे समाई ॥
गौरी शंकर और गणेशा । उनहू लीना गुरु उपदेशा ॥
गुरुमुख सदा अटल अविनाशी । सुर नर मुनि सबध्यान धरासी ॥
गुरुमुख सब भक्त औ दासा । गुरुमहिमा उनहींसे प्रकासा ॥

साखी-गुरुमुख को सबही मिलै, चारपदारथ सार ।
निगुरा कोतो कुछ नहीं, वहेसोनरकहि धार ॥

गुरु बिन मुक्ति ना पावै भाई । नर्क ऊर्द्ध मुख वासा पाई ॥
गुरुबिनु काहु न पाया ज्ञाना । गुरु बिनु रही यमलोक सिधाना ॥
गुरु बिनु पढे जो बेद पुराना । ताको नाहि मिलै सतज्ञाना ॥
गुरु बिनु जो सो पशू कहावै । मानुष बुधि दुर्लभ होयजावै ॥
गुरु बिनु दान पुण्य जो करई । होय निष्फलसब मतसो कहई ॥
गुरु बिनु भ्रम ना छूटे भाई । कोटि उपाय करे चतुराई ॥
गुरुबिनु होम यज्ञ जो करई । जाय पुण्य पाप सो भरई ॥
भवसागर है अगम अगाहा । गुरु बिनु कैसे पावै थाहा ॥
गुरु बिनु बूझे सकल अचारी । तैतीस कोटि देव सब धारी ॥
गुरु बिनु भरमें लख चौरासी । जनम अनेक नरकके बासी ॥

साखी-गुरुआज्ञाग्रहणकरि, छोंडे मनमुखताकाल ।
गुरु कृपा तब पावई, क्षणमें होय निहाल ॥

गुरुकी कृपा कटै यम फांसी । निलम्बनहोयामिलै अविनाशी ॥
गुरू कृपा शुकदेव हि पइया । चढि विमान बैकुण्ठहि गइया ॥
गुरू कृपा जब नारद पयऊ । मेटि चौरासीसुखी सो भयऊ ॥
गुरुकी कृपा रामपर सोहै । जीवन मुक्ति पाइ जग मोहै ॥
गुरु कृपा बाम देवहि दइया । गर्भ माहि गुरुज्ञानहि पइया ॥
गुरु कृपा ध्रुवजो दरसा । अटल अमान परमपद परसा ॥
गुरु कृपा ते भये उजासी । सनक सनन्दन नारद व्यासी ॥

गुरू कृपा ते जनक विदेही। सो ग्रह माहिं परमपद लेही॥
गुरु कृपा ते जन प्रह्लादा। दैत्य होइ भक्ति तिन साधा॥
गुरू कृपा जो कोई पावै। सकलो दुरमति दूर बहावै॥

साखी–गुरु कृपा ऐसी अहै, सुनो साधु चित देइ।
ताते गुरु सुमिरन करू, रहे कालको लेइ॥

गुरु गुरु जाप करो मन मेरा। काल दूत नहिं आवै नेरा॥
गुरुको ध्यान धरों नर नारी। सहजे सहज तरो संसारी॥
गुरु गुरु सुमिरो मनसे प्यारो। गुरु गुरु कहो कोटि अवतारो॥
गुरु गुरु जाप काज सबसारे। दुर्मति कपट दूर करि तारे॥
गुरु गुरु जाप करो मन धीरा। गुरुके नाम मिटै सब पीरा॥
गुरु गुरु मंत्र हृदय धरीजै। तन मन धन सब अर्पण कीजै॥
गुरुको सुमिरन निशदिन कीजै। जीवन जन्म सफल करि लीजै॥
एक नाम गुरु देत दिखाई। सो निजनाम कदापि नहिं जाई॥
गुरु सुमिरन निज नाम विचारे। आप तरे औरनको तारे॥
संतगुरु शब्द नाम निरधारा। भव सागरसे उतरे पारा॥

साखी–गुरुको सुमिरन कीजिये, निशदिन ध्यान लगाय।
गुरु लक्षण अब कहत हो, सुनहु धीर चितलाय॥

राग द्वेष दोनों से न्यारे। ऐसा गुरू शिष्यको तारे॥
आशा तृष्णा कुबुद्धि जलाई। तन मन वचन सबन सुखदाई॥
निरालम्ब भ्रम रहित उदासी। निर्विकार जानो निर्वासी॥
निरमोही निरबंध निशंका। सावधान निरवान निबंका॥
सार ग्राही औ सरवज्ञी। संतोषी ज्ञानी सतसंगी॥
अयाचक जत निर अभिमानी। पक्षरहित आस्थिर शुद्धबानी॥
निस्तरंग बाही परपंचा। निष्करम निरलिप्त अवंचा॥
बोल अडोल भाखे सो सांची। कोई बात कहै नहिं कांची॥

जोहि विधि कारज जिवका होई । निर्णय वाक्य उचारे सोई ॥
झांई सन्धि कालका फेरा । पारख लाई करे निबेरा ॥

साखी–जाति बडाई आश्रमहि, मान बडाई खोय ।
जो सतगुरुके पल लगे, सांच शिष्य है सोय ॥

गुरुके आगे राखे माथ । करै बिनय दुख मेटो नाथ ॥
अहौं अधीन तुम्हारे दासा । देहू अपने चरनन बासा ॥
यह तन मैं तोहि भेट चढायो । अपनी इच्छा कुछ रखायो ॥
जो चाहो सो तुम अब करो । या भाडको जोहि विधि भरो ॥
भावे धूप छांहमें डारो । भावे बोरो भावै तारो ॥
गुण पौरुष कछु ओ नाहिं मेरो । सब विधि शरण गही गुरु तेरो॥
मैं अब बैठा नाव तुम्हारी । आशा नदी सो करिये पारी ॥
अपना कीजे गहिये बाहीं । धरिये शिरपर हाथ गोसांई ॥
बहु बिधि बिनती गुरुसे करई । मान मोह हृदय नहिं धरई ॥
देखि बिनयगुरु होहिं अनन्दा । तब पावै सिख परमानन्दा ॥

साखी–गुरुके आगे जायके, ऐसी बोले बोल ।
कूर कपट राखे नहीं, अरज करै मन खोल ॥

देखि प्रसन्नता गुरुकी भाई । गुरुते कहिये शीस नवाई ॥
ऋद्धि सिद्धि फलमैं कछुनहिं चाहूँ । जगत कामनाको नहिं लाहूँ ॥
चौरासी में बहु दुख पायो । ताते शरण तुम्हारी आयो ॥
मुक्त होनको मनमें आवे । आवागमन सो जीव डरावे ॥
सत्य भक्तिकी चाह हमारे । ताते पकऱ्यो चरण तिहारे ॥
सत्य ज्ञानते हृदया भीजै । यही दान दाता मोहि दीजै ॥
मैहूँ दास सो लेहू उबारी । हौं मच्छी तुम मिष्ट सुवारी ॥
हौं पतंग तुमहौ डोरा । मैं तो फिरूं तुम्हारे जोरा ॥
होहु दयाल दया अब कीजे । बूडत भवमें बाहँ गहीजे ॥

काल सांधि झांईके जाला। पडिके दुःखित भयो विहाला॥
साखी-दया होय गुरु देवकी, छुटे अविद्या भान।
मिथ्या माया सब मिटे, पावे अविचल ज्ञान॥
सारशब्द गुरूते पावे। जाते जीव काज बनि आवे॥
पूछे गुरूसे सब अरथाई। सारशब्दको निर्णय भाई॥
जाते होय जीवको काजा। पाछे सोइ होय निर्व्यांजा॥
त्रिविधि शब्दको पारख बूझे। सत्य पदारथ तबहीं सूझे॥
सार शब्दको अङ्ग विचारे। मानुष लक्ष भले निरुआरे॥
पशुवत धर्म को रूप लखावे। करि निरुआर सब गुरू बतावे॥
हंस स्वरूपहु लीजे जानी। सबहि बतावे सतगुरु ज्ञानी॥
सांच झूठका निर्णय करे। सत्य होय सो हिरदै धरै॥
पक्का सौदा गुरुसे लेवे। देखि अधीन गुरू सब देवे॥
गुरु सो देवे सब कछु भाई। क्षणमें मेटे काल कलाई॥
सखी-काल जालसे छूटिकै, मोक्ष मिलनकी चाह।
सत्य मिलनकी युक्ति सब, गुरू बतावे राह॥
गुरुसे पूछे ब्रह्मास्वरूपा। गुरुसे पूछे प्रकृति अनूपा॥
गुरुसे पूछे सूक्षम तत्ता। गुरुसे पूछे त्रिगुण सत्ता॥
गुरुसे पूछे महाकारण देही। गुरुसे पूछे तुरिया लेही॥
गुरुसे पूछे पांच तनमात्रा। गुरुसे पूछे पंचको यात्रा॥
गुरुसे पूछे सूक्ष्म कारण। गुरुसे पूछे स्थूल सवारन॥
गुरुसे पूछे ज्ञान अरु कर्मा। दशों इन्द्री सहित स्वधर्मा॥
गुरुसे पूछे त्रिकुटी भाई। चौदह यम सब देई बताई॥
गुरुसे पूछे चतुदर्श स्थाना। चौदह देव तबे मनमाना॥
चौदह पूछि करे प्रवेशा। तबही पावे ब्यालीस वेशा॥
पंचकोश सो. गुरु से जाने। आतम ज्ञान तबही मनमाने॥

साखी--पंचकोशमत प्रकट जग, वेद कहे सत सोइ ।
परख बुद्धि निज दृष्टि बल, गुरू कृपा करे जब होइ ॥

द्वैताद्वैत का करै विचारा । शुद्धाद्वैतका करे उपचारा ॥
विशिष्टाद्वैत भली विधि जानै । पूछत पूछत सबै मन मानै ॥
कर्मोपासना करै विचारा । ज्ञान विज्ञानका पावे सारा ॥
अर्थ धर्म मोक्ष रु कामा । सबका पूछे असली धामा ॥
नवधा भक्ति को रूप पिछाने । योग क्रियाको भली बिधिजाने ॥
राजयोग हठयोग सरूपा । सबही आसन सिद्धि अनूपा ॥
ब्रह्म जीव अरु प्रकृति का भेदा । द्वैतज्ञान का करे अछेदा ॥
नाना मत जग आहि जो भाई । सब का भेद जो गुरुसे पाई ॥
आस्तिकनास्तिकमनअनुहारा । सबही फंदा करे विचारा ॥
पूछि गुरूसे सबही सुधारे । गुरुके पारख काल फन्द टारे ॥

साखी--संसारी पारख बिना, कैसे पावे ठौर ।
विविध युक्ति अनमिल सबे, भोगवहीं औरकेऔर ॥

कालजालकी विकट है चाला । जीव विकल तेहिमध्य बिहाला ॥
परख यथारथ प्रभु प्रकाशू । कठिन महातम कालविनाशू ॥
कालचक्र चक्की कठिनाई । पारख पाये जात बिलाई ॥
पारख बल बहियां भौजेही । सब विधि चीन्हपडा खल तेही ॥
गुरु प्रसाद पारख दृढ पाये । विकट कला यमजाल छुडाये ॥
एक एक पारखे जेहि फांसा । सो संक्षेप करे प्रकाशा ॥
जाते जीव बचे यमफांसा । शरणागत दृढ परख बिलासा ॥
भक्तिभाव प्रेमहि अधिकाई । परख लहत बल कालनशाई ॥
कालकला नहिं पावे ताको । भक्ति भाव गुरु पारख जाको ॥
परम पारखी जीवन मुकता । नाहिं पावे तेहि कालक उकता ॥

साखी--बिनु शरणागति परख पुरु, नाहिं जीवन निस्तार ॥
सरवोपारि गुरु परखहै, लहैं तो होय उबार ॥

गुरु से दीक्षा लीजे भाई । सदा गुरुकी कीजे सेवकाई ॥
दीक्षा लेइ जले जो आडा । सात जनम सो सिरजे पाडा ॥
सतगुरु की जो आज्ञा लोपे । ता ऊपर यम राजा कोपे ॥
सतगुरु की जो अदब न राखे । ताको दोजख शास्तर भाख ॥
सतगुरु की न लाये विश्वासा । ताको काल करत है ग्रासा ॥
गुरुसेती गुमान जनावै । जनम जनम सो यमपुर जावै ॥
गुरुसङ्ग आडी टेढी बोलै । श्वान होई सो घरघर डोलै ॥
गुरुसङ्ग ज्ञान गर्भ दिखावे । कोटि जनम कूकर को पावे ॥
गुरुसे बाद करे नरनारी । कोटि जनम सो नरक मँझारी ॥
गुरुको शब्द मेटि पग धरई । यम किंकर के फन्दे परई ॥

साखी-गुरु सीढीते ऊतरे, शब्द विहूना होय ।
ताकोकाल घसीटि है, राखि सक नहिंकोय ॥

सतगुरु की मरयाद न धरई । लख चौरासी कुण्डमें परई ॥
गुरुको शब्द न सुने अज्ञानी । भवसागर डूबे अभिमानी ॥
गुरुको देखि धरत अभिमाना । व्यास बचन पड नरकानिधाना ॥
गुरु को ज्ञान मेटि मत थापी । तीन लोकमें बडो ते पापी ॥
गुरुको मेटि बखानत आपा । धरती भार मरत तेहि पापा ॥
गुरुसे जो ऊंचा चढि बैठे । सात कुण्ड नरक में पैठे ॥
गुरुसे उलटा बचन सुनावे । सात जनम कोढी को पावे ॥
गुरुको उलट सुनावे बैना । सात जनम अन्धा होय सो नैना ॥
गुगुको छोड देव जो पूजे । बादुर होय दिवस नहिं सूझे ॥
गुरु को छोड अनत जो जावे । उलूक होय सो जन्म गँवावे ॥

साखी-शिवपूजामें बैठिके, गुरुसे करि अभिमान ।
कागभुशुण्ड शिवशापते, पड्यो चौरासीखान ॥

गुरुनिन्दा जाके मुख उपजे । कोटि जनम गदहा हो निपजे ॥

गुरु निन्दा जाके मुख होई । ताको मुख ना देखो कोई ॥
अपने मुख गुरु निन्दा करई । शूकर श्वान जनम सो धरई ॥
गुरु की निन्दा सुने जो काना । सो तो पावे नरक निधाना ॥
गुरुनिन्दा सुने जोश्रवणन सुनयी । अपने हाथ प्राण निज हनयी ॥
गुरु निन्दक नारायण होई । वाको मुख ना देखौ कोई ॥
गुरु निन्दक धरती पग चम्पे । ताके भार धरनि अति कम्पे ॥
गुरु निंदक अवनी पर सोवे । धरती धरत शेष अति रोवे ॥
गुरु निंदक जब ही मुख बोलै । धरती गगन मेरु ग्रह डोलै ॥
गुरु निंदक जो बचन सुनावे । ज्ञानी कान मूँदिके जावे ॥

साखी--गुरु निन्दा छाडो सुजन, गुरु स्तुति मन धारि ।
गुरुको राखो शीस पर, सब विधि करे गुहारि ॥

सतगुरु मिले परम सुखदाई । जनम जनम का दुःख नशाई ॥
सतगुरु मिले तो अगम बतावे । यमकी आंच ताहि नहिं आवे ॥
सुख सम्पति अपनो नहिं प्राणी । समझि देखु तुम निश्चय जानी ॥
तीरथ बरत और सब पूजा । गुरु बिन होवे सबही लूँजा ॥
धारा दोई भल जग माहीं । गृह वैराग बिन और न आहीं ॥
दोऊ गुरुकी कृपासे पावे । गुरुबिनु भेदसु कौन बतावे ॥
करि त्याग सब गुरुको दीजे । पारख पाइ सदा सुख लीजे ॥
गिरही रही भगति अनुसारे । तन मन धन अर्पण करि डारे ॥
दशवां अंश गुरू को दीजै । जीवन जन्म सुफल करिलीजै ॥
सतगुरुके सब आगे धरिये । शीश नाइ गुरु दंडवत करिये ॥

साखी--गुरु सो भेद जो लीजिये, शीश दीजिये दान ।
बहुतक भोंदू पचिमुये, राखि जीव अभिमान ॥

गुरुसे रहे सदा मन जोरी । जैसे नटुवा चढतहै डोरी ॥
पारख तार चढी भय नहिं पावे । छोडे पारख चूर होइ जावे ॥

लोपे नहीं सतगुरुका बाचा। सो सतगुरुका सेवक सांचा ॥
सोइ शिष पावै पारख घाटा। सोइ पावे सत्य सो बाटा ॥
निर्मोही सतगुरु की रीती। सांचा सेवक लावै प्रीती ॥
मिलि पारख सब भय मिटजावै। गुरुमुख शब्द सदालौ लावे ॥
देखि दुशह दुख जीवन केरी। दया करी पारख प्रभु प्रेरी ॥
निज पद जानि दया सो करई। बन्धन जीव छुटावन लहई ॥
केतिक पारख प्रभुके पाये। जरा मरण यम जाल मिटाये ॥
जिन्ह जिव लहे पारख प्रभु केरा। महाजाल यम जीव निवेरा ॥

साखी—गुरु महिमा पूरन भई, सतगुरु किरपा कीन।
संतनकी वाणा बहुत, यामें संग्रह लीन ॥

पाठफल वर्णन।

गुरु महिमा सबते अधिकाई। शिव शिवाप्रति यही दृढाई ॥
व्यास वचन औ वेदे गाया। गुरुसे अधिक नहीं रघुराया ॥
सत्यगुरु कबीरहु परखाये। धर्मदास गुरु महिमा गाये ॥
रामरहस जू पूरण दासा। सबहीं गुरुमहिमा परकाशा ॥
जेते भये जग बुद्धिमति धारा। सब गुरुमहिमा कीन उचारी ॥
सबका सार यामधि पइये। अब याकी महिमा सुनि लइये ॥
तीनों संध्या जो यहि पढयी। छोडि कुमारग सतपथ लहयी ॥
सांची श्रद्धा मनमें लाई। बूझि बूझिके पाठ कराई ॥
बिन बूझे सो धुन्ध अँधेरा। पारि अभिमान खाय जग फेरा ॥
गुरुके लक्षण भलि विधि यांचे। यम फंदाते तबही बांचे ॥

साखी—बूझ विवेक सह जो पढे, गुरुमाहिमा यक बार।
कबीर दीनदयाल तेही, तुरत उतारे पार ॥

योग यज्ञ अरु जप तप अहई। पढि गुरुमहिमा सब फललहई ॥
विष्णु सहस्र अरु भगवद्गीता। भागवत आदिक आठ पुनीता ॥

एकबार गुरु महिमा पढयी । सो फल सबही क्षणमें लहयी ॥
काशी क्षेत्र बहुविधि दाने । गया प्रयाग पुष्कर असनाने ॥
सो फल सबही यामधि पावे । श्रद्धासहित जो पाठ करावे ॥
निर्मल होय पाठ जो करई । सो नर सहजे भवनिधि तरई ॥
वेद पुराण रु शास्त्र विलोई । जाहि निकस्यो गुरुमहिमा सोई ॥
गुरु माहिमा सारको सारी । गिरिजाप्रति भाष्यो त्रिपुरारी ॥
गुरु महिमा गुरु गमसे गाया । चढि सत पारख नाद बजाया ॥
सत्तकबीर जब दाया कीनी । गुरुमाहिमा तब वर्णन कीनी ॥

साखी-गुरुमहिमा गुरु गम अहै, जाने संत सुजान ।
पढे विचारे मनन करे, पावे मोक्ष निदान ॥

गुरुमहिमा शतक यहि नामा । पाठ किये पूरे सब कामा ॥
सौ चौपाई यामहि आही । बीस दोहरा साख सदाही ॥
दो चौपाई दुइ सो साखी । फल वर्णन महँ पुनि राखी ॥
पांच चौपाई यक सो दोहा । संख्या तिथि वर्णन महँ जोहा ॥
या विधि पूर्ण भयो या ग्रन्था । जाते जिव पावे सत पंथा ॥
याको पाठ करे जो कोई । उभय आनन्द फल पावे सोई ॥
गुरुसंतन पाउँ तिन शिर नाऊँ । मातु पिताके बलिबलि जाऊँ ॥
सत्य कबीर सत्य गुरु राई । जिनकी कृपा परख पद पाई ॥
धर्मदास गुरु जग आये । करि उपदेश जग जीव चिताये ॥
राम रहस पूरन गरु राई । सबको वन्दों शीश नवाई ॥

साखी-नभ रसनिधि चन्द्र कह, पौष पूर्णिमा जान ।
विक्रम सम्बत जानिये, रविवासर दिन मान ॥

इति श्रीगुरुमहिमा शतक कबीरपंथी भारत पथिक स्वामी
जुगलानन्द द्वारा संकलित लिखित और सम्पादित
कबीरदर्शनलाइब्रेरीसे समाप्त ।

अथ गुरु उपदेशमाहिमा योग प्रारम्भः।

दोहा-गुरु संत वन्दन करूं, ऐहै सुखको पूर।
गुरुमहिमा बरनन करूँ, शिर धारि पदरजधूर॥
संत सबै शिर ऊपरे, निस्पृही निज नाम।
सबके मस्तक मुक्ति गुरु, पूरवे मनके काम॥

चौपाई।

परब्रह्मको आदि मनाऊँ। तिनकी कृपा गुरुचरनन पाऊँ॥
गुरु सोई सब सिरजन हारा। गुरुकी कृपा होय भवपारा॥
गुरु बिन होम यज्ञ नहिं कीजे। गुरुकी आज्ञा माहि रहीजे॥
गुरु संतनके चरण मनायो। ताते बुद्धि उत्तम मैं पायो॥
सब इष्टनमें सतगुरु सारा। सो सुमिरावे पुरुष हमारा॥
शरण होय शिष आवै कोई। सहज पदारथ पावै सोई॥
गुरु सुरतरु सुरधेनु समाना। आवै चरण मुक्ति परवाना॥
मन बांछित फल पावै सोई। प्रीति सहित जो सुमिरे कोई॥
तन मन धन अर्पि गुरु सेवै। होय गलतान उपदेशहि लेवै॥
गुरु बिनु पदारथ और न जानै। आज्ञा मेटि और नहिं मानै॥
सतगुरुकी गति हिरदय धारै। और सकल बकवाद निवारै॥
गुरुके सन्मुख बचन न कहै। सो शिष रहनि गहनि सुख लहै॥
गुरुसे वैर करै शिष जोई। भजन नाशअरु बहुत बिगोई॥
पीढि सहित नरकमें परिहै। गुरुआज्ञा शिषलोपन करिहै॥
चेलो अथवा उपासक होई। गुरु सम्मुख ले झूठ संजोई॥
निश्चय नरक परै शिष सोई। वेद पुराण भनत सब कोई॥
सनमुख गुरुकी आज्ञा धारै। अरु पाछे तै सकल निवारै॥
सो शिष घोर नरकमें परिहै। रुधिर राध पीवै नहिं तरिहै॥
मुखपर बचन करै परमाना। घर पर जाय करै विज्ञाना॥

जहँ जावै तहँ निंदा करई । सो शिष क्रोध अगिन ते जरई ॥
ऐसे शिषको ठौर जो नाहीं । गुरु रुख लोपतहै मनमाहीं ॥
वेद पुराण कहै सब साखी । साखी शब्द सबै यों भाखी ॥
मानुष जन्म पायकर खोवै । सतगुरु विमुखा युगयुग रोवै ॥
ताते सतगुरु शरना लीजै । कपट भाव सब दूर करीजै ॥
योग यज्ञ तप दान करावै । गुरू विमुख फल कबहु न पावै ॥
गुरूही जपतप तीरथ कहिये । गुरूहीं साच अरू मिथ्यां पहिये ॥
सतगुरु बिना मुक्ति नहिं कोई । ऊंच नीच भावै जो होई ॥
आतम ब्रह्म गुरू तैं मेरा । ताके शरणों आयो मैं चेरा ॥
चार युगन जे संतहि भयऊ । ब्रह्मरूप होय पारहि गयऊ ॥
सो जानहु गुरू संग प्रभाऊ । लोलहु वेद न आन पराऊ ॥

दोहा--गुरुआज्ञा जिनाजिन लही, सऱ्यो सकल विधि काज ।
नरकरूप जग दूर धऱ्यो, श्री गुरू महराज ॥

उपदेश प्राप्ति लक्षण--चौपाई ।

दोउ कर जोरि गुरूके आगे । करि बहु विन्ती चरनन लागे ॥
अति शीतल बोलै सब बैना । मेटै सकल कपटके वैना ॥
हे गुरु तुम हो दीनदयाला । मैं हूँ दीन करो प्रतिपाला ॥
तुम बन्दी छोर अतिहि अनाथा । भवजल बूडत पकडो हाथा ॥
दै उपदेश गुरु मंत्र सुनाओ । जनम मरन भवदुःख छुडाओ ॥
यों अधीन होय शिष जबहीं । शिषपर कृपा करै गुरु तबहीं ॥
गुरुसे शिष जब दीक्षा मांगै । मन क्रम वचन धरै धन आगै ॥
ऐसी प्रीति देखै गुरु जबही । गुप्त मंत्र सुनावै तबही ॥
अरू भक्तिमुक्तिको पथ बतावै । बुरो होय को पथ छुडावै ॥
ऐसे शिष उपदेसी पावै । होय दिव्य दृष्टि पुरुषपै जावै ॥

गुरुसेवा माहात्म्य ।

गंगा यमुना बद्रीश समेते । जगन्नाथादि धाम हैं तेते ॥
सेवे फल प्रात होय न जेतो । गुरुसेवा में पावै फल तेतो ॥
गुरु महातम को वार न पारा । वरणेशिवसनकादिक अवतारा॥
गुरु महिमा मोपै वरणि न जाई । महिमाअनंत मम मतिलघुताई॥

गुरु भावना ।

गुरुको पुरुष ब्रह्मकर जाने । और भाव कबहूँ नहिं आने ॥
काम क्रोध रहितगुरु मेरा । पाप पुण्यका करत निवेरा ॥
काम क्रोध लोभ समाना । तो शिष जानहु तीन समाना ॥
यही दृष्टि से गुरुको सेवै । तब तनमन धन गुरु सबकोदेवै॥
तनकरि टहल करै गुरु सेवा । सो शिष लहै मुक्तिको मेवा ॥
बचन उचारे पुहुप सम बानी । द्रव्य लगावै गुरुहित जानी ॥
ऊँच नीच सबही सुनि लीजे । कबीर बचन प्रमाण करीजे ॥
मेरे और कछु नाहिं चहिये । गुरू भावना गुरु हिय लहिये ॥

दोहा–सात द्वीप नौ खण्डमें, औ इकीस ब्रह्मंड ।
सतगुरु विना न बाचिहौ, कालबडो परचंड ॥

यहीभाव भक्तिका लक्षणकहिये । गुरुके भावबिन भवजलबहिये ॥
जिन बातनसे गुरु दुख पावे । तिन बातनको दूर बहावे ॥
वेद पुराण सबै मिलि गावै । नेमी धर्मी चोरासि न जावै ॥
अष्ट अङ्गसो दंड परनामा । संध्या प्रात करै निषकामा ॥
गुरुको शिष ऐसे नहिं मानै । सो त्रयताप जरत चारो खानै ॥
योगी यती तपी आश्रमा । बिनु गुरु कोउ न जानै मरमा ॥

गुरुचरणोदक माहात्म्य ।

कोटिक तीरथ सब करआवै । गुरु चरणाफल तुरतहि पावै ॥

कदाचित चरणामृत पावै । चौरासी गत सतलोक सिधावै ॥
कोटिक जप तप करै करावै । वेद पुराण सबै मिलि गावै ॥
गुरुपद रज मस्तक पर देवै । सो फल तत्कालहि लेवै ॥

दोहा—गुरु चरणोदक अनन्त फल, हमते कही न जाय ।
मनकी पुरवै कामना, जो लेवे चित्त लगाय ॥
सतगुरु समानको हितू, अन्तर करो विचार ।
कागा सो हंसा करै, दरसावै ततसार ॥
गुरु महिमा ग्रंथ यह, कहै कबीर समझाय ।
पाप ताप सबही हरै, अमरलोक लै जाय ॥

इति श्रीगुरु उपदेश महिमा योग कबीर पंथी भारतपथिक
स्वामी श्रीजुगलानन्दद्वारा संग्रहीत संशोधित और
सम्पादित कबीर दर्शन लाइब्रेरीसे समाप्त ।

गुरुमहिमा प्रारम्भः ।

प्रथम खंड ।

चौपाई ।

गुरुकी शरणा लीजे भाई । जाते जीव नरक नहिं जाई ॥
गुरु मुख होै परम पद पावे । चौरासीमें बहुरि न आवे ॥
गुरु पद सेवे विरला कोई । जापर कृपा साहिबकी होई ॥
गुरु विनु मुक्ति न पावै भाई । नरक उर्द्ध मुख बासा पाई ॥
गुरुकी कृपा कटे यम फाँसी । विलम्ब न होय मिले अविनाशी ॥
गुरु विनु काहु न पाया ज्ञाना । ज्यों थोथा भुस छडे किशाना ॥
गुरु महिमा शुक देव जो पाई । चढि विमान वैकुंठे जाई ॥
गुरु विनु पढै जो वेद पुराना । ताको नाहिं मिलै भगवाना ॥
गुरु सेवा जो करे सुभागा । माया मोह सकल भ्रम त्यागा ॥
गुरुकी नाव चढै जो प्राणी । खेद उतारे सतगुरु ज्ञानी ॥
तीरथ वरत और सब पूजा । गुरु बिन दाता और न दूजा ॥
नौ नाथ चौरासी सिद्धा । गुरुके चरण सेवे गोविन्दा ॥
गुरु विनु प्रेत जनम सब पावै । वर्ष सहस्र गर्भ मांहि रहावै ॥
गुरु विनु दान पुण्य जो करही । मिथ्या होय कबहूँ नहिं फलही ॥
गुरु विनु भरम न छूटे भाई । कोटि उपाय करै चतुराई ॥
गुरु विनु होम यज्ञ जो साधे । औरो मन दश पातक बाधे ॥
सतगुरु मिले तो अगम बतावै । यमकी आँच ताहि नहिं आवै ॥
गुरूके मिले कटे दुख पापा । जनम जनमको मिटे संतापा ॥
गुरुके चरण सदा चित दीजै । जीवन जन्म सुफलकर लीजै ॥
गुरुके चरण सदा चित जानो । क्यों भूले तुम चतुर स्थानो ॥
गुरु भगता मम आतम सोई । वाके हिरदे रहों समोई ॥

गुरु मुख ज्ञान ले चेतो भाई । मानुष जन्म बहुरि नहिं पाई ॥
सुख संपति आपन नहिं प्राणी । समझि देखु तुम निश्चय जानी ॥
चौविस गुरु हरि आपहि धरिया । गुरु सेवा हरि आपहि करिया ॥
गुरुकी निंदा सुनै जो काना । ताको निश्चय नरक निदाना ॥
दशवाँ अंश गुरूको दीजै । जीवन जन्म सुफल कर लीजै ॥
गुरु मुख प्राणी काहे न हूजै । हृदय नाम सदा रस पीजै ॥
गुरु सीढी चढि ऊपर जाई । सुखसागरमें रहे समाई ॥
अपने मुख निंदा जो करई । शूकर श्वान जन्म सो धरई ॥
निगुरु करै करै मुक्ति आशा । कैसे पावै मुक्ति निवासा ॥
औरो सुकृत देह जो पावे । सतगुरु बिन मुक्ती नहिं आवे ॥
गौरी शंकर और गणेशा । सबही लीन्हा गुरु उपदेशा ॥
शिव विरंचिं गुरुसेवा कीन्हा । नारद दीक्षा ध्रुवको दीन्हा ॥
सतगुरु मिले परम सुख दायी । जनम जन्मका दुःख नसायी ॥
जबगुरु कियाअटल अविनाशी । सुर नर मुनि सब सेवक रासी ॥
भवजल नदिया अगम अपारा । गुरु विनु कैसे उतरे पारा ॥
गुरु विनु आतम कैसे जाने । सुख सागर कैसे पहिचाने ॥
भक्ति पदारथ कैसे पावे । गुरु विनु कौन जो राह बतावे ॥
गुरुमुख नाम देव रैदासा । गुरु महिमा उनहूँ परकासा ॥
तैतिस कोट देव त्रिपुरारी । गुरुविनु भूले सकल अचारी ॥
गुरुविनु भरमें लख चौरासी । जनम अनेक नरकके बासी ॥
गुरुविनु पशू जनम सो पावै । फिर २ गर्भ बासमें आवै ॥
गुरु विमुख सोई दुख पावे । जनम २ सोई डहकावे ॥
गुरु सेवै जो चतुर स्थाना । गुरु पटतर कोई और न आना ॥
गुरुकी सेवा मुक्ति निज पावे । बहुरि न हंसा भवजल आवे ॥
भवजल छुटन यही उपाई । गुरु की सेवा करो सब धाई ॥

साखी–सतगुरु दीन दयाल है, देवे भक्ति मुकाम ।
मनसा बाचा कर्मना, सुमिरो सतगुरु नाम ॥
सत्य शब्द के पटतरे, देवेको कछु नाहिं ।
कहले गुरु संतोषिये, हवस रही मन माहिं ॥
अति ठण्डा गहरा घना, बुद्धिवन्त मतिधीर ।
सो धोखा विरचे नहीं, सतगुरु मिलहि कबीर ॥

इति श्री प्रथमखण्ड गुरु महिमा समाप्त ।

अथ गुरुदेवकी महिमा प्रारंभः

द्वितीय खण्ड ।

गुरुदेवकी महिमा बरणों । जे गुरु देव तुम्हारी शरणों ॥
गावतजे गुणपार न पावे । ब्रह्मा शंकर शेष गुणगावे ॥
प्रथमहीं गुण ऐसा कीन्हा । तारक मंत्र रामको दीन्हा ॥
माता तिलक दिया सरूपा । जाको बन्दे राजा औ भूपा ॥
ज्ञानगुरू उपदेश बताया । दया धर्मकी राह चिन्हाया ॥
जीव दया घटहीमें होई । जीव दया ब्रह्म है सोई ॥
गुरु से आधीन चेला बोले । खरा शब्द उर अन्तर खोले ॥
खारा मिश्री बचने खमैं । गुरुके चरणों चेला रमैं ॥
भीतर हिरदे गुरुसों भले । ताके पीछे रामहिं मिले ॥
गुरु रीझेसो कीजे कामा । ताके पाछे रामहिं रामा ॥
शिषसरस्वतीगुरु यमुना अङ्गा । राम मिल सब सरिता गङ्गा ॥
चेला गुरूमें गुरुमें राम । भक्ति महातम न्यारा नाम ॥
गुरु आज्ञा निरबाहें नेम । तब पावे सरबज्ञी प्रेम ॥
सरबज्ञी राम सकल घट सारा । है सबही में सब सों न्यारा ॥
ऐसी ज्ञाने 'मनमें रहै । खोजे बूझे तासो कहै ॥

गुरुकी महिमा संक्षेप भनी । गुरुकी महिमा अनंत घनी ॥
औतार धरी हरि गुरुकरे । गुरु किये तब नारद तरे ॥
साख पुरातम ऐसी सुनी । बात हमारी गुरुसों बनी ॥
कीडी जैसा मैं हौं दासा । पडा रहा गुरु चरणों पासा ॥
गुरु चरणों राखों विश्वासा । गुरुहि पुरावै मनकी आसा ॥

साखी–गुरु गोविन्द अरु शिष मिलि, कीन्हा भक्ति विवेक ।
तिरबेनी धारा बही, आगे गङ्गा एक ॥
गुरुकी महिमा अनंत है, मोसो कही न जाय ।
तन मन गुरुको सौंपिकै, चरणों रहों समाय ॥

द्वितीय खण्डगुरु महिमा समाप्त ।

अथ गुरुमहिमा प्रारंभः ।

तृतीयखण्ड ।

गुरु सतपद भजु अमृतबानी । गुरु बिनु नहीं रे प्राणी ॥
गुरु है आदि अन्तके ज्ञाता । गुरु हैं मुक्तिपदके दाता ॥
गुरु गङ्गा काशिहि स्थाना । चारवेद गुरुगमसे जाना ॥
अरसठ तीरथ भ्रमि २ आवे । सो फल गुरुके चरणों पावे ॥
गुरुको तजै भजै जो आना । ता पशु याको फोकट ज्ञाना ॥
गुरु पारस परसे जो कोई । लोहाते जिव कञ्चन होई ॥
शुक गुरु किये जनक वैदेही । वो भै गुरुके परम सनेही ॥
नारद गुरू प्रहलाद पठाये । भक्तिहेतु जिन दर्शन पाये ॥
कागभुशुंडि शंभु गुरु कीन्हा । अगम निगम सबही कहिदीन्हा ॥
ब्रह्मा गुरू अग्निको कियेऊ । होम यज्ञ जिन यज्ञ दियेऊ ॥
वशिष्ठमुनि गुरू किये रघुनाथा । पाये दरशन भये सनाथा ॥
कृष्ण गये दुर्वासा शरणा । पाये भक्ति जब तारन तरना ॥

नारद उपदेश धिमर से पाये। चौरासी से तुरत बचाये ॥
गुरु कह सोई है सांचा। बिनु परचे सेवक है कांचा ॥
गुरु सामरथ सबके पारा। गहे शरण उतरे भवपारा ॥
कहैं कबीर गुरु आप अकेला। दशो औतार गुरूका चेला ॥

साखी-राम कृष्णसों को बडा, तिनहू तो गुरु कीन्ह।
तीन लोकके वे धनी; सो गुरु आगे अधीन ॥
हरिसेवा युगचार है, गुरु सेवा पल एक।
तासु पटतर ना तुले, संतन किया विवेक ॥

अथ प्रचलित गुरुमहिमा कबीर दर्शन लाइब्रेरीके संस्थापक कबीरपंथी भारतपथिक स्वामी श्रीयुगलानन्दद्वारा संग्रहीत संशोधित और सम्पादित।

इति श्रीतृतीय खण्ड गुरुमहिमा समाप्त।

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
"लक्ष्मीवेंकटेश्वर" स्टीम् प्रेस,
कल्याण-मुंबई.

खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम् प्रेस,
खेतवाडी-मुंबई.

नाम.	की. रु. आ.
कथा। कबीर साहिबका इक्कीसों युगोंमें प्रकट होकर अधिकारी लोगोंको उपदेश देने और उन युगोंके आश्चर्यमय स्वरूपका वर्णन) और सर्वज्ञसागरमें सृष्टि उत्पत्तिका वर्णन है । पृ० २३४ से ३३८ तक.	१-४
नं० ४ कबीरसागर-(चतुर्थखण्ड बोधसागर) प्रथमभाग-ज्ञानप्रकाश अमरसिंहबोध, और वीरसिंहबोध (कबीर साहिबका युगयुगमें पृथ्वीपर प्रकट होकर अधिकारी लोगोंको बोध देकर मोक्ष प्राप्त करनेकी कथा) पृ० ३९४ से ५११ तक.	१-०
नं० ५ कबीरसागर (चतुर्थखण्डान्तर्गत-बोधसागर) द्वितीयभाग-भोपालबोध, जगजीवनबोध, गरुड बोध, हनुमानबोध और लक्षणबोध संयुक्त पृ० ५१८ से ६७१ तक	१-४
नं० ६ बोधसागर-महंमदबोध, काफिरबोध, सुलतानबोध, पृ० ६७८ से ७९९ तक	१-०

पुस्तकें मिलनेका ठिकाना--

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,

" लक्ष्मीवेंकटेश्वर " छापाखाना,

कल्याण--मुंबई.